YUVA RASHIMI

1977 G. K. U.

सामाजिक घोषणा
पर
युवा हस्ताक्षर

वर्ष—३ | अंक—७ | अगस्त, १९७७

स्वाधीनता दिवस अंक

कान्त
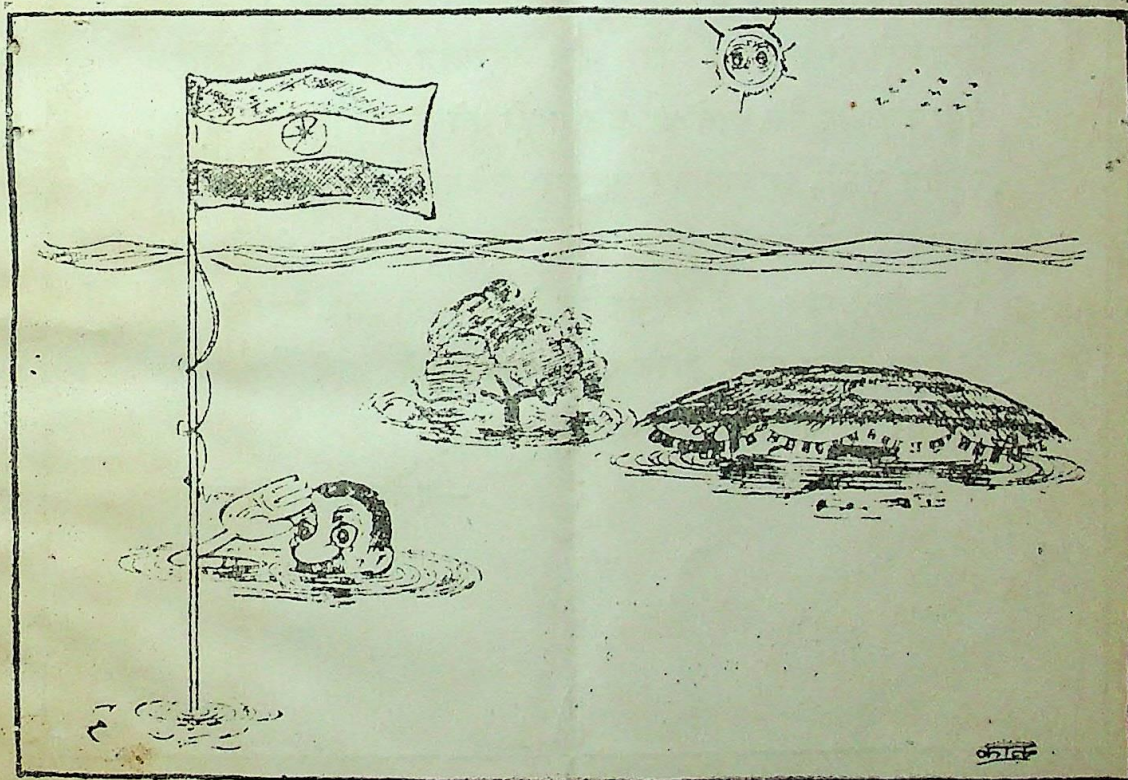
आजादी तो है मगर.........

पत्र और पत्रकार

एक समय था, इस देश में साधारण आदमी सर्वसाधारण के हितार्थ एवं एक ऊँचाभाव लेकर पत्र निकलता था, और उस पत्र को जीवन क्षेत्र में स्थान मिल जाया करता था। आज वैसा नहीं हो सकता। आपके पास जबरदस्त विचार हों, और पैसा हो और पैसे वाले का बल न हो, तो आपके विचार आगे न फैल सकेंगे, आपका पत्र न चल सकेगा। इस देश में भी समाचार पत्रों का आधार धन हो रहा है। धन ही से वे निकलते हैं, धन ही के आधार पर वे चलते हैं, और बड़ी वेदना के साथ कहना पड़ता है कि उनमें काम करने वाले बहुत से पत्रकार भी धन की ही अभ्यर्थना करते हैं।

—गणेश शंकर विद्यार्थी

सामाजिक घोषणा
पर
युवा हस्ताक्षर

*

वर्ष-३ अंक-७ अगस्त, १९७७

संरक्षक
श्री एस० पी० राणा

*

सम्पादक
अवध बैरागी

*

पत्रिका में उधृत विचार लेखकों के हैं उनसे सम्पादकीय सहमति अनिवार्य नहीं।

*

वार्षिक शुल्क — दस रुपया
एक प्रति— एक रुपया

संपादकीय कार्यालय
डी २/२ पेपर मिल कालोनी
लखनऊ - २२६ ००६

आवरण चित्र 'काक'

विषय-सूची

स्वाधीनता—उपलब्धियों के आइने में

इस वर्ष पन्द्रह अगस्त को हमारी स्वाधीनता उत्कर्ष और उन्नति की मंजिलपर पहुंचनेके क्रममें तीसवें पड़ाव पर पहुंच गई है। यद्यपि की एक राष्ट्रके जीवन में तीस वर्षों का समय बहुत नहीं कहा जा सकता किन्तु यह समय इतना कम भी नहीं है कि मात्र कम का एहसास करके मन को समझा लिया जाए। विचारणीय बात यह भी है कि स्वतंत्र शब्द अपने आपमें इन तीस वर्षों में हमारी स्वाधीनता से जुड़कर कितना सार्थक हो सका है। स्वतंत्र का मतलब है स्व*तम*त्र यानी अपने को अंधकार से छुटकारा दिलाना, जो आजतक सही मायने नहीं हो सका है। गांवों में बसने वाली भारत की बहु संख्यक जनता स्वयं को दुर्भाग्य, बेबसी, और निराशा के गहन अंधकार में महसूस कर रही है। राष्ट्रीय चरित्र का कुछ ऐसा दिवाला निकल रहा है कि बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय की जगह पर स्वान्त: सुखाय और स्वजन हिताय की भावना से देश का अधिकांश प्रबुद्ध वर्ग ग्रसित है। अंग्रेजों और मुगलों की विरासत हमारे संस्कार में इस तरह प्रविष्ट है कि हम बुरा कहकर भी अपने को बुराई से अलग नहीं कर पाते। कोई भी सरकार कानून बनाकर आदमी की भावनाओं पर नियत्रण नहीं रख सकती है। राष्ट्र और राष्ट्रीय चरित्र का महत्व बताने की नहीं, समझने की चीज है। १५ अगस्त १९४७ से पहले जितना लूट-मार शोषण, बलात्कार आदि होते थे, आज आजादी के तीस वर्ष पूरे होने पर भी क्या उनमें कमी आई है। हरिजनों एवं कमजोर वर्ग के लोगों के साथ जोर जबरदस्ती से गहरा असन्तोष व्याप्त है। छुआ छूत जैसी संकीर्ण भावना आज भी आदमी को आदमी से अलग कर रही है। युवकों में फैली बेरोजगारी, उन्हें कुंठित बना रही है। कुंठा आस्था को समाप्त कर देती है, जब देशकी युवाशक्ति की आस्था समाप्त होने लगेगी तो देश और स्वाधीनता का क्या होगा, यह एक गम्भीर प्रश्न है। दुनियाँ में शायद ही कोई ऐसा राष्ट्र होगा जहाँ कि राष्ट्रभाषा को राष्ट्रपुत्र विवादास्पद बनाकर तर्क वितर्क करते रहें। जो अंग्रेजकभी हमारी भावना से न जुड़ सके, उनकी अंग्रेजी आज भी हमें अपने ही घर में अजनवी बना रही है। नारी मुक्ति आन्दोलन के सन्दर्भ में महिला वर्ष और महिला दसक मनाया जा रहा है, सैकड़ों सेमिनार हुये, गोष्ठियाँ हुई, लम्बे, आकर्षक भाषण होते हैं लेकिन उसी अनुपात में दहेज की पकड़ समाज पर मजबूत होती जा रही है। हमारे स्वार्थी समाज में दहेज एक प्रश्न है जिसका अनुकूल उत्तर युवती को विवाह के मंडप में ले जाता हैऔर प्रतिकूल उत्तर या तो आत्महत्या को विवश करता है अथवा वेश्यालय की ओर जाने को। स्पष्ट है कि इस समस्या का समाधान जन चेतना से होगा न कि सरकारो कायदे कानून से।

पिछले तीस वर्षों में हमारी स्वाधीनता कितनी बार डगमगाई है। चीन और पाकिस्तान के बाहरी आक्रमण और मुनाफा खोरों तथा तस्करों का आंतरित षड़यंत्र। उन्नीस महीनों के तथाकथित आपातकाल में स्वाधीनता अपनी सार्थकता से दूर कर दी गई।

स्वाधीनता दिवस का सही और सार्थक अभिनन्दन यही है कि हम इस दिन प्रण करें इन्सान से प्रेम करने का अपनी खुशियां बांटने का। और दूसरों के गममें हिस्सा लेनेका। आंसू और मुस्कान में समन्वय करनें की हमारी आदत स्वाधीनता को मजबूत करेगी।

बंजारा

—ऊषा चौधरी

'अरे मुन्ने तुम्हें टाफी मिली'

'नहीं अंकल जी' बच्चा बोला।

'और मुन्नी तुम्हें'

'अंकल मुझे दो टाफियाँ मिली है, कल तो आप मिले नहीं थे, एक कल की एक आज की' मुन्नी खिल खिलखिला कर हंस पड़ी।

शाम के धुंधलके में जब किशोर आफिस से घर की ओर लौटता तो बच्चे उसे घेर लेते। बच्चों की किलकारियों में तारों की मुस्कान घोलकर वह भावविभोर हो उठता और उसकी सारी थकान समाप्त हो जाती। कभी कभी वह अपने मित्रों से कहता 'मैं बच्चों के बीच कुछ देर बैठकर ऐसा महसूस करता हूं कि मैंने सादे कागज पर वेद की ढेर सारी ऋचायें लिखी हैं। या फिर सोंचता हूं कि अच्छे कागज पर कौन सी अच्छी बात लिखूं।'

किशोर अनन्त जिज्ञासा लेकर दुनियां को जानने समझने के लिये किशोर वयमें ही निकल पड़ा है। वह खुद नहीं जानता कि उसकी जिज्ञासा किस हदतक समाधान पायेगी। उसने जीवन और जगत को काफी कुछ देखा है, लेकिन वह स्वयं को एक अजनवी ही कहता है महसूस भी करता है। जब उसने होश संभाला तो सितारों से बातें करना उसे अच्छा लगता था, फिर वह सागर की लहरियों में कुछ खोजने लगा, एक अर्से तक वह इन्हीं विचारों में खोया रहा कि बाग में फूल किसके लिए मुस्काते हैं। कोकिल के रुदन और गायन के शब्दों के अन्तर को कैसे समझा जा सकता है इन बातों को, सवालों को कहां तक वह समझ पाया है, पूछने पर भी वह धीरे से इस बात को नकार जाता है। बंजारगी उसे पसंद है। ऐसा वह कहता है। कभी किसी ने उसे उदास नहींदेखा। वह उदासी को मौत की सहचरी मानता है। लीक से हटकर कुछ कहना सुनना उसे पसंद है परिचय के संदर्भ में वह कहता है कि आदमी का सबसे बड़ा सौभाग्य यही है कि वह आदमी है, आदमी बने रहने के लिए उसे बहुत कुछ करते रहने की जरूरत होती है, आदमी होने, आदमी दिखने, और आदमी सा आचरण करने में बड़ा फर्क है।

किशोर एक अजीब आदमी है और उसे शीघ्रता में समझ पाना मुश्किल सा है। संस्मरणों से भरे हुये उसके जीवन के बारे में एक अध्याय से कुछ ज्यादा स्पष्ट नहीं होता। एकबार अपनी बहनोंके आग्रह पर उसने एक संस्मरण सुनाया था। बात उसी की जुबानी यों है 'जब सागर के किनारे पानी बरसता हुआ देखता हूं तो मेघ की बेवसी पर तरस आती है और सागर की अहमन्यता पर क्रोध। अपने लिये जिन्दगी जीने की बात जब भी मनमें आयी है मेघ की साक्षी में मुझे सागर याद आया है। किसी के काम आने की बात मेरे खयालों में वैसे ही बसी है जैसे फूल में सुगंध, इसीलिए सागर के तट पर जन्म लेने के बावजूद भी मुझे निर्झर के पास बैठना भाया है।

ऐसाही कुछ हुआ था उस दिन। जब मित्रों के साथ गौहाटी की ओर सुदूर हिमालय की गोद में जाने का निमंत्रण मुझे मिला तो मैंने इसे सहर्ष स्वीकार किया और थोड़ी देर बाद मैं हुगली के किनारे किनारे तेजी से भागती हुई बस में था। कुछ नजारे इतने लुभावने थे कि उस बस में मेरा वस चलता तो जी भरकर नजारोंको देखता, लेकिन ऐसा न हो सका पूरी रात वस चलती रही सवेरा हुआ तो मेरे सामने ब्रह्मपुत्र का विशाल परिवेश था। चट्टानों से टकराकर बहने वाली धारासे सरगम का स्वर निकल रहा था। अपने पूरे परिवेश में विभक्त होकर बहने वाली धाराओं के वीच तरबूज के खेत लहलहा रहे थे। लगभग दस बजे साखू की छाँव में बस रुकी। मैंने अर्से बाद खूब तैर कर स्नान किया, फिर पूजन। एकादशी का व्रत था मेरा, इसीलिए फलाहार की इच्छा हुई। एक नाव पर बैठकर धाराके उस पार गया। देखा तरबूज के खेत में ताड़ के पत्तों की चटाई पर बैठी एक युवती धागों से जाल बुन रही थी। मैंने उसके पास जाकर अपनी आदत के अनुसार कहा 'छोटी दीदी, मुझेएक तरबूज चाहिए' उसने मुझे गौर से देखा। कुछ क्षण देखती रही फिर बोली 'तुम्हें तरबूज चाहिये भाई, अभी लाती हूं' बड़ी फुर्ती से

वह दौड़कर खेत में चली गई और कुछ ही क्षणों में एक तरबूज लेकर मेरे सामने उपस्थित हुई । मैंने उसके हाथ से तरबूज ले लिया और उसकी दायीं हथेली पर दो रुपये रख दिये । रुपये देखकर वह चौंक पड़ी । फिर गम्भीर हो गई । कुछ क्षणों की चुप्पी के बाद उसने कहा 'भैया तुम कहां के रहने वाले हो !'

'उड़ीसा का'

'क्या तुम्हारे इलाके में भाईबहन के बीच ऐसी दूकानदारी होती है ?'

उसके इस प्रश्न से मैं निरुत्तर हो गया तभी उसने अपनी बात पूरी की । 'तुमने मुझे दीदीकहा, मैंने तुम्हें अपना भाई माना, तरबूज मेरे अपने खेत की है । यानी कि तुम्हारे खेत की, इसमें पैसे काक्या सवाल ।'

मैं उसकी हथेलीपर रुपये रख चुका था इस लिए वापस लेने का कोई सवाल ही नहीं था । मैंने कहा 'दीदी मुझसे भूल हुई मैं ऐसा मानता हूं कि गंगा नहाने और देवता पूजने का कोई मुहूर्त नहीं होता । उसी तरह बहिन भाई को आशीष देना चाहे तो वर्ष के सभी दिन रक्षा बन्धन के होते है । तुम इस कलाई पर रक्षा कवच बाँध दो जिससे वियावान में भी निर्भय होकर विचर सकूं ।' उसने अपनी बड़ी - बड़ी नीली आंखों से मेरी ओर देखा, फिर जाल से धागा काटकर मेरी कलाई पर बांध दी मैंने नौ रुपये और उसकी हथेली पर रख दिये, वह खिलखिला कर हँस पड़ी । एक अबोध बच्ची-सी निश्चल हँसी । लौटते समय उसने कहा 'फिर कब आओगे ।' 'शायद कभी लेकिन नहीं जानता कब' मैंने कहा और चला आया । मैं फिर उस बहिन से न मिल सका और आज भी उसकी निश्छल हँसी को बच्चों की हँसी में खोजने की कोशिश करता रहता हूं ।

यह कोई कहानी नहीं किशोर की अनुभूतियाँ हैं । ——

पृष्ठ २४ का शेष

के समक्ष पाया ।

'कब आए ।' डैडी की आवाज फूटी ।

'जी करीब दो बजे ।' मैंने जवाब दिया ।

'ठीक है । मेरे साथ आओ ।' आदेश दे वे अपने कमरे की ओर बढ़े और पीछे मैं था । अलमारी से उन्होंने एक लिफाफा निकाला और मुझे देकर बोले—'इनको देख लो । इनमें कुछ लडकियों के फोटो हैं । ये सभी ऊंचे घरानों के हैं । अगले महीने, तुम्हारी शादी करने का मैंने फैसला कर लिया है ।'

मैं कांप उठा । लिफाफा नीचे गिर चुका था । मैंने कहा—'डैडी, मैंने दिल्ली में एक लड़की देखी है । मैंने उससे शादी का वायदा किया है ।'

'देव, मुझे श्याम से सब मालूम हो चुका है । वह मेरे घर की बहू नहीं बन सकती । हम ब्राह्मण हैं और वह कायस्थ । उस पर भी एक साधारण शिक्षिका ।' डैडी ने तीखे शब्दों में कहा ।

'डैडी, दुनियां बहुत आगे बढ़ चुकी है । जाति-पाँति की दीवार टूट चुकी है । आप ही तो भाषण में कहा करते थे कि जाति-पांति की दीवार हमारे समाज को रसातल की ओर ले जा रही है ।' मैंने तड़पते हुये कहा ।

'नहीं । तुम्हारे ऊपर मेरा अधिकार है । तुम्हारा भला बुरा सोचना मेरा कर्तव्य है । मैं जो चाहूंगा, करूंगा । इस मामले में तुम टांग मत अड़ाओ ।' डैडी बूढ़ आवाज में बोले मैं चुपचाप वहाँ से हट गया था ।

और आज·········

घोर अंधकार में पड़ा हूं । सुनीता को पत्र दे दिया है । एक पत्र डैडी को भी लिख रहा हूं । टेबुल पर एक शीशी रक्खी हुई है, जो मेरी सारी समस्याओं का समाधान है ।

अतीत और वर्तमान के बीच

—मोहम्मद इब्राहीम

कालबेल की आवाज सुनकर मैं चौंकी इस वक्त कौन ? शायद नरेश होंगे। सोफे से उठकर अपनी साड़ी की सलवटें ठीक की। और धीमे से दरवाजा खोल दी।

सामने नरेश न होकर भैया थे। ओह ! राजीव भैया। मैं उन्हें देखकर पुलकित हो उठी, पर दौड़कर लिपटने का साहस अपने में जुटा न सकी। वैसे बचपन में प्यार से उनके सीने से चिपक जाती थी। पर अब यह नादानी होगी।

भैया को एक पल देखकर, मैं ने पीछे देखा पर वहा घुप्प अँधेरा के अलावा कुछ न था।

पल भर के लिए विस्मित हुई। पर तत्काल सम्हलकर भैया के आने के लिए मार्ग छोड़ दी। वे उदास कदमों से ड्राइंग रूम में आये।

सूटकेस को सोफे में फेंक कर, वे वहीं पसर गये आस-पास का मुआयना करने के बाद बोले, "नरेश नहीं है क्या ?"

"नहीं बिजनेस के सिलसिले में कही बाहर गये हैं।" मैं भैया के चेहरे को परखते हुए बोली।

"ओह !" एक लम्बा सांस लेकर उन्होंने आँखे बन्द करलीं।

मैं भैया को निहारने लगी वे असमय ही बुड्ढ़े हो चले हैं। अब तो आँखों के नीचे काली-काली झाईयां स्पष्ट रूप से उभर रही हैं। लगता है, उनके अतीत और वर्तमान की बीच की दूरी को किसी ने नोच लिया है।

"आप अकेले आये हैं भैया ?"

"हाँ !"

"माधवी भाभी कहाँ है ? "

मेरे इस प्रश्न पर वे चौंके मुझे पल भर निहारने लगे।

"भाभी क्यों नहीं आई ?" मैंने प्रश्न करने का तरीका नये स्टाइल से नियोजित कर ली।

"माधवी अब कभी नहीं आयेगी।"

उनके उत्तर से मैं चौंकी। वैसे भी यह मेरे प्रश्न का कोई सहीं उत्तर न था।

"क्या भाभी के साथ लड़ाई हुई है भैया ?" मैंने हँसी के स्वर में कहा।

"नहीं हम दोनों ने डाइवोर्सले लिया है।"

इस बार मुझे आश्चर्य हुआ। यूं लगा, मानो इस आधुनिक युग में संबंधो का कोई महत्व नहीं। पर तत्काल नार्मल होकर बोली, "कोई कारण तो रहा होगा भैया ?"

"मात्र इतना कारण, कि मैंने शोलों को पकड़ने की बेवकूफी की।" भैया काफी गंभीर हो गये थे। और वातावरण में था, सिर्फ बाहर की ठंडी हवाओं का सांय-सांय स्वर।

"खाना निकालूं भैया !" मैं अपने दायित्व का निर्वाह करती हुई बोली।

'नहीं, उन्होंने एक बदरंग सा उत्तर हमें थमा दिया। मैं उस बदरंग से उत्तर को कई बार देखती रही। फिर धीमे से अपने बातों के तारतम्य को जोड़ते हुए बोली। 'कुछ काम से आये हैं क्या भैया ?'

'हां एक स्पेशल मीटिंग अटैंड करनी थी।'

'नीना किसके पास है ?'

'उसके लिए एक आया रखा हूं। सारा दिन वही नीना की देखभाल करती है।'

भैया मेरे हर बातों का उत्तर शार्ट रूप में दे रहे थे।

'पर भैया आया मां नहीं बन सकती।'

'हां यह बात ठीक है, अनी! पर जिसे मां का दायित्व सम्हालना था वही चीजों को झंझट मानकर असंयुक्त हो गई, क्योंकि मातृत्व को वह मात्र बकवास मानती है।

भैया के आंखों से आक्रोश रिसने लगा था। घृणा का लावा उनके दिलो दिमाग से होकर बहनेलगा था।

एक पल के लिए भैया और मेरे बीच की खामोशी प्रतिक्षण बढ़ने लगी थी। इस खामोशी के बीच माधवी भाभी का न रहना मुझे खल रहा था।

भैया उस अर्थहीन यात्रा से अंतोगत्वा लौटकर उसी फुसफुसी धरती पर आगये थे, जहां वे पहले से मौजूद थे मेरा और नरेश का कहा न मानकर उन्होंने माधवी से लव मैरिज की। पर कितने दिन तक इस संबंध को स्थायित्व मिला मात्र ५ वर्ष, में

घटनाएं और हम

—नित्यनाथ तिवारी

मनुष्य घटनाओं की उपज है।
मैं अपने को घटनाओं से बाहर
नहीं मानता,
घटना यानी कि जीवन —मृत्यु
घृणा और सन्त्रास का
मर्मान्तकबोझ
घटना यें मनुष्य को ढकेल देती हैं
पाप और पुण्य के सागर में।
विवेक निर्माण
हर्ष—विषाद
सभी कुछ घटनाओं की ही
प्रतिछाया है प्रतिक्रिया है।
घटनाओं से घिरा हुआ मैं
अपने को पहचान नहीं पाता हूं?
मेरे चारो ओर
स्वार्थ के दलाल
मुझे बेच देना चाहते हैं।
यह सच है
कि घृणा और ऊबन की सीमाएँ होती हैं।
लेकिन अन्धी गलियों ...
और बदनसीब लोगों की आवाज—
उन्हीं के चारो ओर
लौट आती है
जो खोखली जिन्दगी
जीने के लिये मजबूर हैं।
रिश्वत और स्वार्थ के
रिश्तों के बीच
आज आदमी अपने को खो बैठा है।

एक पांव रखता हूं
कि हजार राहें फूटती हैं,
मैं उन सब पर से गुजर जाना चाहता हूं।
मुक्ति बोध

कथनी और करनी में अन्तर रखने वाला
व्यक्ति मिट जाता है। —सूक्ति

ही ये संबंध रेतीले टीले की तरह धसक गये कुछ पल सोचने के बाद भैया से पुनः पूछने लगी, किस बात पर तलाक की नौबत पहुंची ?'

'एक पल भैया खामोश रहे, शायद उन्हीं विषयों को दुहराते हुये बोर हो गये थे। एक किस्म कीघुटन उनके अन्तर में पैठ गई थी, जो कुछ न करने की क्षमता को बार-बार उनके मस्तिष्क में प्रभाव डाल रही थी। ६ मिनट की त्रासदी को भोगते हुये अंत में उन्होंने धीमे से कहा, 'अनी मैं माधवी से विवाह करते समय भूल गया था कि वह माडर्न युवती है, मेरे ख्याल से तो वह इस मामले में दो कदम आगे निकल गई, आज भी वह घर से ज्यादा पार्टियों फंक्शन और अन्य मामलों को ज्यादा वरीयता देती है। नीना नहीं होने के पहले मैं उसकी इच्छाओं का सम्मान करता रहा, पर कब तक ? नीनी के पैदा होने के बाद मेरी औपचारिकता मिटने लगी और अंत में दाम्पत्य जीवन जहां से शुरू हुआ था, वही आकर खत्म हो गया।

भैया की बात सुनकर मैं सन्न रह गयी। मात्र छोटी सी बात कलहका रूप धारण कर सकती है यह मुझे आज तक नहीं मालूम था। क्या दाम्पत्य जीवन का ठहराव मात्र इतना है, कि शादी और बच्चों के बाद तलाक पर आ सके ? कितने थोथे कितने निस्तेज हो गये हैं ये बंधन। मात्र एक पल के सानिध्य के लिए जीवन के बहुमूल्य क्षण हम गंवा देते हैं। सोचने के लिये मेरे पास अबाध क्रम था और सारी बात एक ही बार में नहीं सोची जा सकती उसके लिए लम्बा अंतराल चाहिये।

सोचने के क्रम को एक क्षण के लिए स्थायित्व दे दी। भैया की ओर देखने के बाद बोली, 'भैया रात काफी कट गया है आप नरेश के आफिस रूम में सो जाइये।'

'नहीं अनी मैं यहीं सोफे में सो जाऊंगा।'

'यहां तकलीफ होगी वहां पूरा इन्तजाम है।'

'ठीक है बाबा ! तेरा जिद पहले जैसा है अनी, कहीं भी फर्क नहीं क्या नरेश के साथ भी इसी तरह से पेश आती है उन्होंने मुस्करा कर कहा, उनकी मुस्कराहट में किसी किस्म की बनावट नहीं थी एक लंबी घुटन के बाद हंसी उनके चेहरे पर फब रही थी।

उनको कमरे तक पहुंचाकर मैं दूसरी ओर से अपने कमरे में पहुंच गयी।

' भैया के और मेरे दाम्पत्य जीवन में बहुत अन्तर है। वह शुरू से खंडित अध्याय था और हमारा समाज और स्वयं द्वारा रचित एक सुन्दर संसार है। और हमारे बीच न ऐसी कोई दुर्घटना होने वाली है।

पर भैया की रेल सही पटरी पर दौड़ने के बजाए गलत पटरी पर दौड़ने लगी और रेल गलत पटरी पर दौड़े तो उसका परिणाम दुर्घटना होता है। वह धमाका सबको दिख जाता है। पर उजड़ते हुए घर का धमाका किसी को नहीं दिखाता हां प्रतिपल, एक बिर्जीव स्थिति इस बात का आभास दिला जाती है सपने बुनने में समय लगता है। टूटने में नहीं। एक मध्यम और उच्च स्तर के बीच का व्यक्ति, जब ऐसी समस्याओं में उलझता है, तो पहले उसका वर्तमान धुंधला जाता है। बाद में भविष्य !

मैंने भैया के इस फैसले पर कि वे माधवी से विवाह करेंगे, सशक्त रूप से विरोध की थी। नरेश ने भी मेरे समर्थन में भैया को उस राह पर जाने से रोका था। ड्रामा होने के पहले उसका अंत हम दोनों ने बता दिया था। पर भैया की रट-माधवी एक नेक लड़की है और सही बात अणिमा एक बुजदिल लड़की थी। प्यार जो प्रतिक्षण आदमी के सीने में फास की तरह पैठता जाता है। प्यार एक शाश्वत सत्य है। उसमें कृत्रिमता ढोंग, अथवा विरोध का स्थान नहीं होता तुमने सिर्फ अपने घरवालो से प्यार किया और अंत में घर वालों के पदचिन्हों का अनुसरण करते हुए, नरेश से बन्ध गई-नये जीवन का प्रार्दुभाव होने के पहले-पहले जीवन का अन्त कर दिया। सस्ती सी भावना के कारण। आखिर तीन साल के कालेज जीवन में तुमने कभी प्रेम किया नहीं। क्योंकि तुम बुजदिल थी, जो प्यार प्रदीप के साथ सीमित अंशों में पनपा था उसे तुमने सस्ती भावुकता के कारण गँवा दिया। क्योंकि तुम एक

घरेलू भारतीय लड़की थी जो लीक से हट नहीं सकती। घुटन और कुंठित होना उसे स्वीकार होता है।

भैया की बातों से मन को शाक लगा। बातें कहाँ से कहाँ पहुँच गयी। सही मायने में बात वहीं रहनी थी अत: पीड़ा को पीकर बोली, "भैया यह सही हैं मैं बुजदिल थी पर यह भी सही है, कि आज जो जीवन मिला है, वह कुंठा और निराशा का नहीं, अपितु एक सशक्त मार्ग है। जहाँ भावनाओं को आदर मिलता है। नरेश ने वर्फ की तरह रिस-रिस कर मेरे ऊपर, प्यार उड़ेला है पर माधवी से ब्याह करने के पहले, की कुछ बातें जरूर आपके जेहन में हमेशा प्रश्न चिन्ह बनी रहेंगी। वह माडलिंग गर्ल है, जिसकी जिन्दगी कैमरे और अखबार के शिकजे में बन्द रहती है। और इन मृत-चीजों में जीवन के चित्र चिन्ह नहीं, अवशेष रहते हैं यहां भावनाओं को स्थान नहीं मिलता। भावनायें पार्टियों में बहते हुए शराब की तरह बह जाती है। और यथार्थ माडलिंग करती हुई लड़की की तरह नग्न हो जाता है। जिसके तन पर विज्ञापन का एक टावेल रह जाता है पर अंग तो दिखता रहता है यह निर्विवाद सत्य है। वह हमेशा स्वतंत्र रही है और रहेगी पेशा नहीं, शौक से अपनायी हुई माधवी की इच्छा वर्तमान में मिट चुकी है, पूरी तरह से नहीं। इसलिए वह आपको अपने मोहपाश में जकड़ ली है शीघ्र ही सारे आवरण अनावृत हो जायेंगे, तब आप जानेंगे माडलिंग गर्ल का जीवन क्या होता है।"

वह पहला दिन था, जब मैंने राजीव भैया को सही मार्ग दिखाने का प्रयास की थी। पर वे जानबुझकर खाई में छलांग लगा चुके थे।

नारी होने के नाते मेरा उद्देश्य यह नहीं था कि अन्य काम धंधे में फँसी नारियों के प्रति दुराभाव रखूँ पर जो सही स्थिति थी उसे प्रतिबिंबित करना मेरा फर्ज था। आज माधवी काम करते-करते उब गयी है, पर जब वह होम लाइफ में आयेगी तब वह अपने जीवन का सही मूल्यांकन करेगी अतीत और वर्तमान की बीच की दूरी उसे नोचने के लिए बाध्य हो जायेंगे। और घर में अकेली रहते वह जब बोर हो जायेगी तब उसे उसका अतीत बुलायेगा।

मैंने जब नरेश को स्थिति से अवगत करायी तो वह क्रोधित मुद्रा में कह उठे, "बेवकूफ है सही स्थिति आते ही राजीव लाइन पर आजायेगा।"

"हाँ यह सही है नरेश पर सही स्थिति आने तक एक जीवन नष्ट हो जायेगा।"

"हम उस आने वाली स्थिति को टाल नहीं सकते। अनी! मूक होकर अवश्य देख सकते हैं। और जब इमारत नष्ट होकर सँवरता है, तो उसमें निखार आजाता है।"

भैया के इस चर्चित मैरिज को हर पहलू से आंक कर, नरेश और मैंने आपस में काफी तर्क वितर्क किये पर ये सारी बात तेज अस्त्र के थोथे हो जाने जैसी हो गई। जो चलती अवश्य थीं। कटने के नाम पर थम जाती और क्रियाशील हाथ सुन्न पड़ जाते।

एक बहन होने के नाते भैया के के मैरिज में मैं गयी भी। आखिर यह मेरे भाई के भविष्य का प्रश्न था। मैं गई, शादी में नन्हें विजय को लेकर।

उस सादे समारोह का चित्र आज भी सजीव हो उठता है। तब मैंने ईश्वर से प्रार्थना की थी, "हे प्रभु! इनका दाम्पत्य जीवन सफल हो।"

पर जीवन में, दाम्पत्य जीवन को चलाने के लिए कुछ सूत्र होने चाहिए। राजीव और माधवी के दाम्पत्य जीवन में कोई सूत्र नहीं था एक उतेजना थी।

भैया के जीवन में भी काफी परिवर्तन आ गया। वह जहां मैंने जीवन के २० वर्ष गुजारे थे, अब नयी परिस्थितियों से जुझ रहा था। सही मायने में घर भी माडलिंग का एक अंग बन गया। पहले जहाँ मांस के नाम से नाक भौ सिकोड़ा जाता था, वहां विदेशी शराब की बोतलें खुलने लगी। क्या माँ और पापा होते से इस स्थिति को सहन करते? ठीक ही हुआ स्थिति देखने के पहले उनका अन्त हो गया।

माधवी भाभी, खुले आम काकटेल पार्टियों और क्लबों की शोभा बनती गयी। उन्हें तनिक भी अहसास नहीं हुआ कि माडलिंग और विवाहित

स्त्री का जीवन अलग होता है। विवाहित जीवन में भावनायें ज्यादा शक्तिशाली होती हैं, अश्लील हरकतें नहीं।

इन्हीं परिस्थितियों को देखकर मैंने भैया के यहाँ जाना छोड़ दिया। वैसे भी भैया और यहाँ की दूरी मात्र ४०० मील है। पर इन सारी हरकतों से मुझे ठेस लगने लगा। क्योंकि मैं भारतीय संस्कार में पली हुई लड़की थी।

और इन्हीं भावावेश के वशीभूत होकर लिखी थी, "भैया शराब का प्रतिमाह का बिल कितना होता है?"

भैया ने उस पत्र का उत्तर नहीं दिया। क्योंकि मेरी छोटी-मोटी हरकतें, उन्हें विषाक्त कीटाणु जैसे लगते थे।

उस दिन नरेश ने आकर मुस्कराते हुए मुझसे कहा, "आजकल राजीव आफिस में कम, और शराब की बोतल को उठाने में ज्यादा समय लगाता हैं।'

"हाँ उसने स्थिति ही ऐसी पैदा की है, कि वहां मरने के सिवाय कुछ बचा नहीं है। और अब तो राजीव काफी बेशर्म भी हो गया है।" कहते कहते तो कह गयी, पर अंतर में यही बात मन को टीसती रही। अतीत का राजीव और वर्तमान के राजीव में काफी फर्क आ गया है। उसका जीवन कितना सुखी संतृप्त था, यह हम दोनों ने कभी जानने की कोशिश नहीं की। पर उड़ती अफवाहों से इतना अवश्य पता चला कि दोनों एक दूसरे से काफी लापरवाह हो गये हैं। माधवी रात-रात भर गायब रहती है पार्टियां फक्शन में जाना उसकी नियमित आदत बन गई है।

इन सब बातों को परखते हुए मैंने राखी में न जाने का फैसला कर ली एक तरह से उस घर में जाते हुए दुःख लगने लगा था।

राखी के बाद मेरे भैया खुद आये थे, मेरे लिए प्रजेंट लेकर मुझे देखकर शिकायत भरे स्वर में बोले थे, "क्यों अनी अपने भाई के प्रति इतनी लापरवाह हो गयी साल में एक एक बार आने वाले त्यौहार का भी ख्याल नहीं रहा।"

भैया को देखकर, मन एक अवसाद से भर उठा। परन्तु अवसाद के अंश को पीते हुए बोली, "भैया क्या फायदा वहां आकर? मुझे पूरा घर माडलिंग का नमूना दिखता है।"

मेरे उत्तर से भैया कुछ क्षणों के लिए सन्न से रह गये। मेरी बातों का दंश उन्हें चुभने लगा। एक पल शांत रहने के बाद बोले, "अनी! ये तेरे लिए प्रजेंट।"

"पर इस वर्ष तो मैंने आपको राखी भी नहीं, बांधी। फिर यह उपहार किस लिए।"

"क्या राखी का त्यौहार मात्र प्रजेंट के लिए ही आता है। वैसे भी अनी, मैं तेरी पीड़ा समझता हूँ। तुझे माधवी के आने से उतनी पीड़ा नहीं हुई है, जितनी इस वक्त इस घर की स्थिति से। पर जो रास्ता है, उसे घटाया अथवा बढ़ाया जा नहीं सकता। उस रास्ते को मैंने स्वयं निर्मित किया है अतः जूझना मेरा कर्तव्य है।"

भैया प्रजेंट रखकर उसी समय चले गये। रुकने को जरूरत महसूस नहीं की, नहीं हम दोनों में किसी नें उन्हें रुकने के लिए कहा। उनके जाने के बाद नरेश ने स्वयं कहा, "अनी तुम्हें ऐसा रुखा व्यवहार अपने भाई से नहीं अपनाना चाहिए था। आखिर वह तुम्हारे सगे भाई हैं, सौतले नहीं और फिर पारिवारिक जीवन में मनमुटाव तो चलता रहता है। शादी उन्होंने अपनी मर्जी की हैं हमें उससे क्या लेना देना।"

उनकी बातों में बल था फिर भी जिस स्थिति में मैं थी, वह मध्य मार्ग का था अपने घर में होने वाले उथल पुथल से खिन्न थी।

भैया के दांपत्य जीवन पर विघटन की जो परत चढ़ गई, उस पर मुझे अफसोस है दुःख नहीं।

इन सब के बीच अबोध नीना का ख्याल..........बेचारी नन्हीं सी उम्र में आया के भरोसे छोड़ दी गई है! दूसरों की भूलों का वह प्रायश्चित कर रही है।"

क्या मैं नीना को रख सकती नहीं? इस प्रश्न पर चौंकी। अवश्य रख सकती हूँ पर भैया! हाँ भैया नहीं मानेंगे। उन्हें मनाने का भरसक प्रयास करूँगी।

भैया ने जो रास्ता अपनाया है उस पर एक मासूम को ढ़केला नहीं जा सकता। मैंने मन में निश्चय कर लिया चाहे जो भी हो, मैं नीना को अपने पास रखूंगी।

और इसी निश्चय को लिए मैं

शेष पृष्ठ १४ पर

स्वतंत्रता दिवस आज के परिप्रेक्ष्य में

—डा० रामचन्द्र शुक्ल

इस वर्ष स्वतंत्रता दिवस एक नये वातावरण में मनाया जारहा है। पिछले तीस वर्षो में कांग्रेसी प्रधान मंत्रियों पं० जवाहर लाल नेहरू, लाल बहादुर शास्त्री एवं श्रीमती इन्दिरा गांधी ने क्रमश: लाल किले पर राष्ट्रीय झण्डा फहराकर स्वतंत्रता दिवस का आह्वान किया था। इस इकतीसवें वर्ष में जनता पार्टी के प्रधान मंत्री श्री मोरार जी देसाई स्वतंत्रता दिवस का आह्वान करेंगे।

राज्यों में स्थिति इससे भिन्न रही है। केरल राज्य में तो बहुत दिनों से गैर कांग्रेसी मुख्य मंत्री इस दिवस का शुभारम्भ करते रहे हैं। वहां एक समय तो १९ विधायकों वाली प्रजा सोशलिस्ट पार्टी ने श्री पट्टम थानू पिल्ले को मुख्य मंत्री के बना कर शासन संभाला था। बाद में श्री नम्बूदरीपाद एवं श्री अच्युत मेनन के नेतृत्व में कम्युनिस्ट एवं अन्य वामपंथी पार्टियों की मिली जुली सरकारें बनी। एक समय यह भी आया कि कम्युनिस्ट एवं अन्य वामपंथी पार्टियों के साथ कांग्रेस भी संयुक्त मंत्रिमंडल में सम्मिलित हुई।

एक लहर ऐसी आई उत्तर भारत में संयुक्त विधायक दल की मिली जुली सरकारें बनी। उड़ीसा, बंगाल बिहार, उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाना, राजस्थान, मध्य प्रदेश, केरल एवं तमिलनाडु में गैर कांग्रेसी सरकारें बनी। इनमें प्रमुख रूप से सोशलिस्ट पार्टी, प्रजा सोसलिस्ट पार्टी, कम्युनिस्ट, जनसंघ और कांग्रेस के बागियों ने हिस्सा लिया। इनमें एक बात यह भी रही कि कुछ प्रदेशों में आम चुनाव में कांग्रेस अल्पमत में नहीं आई थी। परन्तु कांग्रेस में अन्तर्विरोध के कारण कुछ कांग्रेसियों ने जब कांग्रेस छोड़ी तभी उन राज्यों में संविद सरकारों का गठन हो सका था। उदाहरण स्वरूप उत्तर प्रदेश में जब चौधरी चरण सिंह के नेतृत्व में १७ कांग्रेसी विधायकों ने एक दल बना कर कांग्रेस को छोड़ा और विरोध पक्ष के साथ बैठना स्वीकार किया तब यहां संविद सरकार का गठन चौधरी साहब के नेतृत्व में हो सका।

संविद सरकारों के गठन के पीछे एकही दृष्टिकोण था कि कांग्रेस शासन से देश में मायूसी छाई है और विकास का क्रम कुंठित हो गया है। अतएव उसे हटाना नितान्त आवश्यक है। इसके साथ ही संविद के घटकों का जनता से एक वादा था कि विभिन्न विचारों के होते हुये भी वे विचारों के मतभेदों को सामने लाये बिना प्रदेश एवं देश के हित में कार्य-क्रम चल येंगे। प्रारम्भ में हुआ भी ऐसा ही। सभी घटक एकमत होकर एक टीम की तरह से कार्य करना प्रारम्भ किये। सोशलिस्ट, प्रजासोशलिस्ट, कम्युनिस्ट भारतीय क्रांति दल एवं जनसंघ का यह गठ बंधन कुछ ही दिनों में रंग लाने लगा। उन सब में प्रतिस्पर्धा होने लगी कि कौन दल इनमें अधिक जनहित में कार्य करना चाहता है। अब संविद के रूप को निखारने के बजाय अपने दल को बढ़ाने की होड़ लग गई। यदि वह स्वस्थ होड़ होती तो भी कोई बात नहीं थी। परन्तु विघटन के लक्षण तब स्पष्ट होने लगे जब अपने दल की प्रतिष्ठा बढ़ाने के साथ अन्य सभी घटकों की निन्दा का क्रम प्रारम्भ हो गया सबसे पहले सोशलिस्टों, विशेषकर उनके नेता श्री राजनारायण ने प्रहार प्रारम्भ किया। फिर क्या था जनसंघ उनसे आगे बढ़ गया। संविद की कोआरडिनेशन कमेटी (सुपर कैबिनेट) की बैठक में चौधरी साहब ने कहा कि विरोधी दल में रहने के कारण आप सबकी धारणा है कि शासन की कुर्सी पर बैठना काजल की कोठरी में घुसने के समान है। मेरे जीवन की सबसे बड़ी भूल यही हुई कि मेरी वजह से आप लोगों को शासन की कुर्सी पर बैठने का अवसर मिला। मैं अपनी इस भूल को जितनी जल्दी सुधार सकूंगा उतना ही मेरे और आपके लिए कल्याण कारी होगा। इस घोषणा के बाद

देश की जनता की आस्था और विश्वास विभिन्न मतों की इन मिली जुली सरकारों के प्रति उठ गया। उनकी धारणा पुनः दृढ़ हुई कि शासन के लिए एक सशक्त एवं सिद्धान्त वाला दल आवश्यक है। सभी स्तब्ध रहे। परन्तु यह स्पष्ट था कि यह संविद सरकार कुछ ही दिनों की मेहमान है। और शीघ्रही परिणाम हुआ सारी संविद सरकारें एक-एक करके धराशाई हो गई।

जहां उत्तर प्रदेश एवं बिहार से कांग्रेस को एक भी सीट नहीं मिली। मध्य प्रदेश, राजस्थान, हरियाना, पंजाब, हिमांचल, काश्मीर, गुजरात, आसाम, आदि राज्यों से बहुत कम सीटें मिली। परन्तु विचित्र बात यह भी हुई कि आन्ध्र प्रदेश, तामिलनाडु कर्नाटक एवं केरल में जनता पार्टी को करारी हार का सामना करना पड़ा।

श्रीमती इन्दिरा गांधी को तानाशाह कहा गया। इतिहास साक्षी है है कि सारी शक्ति अपने हाथ में लेने बाद दुनिया के किसी भी तानाशाह ने स्वतः जनता को निर्णय करने का अवसर नहीं दिया। यह इन्दिरा जी का प्रजातांत्रिक मन और मस्तिष्क था जिसने विरोध के बावजूद देश की जनता को अपना प्रतिनिधि और सरकार चुनने का अवसर दिया। यही उनकी प्रजातंत्र के प्रति आस्था एवं जनता के प्रति पूर्ण विश्वास का प्रमाण है।

दिल्ली में श्री मोरार जी के नेतृत्व में जनता सरकार गठित हो गई। कम्यूनिस्ट पार्टी मार्कसिस्ट को छोड़कर अन्य सभी घटक जनता पार्टी में विलीन हो गये। परन्तु इनके विभिन्न युवक, छात्र, किसान, मजदूर, महिला मोर्चों का विलीनीकरण नहीं हो पाया है।

जनता पार्टी में विधान सभा के प्रत्याशियों के चयन में काफी सघर्ष एवं असंतोष हुआ। प्रत्येक घटक के आधार पर चयन किया गया। इससे जनता पार्टी के समर्थकों में बहुत बड़ा हतोत्साह हुआ। ऐसा लगता था कि जनता पार्टी को वैसी सफलता न मिलेगी जैसा कि लोक सभा के चुनाव में। परन्तु साधन विहीन, छिन्न-भिन्न नेतृत्व और हतोत्साहित मनोबल वाली कांग्रेस इस अवसर का लाभ न उठा सकी।

विधान सभा के चुनावों का परिणाम भी विचित्र निकला। जम्मू-कश्मीर में नेशनल कांग्रेस का बहुमत। केरल में कांग्रेस कम्यूनिस्ट का बहुमत। तामिलनाड्ड एवं पांडीचेरी में ए०डी०एम०के० का बहुमत। गोवा में महाराष्ट्र गोमांतक का बहुमत। बंगाल कम्यूनिस्ट मार्क्सिस्ट के नेतृत्व वाले वामपंथी मोर्चे का बहुमत और पंजाब में अकालीदल का बहुमत हुआ। इन प्रदेशों में जनता पार्टी की स्थिति नगण्य सी रही। परन्तु उड़ीसा, बिहार, उत्तर प्रदेश, दिल्ली, हरियाना, हिमांचल, राजस्थान, एवं मध्यप्रदेश में जनता पार्टी को भारी सफलता मिली। जनता पार्टी बहुमत वाले प्रदेशों में मुख्य मंत्री और बाद में मंत्रियों के चयन को लेकर काफी आन्तरिक संघर्ष हुआ। इसमें निर्णायक भूमिका भालोद एव जनसंघ के मिनी मोर्चे ने निभाई। उधर संगठन कांग्रेस, प्रजातांत्रिक कांग्रेस एवं सोशलिस्टों में काफी असंतोष है। इस भयावह स्थिति को देखकर जयप्रकाश जी को कहना पड़ा कि अभी जनता पार्टी के विभिन्न घटक एकरस न होकर अपने पूर्वाग्रहों के अनुसार कार्य कर रहें हैं। दाम बढ़ रहे हैं, अनुशासनहीनता बढ़ रही है। शान्ति एवं व्यवस्था डगमगा रही है, हरिजनों पर अत्याचार का दौर सा आ गया है, श्रमिकों में असंतोष बढ़ रहा है. छात्र आन्दोलन और सत्याग्रह के मार्ग पर चल पड़ा है। यह तो रही देश की आन्तरिक स्थिति।

हिन्द महासागर के तटीय देशों विशेषकर भारत के चारों तरफ साम्राज्यवादी, पूंजीवादी खूनी पंजा बढ़ रहा है। वियागों गार्सिया में सशक्त सैनिक अड्डा बनाने के बाद अमरीकी शासन हिन्दमहासागर के तटीय देशोंमें अपनी मित्र सरकारें बनाने की पहल कर रहा है। बंगला देश की मुक्ति आन्दोलन के समय अमरीका ने खुलकर पाकिस्तान की मदद की। फिर भी बंगला देश मुक्त हुआ। परन्तु पूंजीवादी षड़यंत्र के कारण वंग बंधु शेख मुजीब सहित सभी क्रान्तिकारी नेताओं की निर्मम हत्या की गई। आज बंगला देश

शासन अमरीकी शासन को चटगांव में भारी सैनिक अड्डा बनाने की सहमति दे चुका है जब कि स्मरण होगा कि अमरीकी सातवां बेड़ा रूसी धमकी के कारण बंगला देश मुक्ति संघर्ष के समय चटगांव की ओर बढ़ने में समर्थ न हो सका था। मारिशस में श्री रामगुलाम की पार्टी को अपदस्थ करने के लिए पूंजीवादियों ने सब कुछ दांव पर लगा दिया। यह सभी जानते हैं कि दियागों गार्सिया पहले मारिशस का भाग था। फिर भारत में श्रीमती इन्दिरा गांधी को सफलता पूर्वक अपदस्थ किया गया। पाकिस्तान के नेता श्री जुल्फिकार अली ने अपने अपदस्थ होने के पीछे अमरीका का हाथ बताया। अभी श्री लंका में कम्युनिस्ट लंका समाजवादी पार्टी एवं श्रीमती भंडार नायक के संयुक्त मोर्चे की सरकार को सफलता पूर्वक अपदस्त किया गया। एशिया में श्रीमती इन्दिरा गांधी शिवसागर रामगुलाम श्रीमती भंडार नायक, बंग बंधु शेख मुजीब ने सोवियत रूस सहित सोशलिस्ट देशों के सहयोग से स्वावलंबन परस्पर सम्मान एवं गुटनिरपेक्षता के आधार पर एक नई धुरी बन चुकी थी। इसे ध्वस्त करने के लिए अमरीकी शासन एवं उसकी एजेन्सी सी० आई० ए० कटिबद्ध है।

प्रसन्नता की बात है कि भारत सरकार ने रूस से की गई संधियों को यथावत रखा है। परन्तु इधर अमरीका से बढ़ते हुये जनता सरकार ने संबंध कभी भी नया खतरा पैदा कर सकते हैं।

अतः यदि जनता पार्टी अपने सभी घटकों का सामीकरण करके सबके साथ समन्वय करके न चल सकी तो तो उसका विघटन होना अवश्यम्भावी दिखता है। इस क्रम में गति और आ सकती है यदि कांग्रेस अपने आलस्य, प्रमाद एवं अन्तर्कलह से ऊपर उठकर समाजवादी कार्यक्रम को चलाते हुये कृत संकल्प होकर जनवाणी को मुखरित करते हुए जन संघर्ष के मार्ग पर चल पड़े।

स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों को नमन करके, समाजवादी मार्ग अपनाकर विश्वशान्ति के लिये अग्रसर होना ही स्वतंत्रता दिवस, १५ अगस्त, का देश के लिये सबसे बड़ा संकल्प होगा।

पृष्ठ ९ का शेष

खिड़की के पास आयी आसमान में तारे टिमटिमा रहे थे। ये तारे बहुत कुछ कहने के प्रयास में बुझ गये हैं। मात्र मद्धिम सी रोशनी बची है, ऐसी रोशनी किसी के लिए पथप्रदर्शन का कार्य नहीं कर सकती।

खिड़की बन्दकर, उस पर परदे चढ़ादी। और विस्तर पर आकर लेट गयी। पास में सोये विजय के सिर पर हाथ फेरकर ममत्व अभिभूत हो गई। कुछ दिन के बाद नीना मेरे पास होगी। इन्हीं विचारों को लिए मैंने बैड लैम्प आफ कर, आँखें मूद ली।

पृष्ठ १५ का शेष

लम्बा जुलूस फिर एक जगह इकट्ठा होकर धुंआधार भाषण और अन्त में सांस्कृतिक प्रोग्राम। बस इतना ही। वह दिन कब आएगा जब आम आदमी स्वतंत्रता दिवस पर्व को इस तरह मना सके जैसे होली या दीवाली मनाई जाती है। आम आदमी जब मूल, आवश्यक जरूरतों को आसानी से पूरा करने लगेगा शायद तभी यह सम्भव है।

कहना कठिन है हम कब स्वतंत्र हुए। सन् १९४७में यासन् १९७७ के मार्च, महीने में। मार्च १९७७ में हमारे मौलिक अधिकार (?) वापस मिले। इस नये माहौल में अपने अधिकारों के साथ हम १९७७ का स्वाधीनता दिवस पर्व मनायेंगे। उन तमाम आशाओं के साथ जिन्हें हमने संजो रखा है पर क्या यह भी पिछले स्वाधीनता दिवस पर्वो की तरह होगा? या फिर आदमी को दिशा प्रदान करेगा।

भूख

—मोहन कुमार मस्ताना

उसने
भूख से पीड़ित होकर
अपनी बीबी की इज्जत बेची।
उन पैसों से जहर खरीदा
एक पुड़िया खुद खाया,
दूसरा
बीबी को दिया तीसरा बच्चे को।
तीनों भूखे सदा के लिए सो गये।

गजल

निरंजन शर्मा 'सत्य'

भूख में नींद नहीं आती है, किसलिए।
रात मयकसी में ढलती है, किसलिए
जख्म गिनने में ही समय कट गया,
जिन्दगी इंसान को मोहती है किसलिए।
फूल की सेज सालती रही उम्रभर
जिन्दगी काँटों पे पलती है, किसलिए।
फूल जो ये झर गये हैं डाल से,
कली फिर हँसती है किसलिए।
अन्दाजमें ही गुजर गया जीवन,
भ्रम पर आस्था पलती है, किसलिए।

आम आदमी की स्वाधीनता

विनय सिंह 'विनय'

कितना आश्चर्य है कि स्वाधीनता दिवस पर्व केवल नीजि या सरकारी प्रतिष्ठानों में ही मनाया जाता है। आम आदमी इस पर्व से कटा सा रहता है। विदेशी चंगुल से अपने देश को मुक्त कराने वाले महापुरुषों ने क्या इसीलिए अपने को समाप्त किया कि देश स्वदेशी पूँजीपतियों के चंगुल में आ जाय? आम आदमी आज भी समकालीन स्थिति से असंतुष्ट है। महानगरों के सरकारी प्रतिष्ठानों में कुछ अलग तरीके से स्वाधीनता दिवस पर्व मनाया जाता है तो गांवों के सरकारी प्रतिष्ठानों में उससे सर्वथा भिन्न तरीके से मनाया है। मोटे तौर पर इसका विभाजन भी किया जा सकता है।

१. महानगरीय स्वाधीनता दिवस पर्व।

२. ग्रामीण स्वाधीनता दिवस पर्व।

महानगरों में जितना भव्य समारोह होगा ग्रामीण अंचलों में उतना ही फीका-फीका। गाँवों में गरीब मजदूरों का आज भी उतना ही शोषण हो रहा है जितना आज से तीस साल पहले। आज भी हमारे देश में भयंकर शोषकवर्ग मौजूद है। जब तक इस देश में शोषकवर्ग और उनके नुमाइन्दे स्वार्थपरक व्यवस्था को बढ़ावा देते रहेंगे आम आदमी अपने को स्वाधीन कभी भी महसूस नहीं कर सकता।

गाँवों में गरीबी के कारण ऋण का अत्यधिक महत्व है। यह गरीबी के शोषण का एक महत्वपूर्ण जरिया है। यह शोषक या तो साहूकार होते हैं या फिर बड़े स्तर के किसान।

गरीबों की स्थिति को उपेक्षित कर उनसे ब्याज मनमाने ढंग से ले लिया जाता है। छोटे स्तर के किसान भी इस ऋणग्रस्तता के भयंकर शिकार हैं। मध्यम स्तर के किसान बैंकों से ऋण लेकर समयांत में पैसा चुका तो देते हैं पर कभी-कभी उन्हें नीलामी का भी शिकार होना पड़ता है। यह कटु सत्य है। सरकार द्वारा गरीबों के लिए जो भी ऋण उन्मूलन अभियान चलाया गया हो पर प्रत्यक्ष रूप में उन्हें 'परलोक से भय' दंशित करता रहता है। ऐसे व्यक्तियों के लिए स्वाधीनता दिवस पर्व क्या महत्व रख सकता है? क्या ये व्यक्ति 'आम आदमी' नहीं हैं।

बिहार की अबरक खदानों के मजदूर प्रतिवर्ष सैकड़ों की संख्या में टी० बी० (क्षय रोग) से समाप्त हो जाते हैं। उनकी सुरक्षा उनकी दवा की समुचित व्यवस्था अब भी नहीं है। ऐसे मजदूर स्वाधीनता दिवस पर्व को 'सबदिन एक समान' कहकर महत्व नहीं देते। स्वाधीनता दिवस पर्व पर उनके चेहरे भय और चिंता ग्रसित से होते हैं। चाहकर भी उनमें उल्लास का अंश नहीं आ पाता।

पूर्वी उत्तर प्रदेश के ग्रामीण स्कूलों में अगस्त के एक दिन पूर्व यह हिदायत दी जाती है कि कल प्रत्येक छात्र के कपड़े स्वच्छ होना चाहिए अन्यथा डाँट पड़ेगी। गरीब मजदूर का बेटा अपने चीचट कपड़ों को साफ करने के लिये साबुन के पैसे मांगता है। माँ बदले में उसे एक चांटा जड़ देती है। हरामी कहीं का कल के लिए खर्ची (आटा चावल) की व्यवस्था ही नहीं है और तुझे साबुन का पैसा चाहिए। लड़का फिर भी नहीं मानता। रोते जिद्द करता रहता है। तब उसकी मां कहीं से पन्द्रह पैसे माँग उसके हाथपर धर देती है। ले मुआ सोडा खरीद साफ करले।

लेखक

और लड़का खुश होकर सोडा खरीदने चल देता है। चलो इसी बहाने सफाई कर लेगा।

स्वाधीनता दिवस का अवसर शायद इसी लिए आता है कि हम स्वाधीनता के लिए महापुरुषों द्वारा की गई कुर्बानियों पर गौर करे, आत्मचिंतन करें और भविष्य में स्वच्छ प्रगति के हर उपायों को कार्यान्वित करें। पर यह पर्व तो आज के लिए एक घिसी-पिटी परम्परा बनकर रह गई है। पहले एक

मैं

कुमारी राजश्री मुस्काती

मुझे लगने लगा है
कि कोलाहल ने
छिटका दिया है मुझे
अपने पास से
और मैं एक
खाली बोतल की तरह
पड़ी हूं…
जिसे कोई छूना भी पसंद नही करता।
यह भी अजीब बात है
कि रोज सुबह
सूरज की किरणें
बुनने लगती हैं मेरे लिए
एक जिस्म…
लेकिन यह बुनावट
थोड़ी देर बाद
आत्मीयता के इंतजार में
थक कर
खुलने लगती है,
और मैं
पकड़े गए रिश्वतखोर की तरह
बिखर जाती हूं।
तब
मुझे फूटना पड़ता है
पके फोड़े की तरह…
एक बार फिर…

वह

—श्रीकान्त पाण्डेय

वक्त के साथ साथ
हालात कुछ ऐसे बदले कि,
वह अब
खिड़की से परदा हटाने के बादभी
नही आते।
जबकि
सूरज की हर किरण
और चंदा की चाँदनी के साथ,
वह आते थे और
अपनी याद छोड़ जाते थे।
केवल स्मृतियाँ ही तो
मधुर होती हैं,
आदमी तो आता जाता है,
कितनी बार कहा था उन्होने।
पिछली बार उन्हें फिर आने की
मैंने कसम दी थी,
तो उन्होने कहा था
आने जाने में स्नेह ही संबल है
कसम विश्वास को
खोखला कर देता है।

पाठकों के पत्र

युवारश्मि का जुलाई अंक बेहद पसंद आया। कहना चाहूंगा कि श्री विनय सिंह 'विनय' की कहानी मुकुल एवं सुश्री उर्मिला गोस्वामी की कहानी 'रेत' ने इस अंक में चार चांद लगा दिये हैं। शुभकामनाएं

—उदय प्रकाश जैन
सराय अगहत

युवारश्मि का जुलाई अंक देखा। तुलसीदास विश्वकर्मा की कविता 'जादूगर, सामयिक पृष्ठभूमि में एक जीवंत रचना है इतनी अच्छी रचना से परिचय कराने के लिए मेरा साधुवाद ग्रहण करें।

हेमेन्द्रकुमार राय, चाँदामेटा

जुलाई अंक मुझे और मेरे सभी साथियों को खूब पसंद आया। बधाई।

सुभाष गुप्ता, नई दिल्ली।

इस बार युवारश्मि (जुलाई अंक) में पढ़ने को खूब सामग्री मिली। डायरी के पृष्ठ और सम्पादकीय अच्छे लगे। कहानी 'मुकुल' और 'रेत' बेहद मर्मस्पर्शी हैं। सावित्री शर्मा के गीत और सुभाष गुप्ता की परिचर्चा भी अच्छी है।

युवापीढ़ी के लिए भाई अरुणकुमार के विचार विचारणीय हैं। विश्वास है भविष्य में इसी तरह की सामयिक सामग्री युवारश्मि के माध्यम से प्राप्त होती रहेगी।

नित्यानन्द राघव, मथुरा

पिछले वर्षों की अपेक्षा अब युवारश्मि अधिक पठनीय और रोचक है। जून और जुलाई अंक की कहानियां तथा अन्य रचनाएं मुझे अच्छी लगीं।

श्रीमती रानीराणा,
नई दिल्ली

एक और तलाक

—विमल झा

डा० सावरकर के सामने से उठते हुए अरुणिमा ने ऐसा महसूस किया कि वह उठ न पा रही हो जैसे उसके ऊपर कोई भारयुक्त वस्तु रख दी गई हो या उसकी सारी शक्ति निचोड़ ली गई हो। बहुत ही कठिनाई से वह अपने आप को उठा पाई। उठते ही उसे चक्कर आ गया। उसने स्वयं को कुर्सी का बाजू पकड़ कर संभाला। कुछ देर तक उसकी आँखों के सामने अंधेरा छाया रहा। थोड़ी देर बाद वह अर्धसामान्य अवस्था में आ गई। अपने जिस्म को अर्धसन्तुलित पैरों पर केन्द्रित करते हुए..... संभलते हुए वह आगे बढ़ी। उसे लगा कि वह हवा में तैर रही है जैसे उसके अन्दर का भाग एकाएक लोप हो गया हो..... खोखलापन आ गया हो इसमें। गुलगुले कालीन को बुरी तरह से रौंदते हुए वह दरवाजे तक पहुंची और दरवाजा खोल कर केबिन से बाहर आ गई।

बाहर तमाम उदास रोगियों की भीड़ थी। जमघट था.........। ऐसी भीड़ जिसमें सब अपने दुख से दुःखित हों। सब की चिन्ता स्वयं के लिए हो....व्यक्तिगत हो। उसे कुछ धुंधली आकृतियाँ ही दिखाई थी। शायद वह अपने से बाद वाले नम्बर के उस आदमी की उन नजरों को भी न देख सकी जो कि उसके द्वारा अधिक समय लेने के कारण झुंझला रहा था। वह छोटे-छोटे कदमों से जमीन नापते हुए डिस्पेन्सरी के बाहर आ गई।

डिसपेन्सरी के बाहर की चहल पहल के बीच उसने एक टैक्सी को रोका और उसमें लुढ़क गई। पता उसने टैक्सी वाले को पहले ही बता दिया। टैक्सी में वह सोचती रही। जब टैक्सी झटके लेती तो उसकी विचारतन्द्रा टूटती और फिर......वह विचारमग्न हो जाती। थोड़ी देर में वह घर पहुंच गई टैक्सी वाले का किराया चुका वह अन्दर आ गई। भूख पूर्णतया मिट गई थी। सीधे वह जाकर बिस्तर पर गिर गई। सर हल्का-हल्का दर्द देने लगा था। नींद भी आंखों से दूर जा चुकी थी। अचानक उसे कुछ याद आने लगा। अपने बारे में..अनिमेष के बारे में...

आज ही की तो बात है। सुबह उठकर वह किचन में गई और अनिमेष नहा रहा था अरुणिमा सब्जी काट रही थी कि अचानक उसकी ऊँगली कट गई थी। वह उई कहकर चिल्लाई थी। अनिमेष तुरन्त दौड़ता हुआ आया था, 'क्या हुआ डार्लिंग क्या हुआ ?'

'कुछ नहीं' अरुणिमा मुस्कराई थी। लेकिन अनिमेषने उसकी उंगली से रक्त निकलने देख लिया था। उसे जबरदस्ती कमरे में खींचकर ले आया था। बैंडेज करके वह स्वयं खाना बनाने में जुट गया था। कई तरह के व्यंजन बनाये थे उसने इस मामले में वह काफी तेज था। इसी सब के कारण तो उसे आज आफिस की देर हो गई थी।

टन.. टन..। घड़ी ने दो बजाये उसकी विचार श्रृंखला चिटक गयी। अरुणिमा को शायद कुछ याद आ गया था। हां..अनिमेष द्वारा बनाये खाने की याद..वह अपने को रोक न सकी। किचन की ओर बढ़ती चली। फ्रिज में से खाने का सामान निकाल वह खाने लगी थी।

खाना खाने के बाद वह फिर बिस्तर पर लुढ़क गई। जिन्दा लाश की तरह से। वह स्वयं को सोने में भी असमर्थ पा रही थी। सोने की कोशिश में वह आंखें बन्द करती तो उसे लागता कि आंखें दहक रही हैं। आंखें खुलती तो उसे कुछ...कुछ क्या बहुत कुछ याद आने लगता। स्वयं और अनिमेष से संबंधित ढेर सा बातें। पुराने दिनों की सुखदसी यादें उसकी विचार शक्ति पख लगाकर उड़ने लगती। बहुत दूर..बहुत दूर।

अनिमेष और वह एक इकाई है इन दोनोंमें कितना प्रेम है. कितनी लगाव है, कितनी चाहत है एक दूसरे के प्रति...यह उन्हें महसूस हो या न हो पास पड़ोस वाले इसे अच्छी तरह महसूस करते हैं और इसका स्पष्ट संकेत दे देते हैं।

एक दिन अनिमेष आफिस से लौटा तो काफी थका-थका सा दिख रहा था। बोझिल कदमों से वह घर

भूमि को बचाने के लिए वृक्षों का होना अधिक आवश्यक है। क्योंकि -

वृक्षों से जल
जल से अन्न
और अन्न ही जीवन है।

वन विभाग, उत्तर प्रदेश

नशे से

तन: खोखला हो जाता है और आयु कम हो जाती है।
मनः दुर्बल हो जाता है और नैतिकता का स्तर गिर जाता है।
धनः बरबाद हो जाता है और उन्नति का द्वार बन्द हो जाता है।

इतना ही नहीं
नशा सब बुराइयों की जड़ है।

आज हमारा राष्ट्र स्वतंत्र है और उसका नव निर्माण होना है।

अत:

नये भारत की प्रगति के लिए नशे के कलंक को दूर करना सभी का पवित्र कर्तव्य है।

आगे बढ़ता देश हमारा आवो उसे महान बनायें।

मद्य निषेध एवं समाजोत्थान विभाग, उत्तर प्रदेश द्वारा प्रसारित।

छोटी सी बचत से जीवन बीमा

अब डाकघर से भी बीमा का लाभ प्राप्त है।

कैसे ?

५, १०, १५, या २० रुपये का ५ वर्षीय डाकघर रिकरिंग डिपाजिट खाता खोलकर खातेदार की आकस्मिक मृत्यु पर उत्तराधिकारी को खाते का पूर्ण परिपक्व मूल्य मिलेगा।

५ रुपये पर	३८० रु०
१० रुपये पर	७६० रु०
१५ रुपये पर	११४० रु०
२० रुपये पर	१५२० रु०

राष्ट्रीय बचत निदेशालय, उत्तरप्रदेश द्वारा प्रसारित।

के अन्दर प्रविष्ट हुआ। अरुणिमा दौड़कर काफी बना लाई। लान में बैठकर वे काफी पीने लगे। रोज की तरह वह अपनी चंचलता नहीं प्रकट कर पा रहा था। उदासी उसके चारो ओर विद्यमान थी। उसके चुटकुले और हँसी मजाक न जाने कहां गायब हो गये थे। वह काफी देर तक इसको महसूसती रही इस बोझिल वातावरण को और अन्त में पूछ हीं बैठी, 'बात क्या है अनु, कुछ उदास दिखते हो।'

'कुछ नहीं··कुछ ऐसे ही' अनिमेष लटपटा गया।

'तबियत नहीं है ठीक क्या' अरुणिमा ने दुबारा सवाल उछाल दी।

'तबियत को कुछ नहीं हुआ है।'

'फिर भी···'

कुछ देर खामोश रहकर अनिमेष दुःखित स्वरों में बोला। बोलना ही पड़ा उसे, 'आफिस के काम से दिल्ली जाना पड़ रहा है लगभग पांच छः दिन लग जायंगे। समझ में नहीं आता कि क्या करूं ? तुम्हें छोड़कर कैसे जाऊं और जाने का मन भी तो नहीं करता।'

'ओ·· ये बात है' अरुणिमा भी कुछ दुःखी दिखलाई पड़ने लगी। काफी देर तक खामोशी का आलम वहाँ विद्यमान रहा। अंधेरा हो गया था। चन्द्रमा आकाश में खिल गया था। उसके आस पास तारे भी अव्यवस्थित ढंग से विखरे पड़े थे। वातावरण एक अजीब सी उदासी लिए हुये था कि अचानक अरुणिमा की खिलखिलाहट ने वातावरण की बोझिलता को दूर कर दिया। अनिमेष चौंककर कुछ प्रश्नवाचक दृष्टि से अरुणिमा की ओर देखने लगा कि वह बोल पड़ी, अरे दिल्ली में ही तो मेरे मामा रहते हैं, बहुत दिनों से रहे हैं। यही मौका है। मैं भी चलूंगी।

अनिमेष के शरीर में जैसे खुशी की लहर दौड़ गई थी। वह काफी देर तक आगेके कार्यक्रमों पर विचार प्रकट करता रहा। फलस्वरूप अनिमेष और अरुणिमा साथ-साथ दिल्ली गये थे। वहां छः दिन रहकर वापस आ गए थे।

'ट्रिन-ट्रिन···ट्रिन-ट्रिन' किसी ने कालबेल को छेड़ा था। अरुणिमा चौंक कर खड़ी हो गई। उसने जाकर दरवाजा खोला। दरवाजे पर अनिमेष खड़ा मुस्कुरा रहा था। अनिमेष से नजर मिलते ही उसके शरीर में एक की एक ठंडी लहर समा गयी। अनिमेष कमरे में आते ही सोफे पर ढेर हो गया और काफी की फरमाईश करने लगा। अरुणिमा ने पहले वाली फुर्ती न दिखलाई। न कुछ बोली ही। भारी कदमो से वह किचन के अन्दर जाकर काफी बनाने लगी। एक प्याले में वह अनिमेष के लिए काफी लेकर आई।

'तुम नहीं लोगी' अनिमेष पूछ बैठा।

'नहीं···उसने धीरे किन्तु तीखे शब्दों में उत्तर दिया।

'अनिमेष चौंक पड़ा। आज तक के वैवाहिक जीवन में उसने अब तक अरुणिमा का ऐसा स्वर न सुना था। यह बात उसे चुभ गयी।

नाराज हो क्या डार्लिंग।'

'बोलती क्यों नहीं···हमसे नाराजगी कैसी' अनिमेष उससे लगातार पूछे जा रहा था।

'······' परन्तु अरुणिमा ने कोई उत्तर न दिया।

'कोई खास बात है क्या····जल्दी बताओ······क्या हो गया है। तुम्हें ? अनिमेष उसके पास आकर मृदु स्वरों में पूछने लगा। लेकिन अरुणिमा ने कोई उत्तर न दिया।

अनिमेष उसके हाथों को पकड़ कर सहलाने लगा। वह देर तक अरुणिमा का हाथ थामे रहा। अरुणिमा को भी यह अच्छा लग रहा था लेकिन वह अपना हाथ छुड़ा कर अन्दर चली गई अनिमेष टकटकी बाँधे ताकता ही रह गया। आवाज उसके मुंह से निकल न सकी। यह घटना उसके लिए अप्रत्याशित थी। उसने कभी सोचा भी न था कि ऐसा होगा······ऐसी नौबत आयगी।

दो - तीन दिन तक अरुणिमा अनिमेष से कुछ उखड़ी - उखड़ी सी रही। फिर उसने लखनऊ अपने अपने पिता के पास पत्र लिख दिया।

पत्र लिखने के छठे दिन ही ज्वाला बाबू भागते हुए आए। उनके आते ही अरुणिमा अपना सामान समेटने लगी। सामान सहेजने के बाद जब ज्वाला बाबू टैक्सी लेने के लिए गए

अतीत से.........

—अनूपकुमार घोष 'मासूम'

देख रहा हूं कि यह बालू के घरौंदो का मेरा अपना शहर कितना खामोश है। हर वक्त यहां के हर इंसान के मन में मौत का आतंक छाया रहता है ना जाने कब हवा चले और यह पूरा शहर उनकी चीख पुकार को अपने वक्ष में दबा कर धरती को समर्पित हो जाये। कैसा जीवन है इनका और इनका भविष्य तो......? क्या इनको इस लम्बी चौड़ी दुनियां में यही एक शहर मिला था जहां ये सब आश्रय लेने आ पहुंचे हैं। मेरी बात तो और है यह पूरा शहर तो मेरा है जिसे मैं छोड़ नहीं सकता हूं। आज तक जब मैं पक्के आलीशान मकानों में रहा करता था तब तक मेरी हर मनोकामना बालू के घरौंदो के समान थी इसलिए मैंने यह शहर चुना ताकि मुझे अपनी इच्छाओं के अनुरूप मौत जल्द मिल जाए पर मौत का इन्तजार करते करते आंख थक गयी है इस शहर में हवा नाम की कोई चीज ही नहीं आ रही है। अरे यह कैसा शोर गुल मच गया है जोर - जोर से हवा चलने लगी है। लोग भागो-भागो चीखते हुए दौड़ रहे हैं, पर मैं भागूँ ही क्यों मूझे तो इसी दिन का इन्तजार था एकाएक ऊपर की छत मेरे उपर गिरती है।

और मैं चीख कर उठ बैठता हूं सारा वदन पसीने से तर हो गया था उफ् क्या स्वप्न था। खर...खर...खर ऊपर का सिलिंग फैन घूम रहा था बाहर मालगाड़ियां सटिंग हो रही है। मैं बत्ती जला कर टाइम देखता हूं, पूरे दो बज रहे हैं। गाड़ी आने में अभी पूरा एक घंटा बचा है। ये मेरा अतीत फिर उस वर्तमान में लौटना चाह रहा है जिस वर्तमान में अब मेरा कुछ नहीं रह गया है सिवा मेरे सपने के और 'मैं' भी सिर्फ एक बालू के घरौंदे के समान हूं, कब मिट जाऊँगा कब टूट जाऊँगा इसका मुझे खुद कुछ अंदाजा नहीं हैं काश ऐसा अतीत मेरा ना होता तो......एक गुजरा हुआ और भूला हुआ सूरज जिसकी किरणें भले ही दूर से ठन्डक पहुंचाए पर पास आने पर शरीर को अपनी कठोर ताप से झुलसाती रहती है ऐसे अतीत को छूने तक कि इच्छा नहीं होती पर....पर मैं कर भी क्या सकता हूं आखिर मैं इसके बंधन में तो बंध ही चुका हूं।

वो दिन ! गाड़ी एक झटके के साथ बिजुरी स्टेशन में रुकी मैं अपना सूटकेस संभाल कर बड़ी तेजी से निकल गया और रिक्शे में बैठकर घर की ओर चल पड़ा। सोच रहा था कुछ भी हो आज पिताजी से फैसला करना ही है कि मैं अगर शादी करूंगा तो जूही से ! पूरे साल भर से पिताजी जूही से मेरी शादी की बात टालते आ रहे थे। और मैं चुपचाप सुनते आ रहा था ना जाने उनको जूही क्यों बुरी लगती है। अरे शादी तो मुझे करनी है जिन्दगी मुझे गुजारनी है फिर ये मां बाप। याद है मुझे वो दिन जिस दिन मां कितना रो रही थी।

—बेटा अजीत, तू क्यों हमसे अलग हो रहा है तू अभी और नौकरी कर प्रमोशन होजाय फिर तुझे जूही से लाख गुनी अच्छी लड़की से शादी कर देंगे तू ही सोच भला तेरी तीन सौ रुपये की नौकरी में जिन्दगी गुजर जायेगी।

--बहुत हो गया मां बहुत जो तुम लोगों ने पढ़ाया है जो मुझे आफिसर बनाना चाहती हो। कुछ हो मुझे उस जगह बहुत तकलीफ है और मैं शादी करूंगा इसी महीने वो भी जूही से ही भले ही ऐसा करने के लिए मुझे आप सब से अपना नाता तोड़ना पड़े।

—लड़कपना छोड़ दे बेटा, अभी तेरी पूरी उम्र पड़ी है। ये उम्र क्या शादी करने की है फिर तू ही सोच तेरे पिता के पांच सौ रुपये की नौकरी से क्या यह घर चल सकेगा। तेरा भाई इन्जीनियरिंग पढ़ लेगा उसके दो ही साल तो रह गये हैं उसे ही पढ़ाई खत्म कर लेने दे।

—मैंने किसी को पढ़ाने का ठेका तो नहीं ले रखा मां।

और उस दिन के बाद मेरा अपने एक भरे पूरे परिवार से नाता टूट गया सबसे मीलों दूर जाकर मैंने जूही से शादी कर लिया पर जो स्वप्न मैंने जूही से संजोये थे वो फिर कभी पूरे न हो सके। एक तो मेरा कम वेतन फिर दिन प्रतिदिन बढ़ती

हुई जूही की फैसन की मांगे पूरा करने पर भी उसका खीझ भरा व्यवहार मुझे तोड़ने लगता था बात बात में उसकी झिड़कियां । जब कुछ देने खिलाने के काबिल हीं नहीं थे तो फिर मुझसे शादी क्यों की" मेरे पुरुषत्त्व को चुनौती दिया करती थी। हार मानकर मुझे रिश्वत लेना पड़ा नौकरी ही कुछ ऐसी थी कि रिश्वत का धंधा चल निकला जो काम मैं दस बीस रुपये में कर दिया करता था उससे जूही मुझसे ऐसे मुंह फुलाती थी कि हफ्तों बातें नहीं होती थीं अन्ततोगत्वा मैं ऊंची रिश्वत लेने लगा और रंगे हाथों पकड़ा गया। मुकद्दमे चले मुकद्दमा जीतने के लिए मैंने काफी पैसा बहा दिया पर अन्त में मुझे पांच साल की कैद हो गयी क्योंकि मेरे पर कम्पनी में माल लों की हेरा फेरी करने का भी आरोप था।

पांच साल की कैद काटने के बाद जब मैं सेन्ट्रल जेल के बाहर निकला तो पूरी दुनियां मुझे बदली सी नजर आने लगी पता लगा कि जूही ने दूसरा घर बसा लिया है। रह रहकर मुझे अपनी माँ की कही बातें याद आने लगी और मैं यों ही पागलों जैसा भटकता रहा । काफी घूमने फिरने के बाद एक नये इन्जीनियर के वर्कशाप में छोटा-मोटा काम मिल गया उसी इन्जीनियर से पता चला कि वह मेरे भाई आशीश का क्लास फेलो हैऔर आज आशीस बम्बई में एक्जीक्यूटिव इंजीनियर है। यह सब सुनकर मुझे अपनी करनी और भाग्य पर इतना रोना आया कि हफ्तों मैं ठीक से सोन सका। मेरे माँ बाप भाई बहन सब कैसे होंगे क्या वे लोग मुझे अपना लेंगे पर···पर मुझे जाना चाहिए हो सकता है वे सब···। आखिर वे सब मेरे ही तो अपने हैं। ओह मां। काश मैं तेरीं बात मान लेता।

टन् टन् टन्। गाड़ी के लाइन क्लियर होने के संकेत से मेरी तन्द्रा टूटी और टिकिट घर की ओर बढ़ गया।

साब एक टिकिट बिजुरी का देना।

(पृष्ठ २१ का शेष)

तो अनिमेष कुछ पूछना चाहते हुए भी अरुणिमा से पूछ न सका। कुछ कहना चाहते हुए भी कह न सका।

टैक्सी आ जाने पर अरुणिमा और ज्वाला बाबू साथ - साथ बाहर की ओर जाने लगे। जाते वक्त ज्वाला बाबू ने अनिमेष को ऐसे नेत्रों से देखा कि उसकी रही-सही हिम्मत भी जवाब दे गई।

अरुणिमा बेमन से बाहर आई तो उसके कदमों में एक अजीब तरह की स्थिरता समाने लगी। ऐसा लग रहा था कि कोई उसके पैरों में ढेर सारा बोझ बांध दिया है। उसकी इच्छा हुई कि रुक जाय। कुछ डांवा-डोल स्थिति में अ.ई भी लेकिन फिर वह जाकर टैक्सी में लुढ़क गई। अचानक उसकी नजर टैक्सी के खिड़की के बाहर की ओर चली गई। बरामदे में अनिमेष खड़ा था। आंसुओं की पतली धारा शनैः शनैः उसके आंखों से प्रवाहित हो रही थी। उसके ओर देखती हुए अरुणिमा की आंखों से भी कुछ बहने लगा। टैक्सी स्टार्ट होकर आगे निकल गई तो उसने रूमाल निकाल आंसुओं को पोंछ डाला। दुःखी स्वरों में वह बोल पड़ी, "पापा······तलाक कब तक मिल जायेगा पापा ?"

'मिलेगा क्यों नहीं बेटी··जल्दी मिल जायेगा' ज्वाला बाबू बोले, "मैं तो उस घड़ी को कोस रहा हूं···जिसमें मैंने तुम्हारी शादी उस दुष्ट के साथ तय की थी।'

अरुणिमा के आंखों से फिर कुछ बहने लगा। अनिमेष के उपर यह दोषारोपण···अनिमेष से यह अलगाव क्या ठीक है ? और उत्तर में उसके मन ने कहा कि हाँ ठीक है। आखिर वह कर भी क्या सकती थी? अनिमेष यह सदमा सह सकता था ? नहीं··· कभी नहीं·······।

उसे अब फिर डा० सावरकर के शब्द याद आने लगे, "आप···आपका पूरा इन्टेस्टाइन खराब हो गया है। ये पेट का दर्द मामूली दर्द नहीं है··· ओफ्······फिर पांच या छः महीने की मेहमान है······वो भी दवा के भरोसे ···आनली फाइब मन्थ्स···आनेली ···फा···इ···ब···मन्थ्स···।

—०—

कहानी

जंजीर

—देव कुमार

सबकितना बदल चुका है। सारे अरमानों का खून कर दिया गया है और इच्छाओं की अंकुरों को समाज ने स्वार्थ के चट्टानों से मसल दिया है। सात दिनों के अन्तराल में मेरा जीवन बिल्कुल बदल चुका है। क्या मैं किसी से भय खाता हूं? बिल्कुल नहीं। मैंने कितने भीषण और क्रूर सामाजिक थपेड़ों का स्वागत खुले दिल से किया है। परन्तु आज सभी कुछ कहीं खो सा गया है। लगता है मेरे बुलन्द हौसलों, प्यारी इच्छाओं को समाज के ठेकेदारों ने सदा-सदा के लिए दफन कर दिया है। क्या सोचती होगी वह? उसके कोमल और मासूम भावनाओं को कितना बड़ा धक्का लगा होगा। क्या संभाल सकेगी वह, धक्के को? कितना उदास, विह्वल और असहाय होकर पूछा था—फिर कब मिलोगे।

मैंने किस साहस से दृढ़ता पूर्वक कहा था—"जल्द ही दो चार दिनों में आ जाऊंगा।' यदि देर हुई, तो टेलीग्राम दे दूंगा। पता नहीं मम्मी की तबियत कैसी और फिर मुझे टेलीग्राम का वह वाक्य मदर हास्पिटलाइज्ड। कम सून। दिमाग पर छाने लगा था।

ट्रेन ने ह्विस्सिल दी और मैं सुनीता से अलग हो गया। सुनीता की आंखों थे आंसू थे और वह रूमाल हिला रहीं थीं। फिर जल्द ही ट्रेनने दिल्ली स्टेशन छोड़दिया और सुनीता मेरे आंखो से ओझल हो गयी। पूरी यात्रा में, मैं अजीब-अजीब बातें सोचता रहा था। मम्मी कैसी होगी मुलाकात होगीभी या नहीं आदि-२।

घर पहुंचा। मम्मी खड़ी थी। मैं अवाक् हो मम्मी के पैर छुए। मम्मी हास्पिटल से कब आयी। अब कैसी हो! मैंने पूछा। जब कि स्वस्थता के सारे लक्षण उसके चेहरे पर स्पष्ट अंकित थे।

अब ठीक हूं। आज ही तो हास्पिटल से रिलीज हुई हूं। मम्मी का आवाज घड़घड़ाहट की लकीर को छूती हुई निकली।

मैं जुते और जुरावे उतारने लगा और मम्मी किचन की ओर चली गई डैडी अभी नहीं आये थे। वे रात्रि में आते हैं और फिर सुबह नेतागीरी करने निकल जाते हैं।

शाम का रंग ही कुछ और होता है। रात्रि और दिन का यह मिलन विन्दु है धीरे-धीरे प्रकाश अंधकार के दामन में समा जाता है। ठीक उसी तरह मेरे दिल ने कहा—तुम्हारे खुशी पर अब काली घटा मंडरा रही है। वह जल्द ही छाएगी।

कभी ये शामें कितनी रंगीनी विखेरती थी। परन्तु आज मुझे यह डंस रही थी। कभी शाम मेरी जिंदगी थी, परन्तु आज वही थी मौत जैसे कोई मित्र दुश्मन हो जाये।

मेरा बचपन यहीं बीता है। यह पीपल का वृक्ष नहीं मालूम, कितने वर्षो कहानी अपने पत्तों की खड़खड़ाहट के माध्यम से कहता रहता है। उसके नीचे बैठकर मैंने कितनी शान्ति प्राप्त की है। आज फिर वहीं बैठा हूं। लेकिन आज शान्ति कहां उन दिनों की यादें हीं अब रह गयी हैं। यहां पर बैठकर कितनी पेचीदी गुत्थियों का हल मैंने और जीतेन्द्र ने सुलझाये थे जितेन्द्र कितना प्यार करता था मुझे। ऐसे मित्र पर गर्व था मुझे। एक दिन उसने एकाएक कहा—देव, गांव का मोहन था न। मर गया।

कैसे? मुंह से एक ठंडी सांस निकली।

बम्बईमेंउसको एक लड़की से प्यार हो गया था। उसे उसने अपनाने का निश्चय किया था। वह घर आया और यह बात अपने पिता के सामने रक्खी। पिता बिगड़ गये। उन्होंने यह जान लिया था कि लड़की कायस्थ जाति की है। मोहन को फिर बम्बई नहीं जाने दिया गया। उसने शराब पीना शुरू कर दिया और आज उसकी मृत्यु हो गयी। डाक्टर पहले कह चुका था कि दोनों फेफड़ा बेकार हो चुका है।

पुरानी बातें मेरे जेहन में रेंगने लगी। मुझे लगा मेरी स्थिति ठीक मोहन की तरह हो गई है। काश! आज जितेन्द्र यहाँ होता। लेकिन जितेन्द्र अब यहाँ नहीं, वह तो इंगलैंड में है। कई वर्षों से भेंट भी नहीं हुई है।

मेरे पैर अनायास घर की ओर बढ़ने लगे और मैंने अपने को डैडी

शेष पृष्ठ ४ पर

भ्रम

बियावान में टेसू का अकेला पेड़ लहलहा उठा था । तपती दोपहरीमें मिट्टी की मटियारी और आकाशकी नीलिमा के बीच संघर्ष की पराकाष्ठा पर पहुंचकर टेसू मुस्कुरा रहा था ।

"धरती बेहाल है और आकाश की रंगत उड़ गई है लेकिन मैं............" टेसू ने अपने बारे में कुछ सोंचा ।

"तुमने अपने पास की नदी को कहाँ छिपा लिया" एक आवाज आई ।

उसने चौंक कर देखा । साये में खड़ा हिरन हांफ रहा था ।

'मैं पूछता हूं तुमने नदी को कहां छिपा लिया' हिरन ने अपना प्रश्न दुहराया ।

'तुमने जो नदी देखी है वह नदी नहीं उन्मादग्रस्त जीवों का छलावा है'

'और तुमने जो कहा वह एक अहंकारी की थोथी दलील' हिरन गुस्से में था ।

'तुम दोनों ही भ्रमित हो' टेसू के कुछ कहने से पहले ही अम्बर हँस पड़ा ।

अगस्त, १९७७

रजिस्ट्रेशन नं० आर० एन० २६६७४/७४

पोस्टल रजिस्ट्रेशन एल० डब्लू/एन० पी० १४७

मुद्रक प्रकाशक अवध किशोर पाठक द्वारा विश्वास प्रेस अमीनाबाद के लिए उत्तर प्रदेश सहकारी मुद्रणालय ८५, तिलपुरवा हुसेनगंज लखनऊ में मुद्रित एवं डी-२/२ पेपर मिल कालोनी लखनऊ-२२६००६ से प्रकाशित।

सामाजिक घोषणा
पर
युवा हस्ताक्षर

वर्ष–३ अंक–९ अक्टूबर, १९७७

बापू तुम्हें प्रणाम

मेरी बात की कोई कीमत नहीं

"आज देश में कई बातें चल रही हैं उनमें मेरा जरा सा भी हिस्सा नहीं है, यह मुझे जोर से कहना चाहिए। मैं कह चुका हूँ और यह कोई छुपी हुई बात नहीं है कि कॉंग्रेस ने जब से हुकूमत संभाली तब से उसने अहिंसा को तिलाञ्जलि दे दी है .... साफ बात तो यह है कि आज मेरी बात की कोई कीमत नहीं रही। मेरी बात आज अरण्य-रोदन जैसे हो गयी है।"

—गाँधी जी

(हरिजन २ नवम्बर १९४७)

सामाजिक घोषणा
पर
युवा हस्ताक्षर

वर्ष-३ अंक-९ अक्टूबर, १९७७

संरक्षक
श्री सत्य प्रकाश राणा

०

सम्पादक
अवध बैरागी

०

पत्रिका में उधृत विचार लेखकों के हैं उनसे सम्पादकीय सहमति अनिवार्य नहीं।

०

वार्षिक शुल्क—दस रुपये
एक प्रति—एक रुपया

०

सम्पादकीय कार्यालय :
डी-२/२ पेपर मिल कालोनी
लखनऊ-२२६ ००६

विषय-सूची

अनुगमन से पहले आत्मशुद्धि

राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी की जयन्ती तिथि आदर्श और आचार को अपने मन में स्थापित करने का दिन है। देश की आजादी के तीस वर्ष हो गये, लेकिन हमने इन तीस वर्षों में गाँधी जी तथा उनके सिद्धान्तों को भुलाया ही है, विश्वशान्ति के सबसे बड़े पुजारी तथा सत्य अहिंसा की भावना को जन-जन में भरने वाला हमारा राष्ट्रपिता केवल २ अक्टूबर और तीस जनवरी को भाषणों में दुहराये जाने की वस्तु रह गया है। गाँधी जी की उपेक्षा उनके जीवन काल में ही शुरु हो गयी थी, हरिजन पत्रमें समय-समय पर लिखे गये अपने लेखों में उन्होंने बड़े दुःख भरे शब्दों में लिखा है कि "अब मेरे बात की कोई कीमत नहीं"। 'महाजनो येन गतः स पन्था' के सिद्धान्तों पर चलने वाले हमारे देश ने निश्चित रुप से गांधी जी के आदर्शो को भुलाकर काफी कुछ खोया है। श्री जवाहर लाल नेहरु जीवन पर्यन्त कहते रहे कि "नैतिकता की दृष्टि से हम कहीं नहीं हैं"। जाहिर है कि सत्य अहिंसा के सिद्धान्त को जीवन में न उतारने तथा पराई पीर न समझने की वजह से ही हमारी नैतिकता प्रभावित हुई है और हमारे राष्ट्रीय चरित्र का उत्थान नही हो सका है। अब तक हमारे देश व जनता की रहनुमाई करने वालों ने धर्मभीरु रुढ़िग्रस्त और अशिक्षित जनता की भावनाओं को अपेक्षित तल्लीनता के साथ समझने की कभी कोशिश नहीं की। समाजवाद पर भाषण होते रहे और पुंजीवादी प्रवृति पनपती रही। चूंकि आम आदमी अखबार नहीं पढ़ता, रेडियो नहीं सुनपाता, टेलीफोन, टेलीविजन तो उसके लिए अचंभे से भरी कहानी है, इसलिये उससे वोट मांगने हेतु उसके पास जाना पड़ता है, इसके लिए साधनों की जरूरत पड़ती है और साधन पूंजी पति देता है और उसकी देहरी पर समाजवाद के सिद्धान्त चरमरा कर टूट जाते हैं। आजादी के तीस वर्ष बाद भी देश में अनेक गांव ऐसे हैं जहाँ एक आदमी हाथ में चिट्ठी लेकर बाँचने वाले की तलाश में घूमता रहता है। यह कितनी अजीब बात है कि देश के अशिक्षित लोग अपने अधिकारों से अनभिज्ञ हैं और शिक्षित बेरोजगारी के गिरफ्त में रोटी पानी की प्रत्यशा में जी रहे हैं, बेलछी जैसी बिभत्स कांड हो रहे हैं, और गाँधी जयन्ती पर उत्थान के आंकड़े प्रस्तुत किये जाते हैं सत्य और अहिंसा की बात की जाती है।

गांधी जी ने गीता से प्रभाव ग्रहण किया और रस्किन की पुस्तक 'अन टू दीस लास्ट' से प्रेरित हुये। हर अच्छाई को ग्रहण करके उसे अपने जीवन में उतारने कीवलवती आकांक्षा ने उन्हें महात्मा बना दिया। आज बुराई का आतंक इतना बढ़ गया है कि समय के संदर्भ में अहिंसा की बात गले नहीं उतरती। अपनी गोष्ठीं में लोकनायक को बुलाकर बिहार के विधायकों का आपस में एक दूसरे पर छीटाकसी और गाली गलौज करना और साथ ही शाह आयोग के सामने पुरुषों एवं महिलाओं के दिल दहला देने वाले बयान, आपत्काल में आचार्य विनोबा भावे के आश्रम की पुलिस द्वारा तलासी आदि कृत्य गाँधी के देश में गाधी के सिद्धान्तों पर प्रश्न चिन्ह लगाते हैं।

आदमी के व्यक्तित्व के निर्माण में बड़ों के आर्शीवाद, सम वयस्कों की शुभ कामनाएं और छोटों के प्यार का बहुत योगदान रहता है। किसी की उपेक्षा कर कोई आगे नहीं बढ़ सकता। आज जरूरत है इस बुनियादी सिद्धान्त को आत्मसात कर मन की सफाई करने की। यही राष्ट्र पिता के प्रति हमारी सबसे बड़ी श्रद्धाञ्जलि होगी।

समाज और युवा पीढ़ी

—इन्दू मायर

समाज मनुष्यों का समूह नहीं बल्कि सम्बन्धों की एक व्यवस्था है। प्रत्येक व्यक्ति अपनो विभिन्न आवश्यकताओं और मूल-प्रवृत्तियों के कारण जिन अनेक सम्बधों का निर्माण करता है, उन सम्बम्धों की व्यवस्था का नाम समाज है। इससे यह स्पष्ट होता है कि समाज को देखा या स्पर्श नहीं किया जा सकता बल्कि इसका अनुभव किया जा सकता है।

सामाजिक सम्बन्ध ही मनुष्य को एक जैवकीय प्राणी से सामाजिक प्राणी बनाते हैं और यही सम्बन्ध विभिन्न वर्गों का निर्माण करके उनमें सहयोग के भाव उत्पन्न करते हैं। ये सम्बन्ध ही व्यक्ति की योग्यता और कुशलता के आधार पर उसे सामाजिक व्यवस्था में विशेष स्थिति प्रदान करते हैं।

हमारा सम्पूर्ण समाज केवल दो प्रमुख सामाजिक प्रक्रियाओं से ही प्रभावित है–सहयोग और संघर्ष। सहयोगी सम्बंध समाज में संगठन की स्थापना और संघर्ष पूर्ण सम्बन्ध समाज में उत्पन्न होने वाली बुराईयों को समाप्त करते की प्रेरणा देते हैं। समाज के अन्तर्गत प्रत्येक समूह, समिति, समुदाय और वर्ग इन्हीं दो प्रकारों के सम्बन्ध से प्रभावित रहते हैं।

व्यक्ति ही समाज की ईकाई है। अतः समाज का भी मनुष्य के प्रति कुछ कर्तव्य है। आज मनुष्यों की स्थिति बिगड़ती चली जा रही है। वे गलत पथ पर अग्रसर होते जा रहे हैं इसका सारा दायित्व समाज पर ही है अतः समाज को चाहिये वह उच्च शिक्षा दे। पहले के हाईस्कूल पास व्यक्ति आज के बी० ए० पास व्यक्ति से अधिक बुद्धिमान है। इसका एक मात्र कारण है कि आज का समाज उन छात्र और छात्राओं को उच्च एवं व्यवहारिक शिक्षा नहीं देता है। आज के समाज का कर्त्तव्य है कि सब प्रकार के व्यक्ति की सहायता करे चाहे वह धार्मिक हो अथवा राजनैतिक। आज के समस्त व्यक्तियों से ही कल का समाज बनेगा और व्यक्ति समाज के दायित्व को अपने कंधे पर लेगा। अतः कल के समाज को अच्छा बनाने के लिये यह आवश्यक है कि आज का समाज व्यक्ति के प्रति अपना कर्त्तव्य निभाये।

व्यक्ति का विशेष रूप से युवा पीढ़ी का भी समाज के प्रति दायित्व है लेकिन आज की युवा पीढ़ी अपनी प्राचीन संस्कृति और सभ्यता को कदम-कदम पर चुनौती दे रही है और वह अपना तथा समाज का भला बुरा देखे बिना पश्चिमी सभ्यता की ओर भाग रही है। आज उनमें एक प्रकार की आपस में होड़ सी लग गयी है तथा वह समाज की ओर बिना ध्यान दिये दिग्भ्रमित सी चली जा रही है। आज की युवा पीढ़ी प्राचीनता को स्वीकार करने के लिये तैयार नहीं है। उन नियमों को मानने के लिये तैयार नहीं है। लेकिन यह विचार गलत है। आज की युवा पीढ़ी सामाजिक जीवन के मूल्यों और मान्यताओं के उलझाव में पड़ गयी है। हमारी प्राचीन संस्कृति सभ्यता के पाँव डगमगाने लगे हैं। आधुनिकता एक चुनौती बन गयी है और यह चुनौती पश्चिम की विभिन्न संस्कृतियों और सभ्यता के आधार से मिली है और इसी आधुनिकता के कारण समाज में व्यापक परिवर्तन हो रहा है। आज की युवा पीढ़ी में अपने को आधुनिक बनाने की चाह है। आज आधुनिकता फैशन का पर्याय बन चुकी है। सभी इस तमाशे में सम्मिलित होना चाहते हैं अनुकरण के आधार पर आधुनिकता का प्रदर्शन बढ़ता जा रहा है। स्पष्ट है कि लड़का हो अथवा लड़की, छात्र हो छात्रा, सब आधुनिकता से बुरी तरह आक्रान्त हैं।

आज की युवा पीढ़ी कुछ चमत्कार करना चाहती है। विद्रोह करने की यह सनक युवा वर्ग में अच्छी तरह

बैठ गयी है और यही कारण है कि आज की शिक्षित युवा पीढ़ी के सामने भविष्य की कोई स्पष्ट रेखा नहीं है। इसलिए वह चिंतित और कुंठाग्रस्त है।

युवा पीढ़ी स्वतन्त्रता चाहती है। व्यर्थ के बन्धनों से मुक्त होना चाहती है। यह एक महत्वपूर्ण दृष्टिकोण है प्रगति का चिह्न है। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि हम उन सामाजिक जीवन के सभी नियमों, अनुशासनों, सिद्धान्तों को तोड़ डाले। हम रूढ़ियाँ तोड़ें, अंध-विश्वासों को छोड़े, निरर्थक बातों का त्याग करें। युग के अनुसार त्रुटियों को दूर करें। ताकि परम्परायें हमारे समाज की प्रगति में बाधा न डालें। हमारी युवा पीढ़ी के अन्दर जो नवीन उत्साह, बल तथा साहस है उसे विद्रोह तथा आन्दोलन में नष्ट न करें, समाज की सम्पत्ति नष्ट कर समाज का कलंक न बनें। उसे अपनी शक्ति को रचनात्मक कार्यों में लगाना चाहिए। उसी से समाज और देश की उन्नति होगी। आज के बदलते सन्दर्भ में यह अत्यन्त आवश्यक है कि व्यक्ति और समाज के बीच इस बात के लिए स्पष्ट समझौता हो कि समय के साथ-साथ अपेक्षित बदलाव को समाज स्वीकार करेगा और व्यक्ति परम्परा को सम्पूर्णता में परित्याग करने की बात नहीं सोचेगा।

वतमान की विशेषता और भविष्य की सुखद सम्भावना दोनों ही युवा पीढ़ी के कृत्य पर आधृत हैं, इसलिए युवा पीढ़ी की भावना का अनादर कर नव-निर्माण की कल्पना नहीं की जा सकती।

इन्दू मायर

०

(पृष्ठ २४ से आगे)

उस दिन बड़ा भाई नया माल लाया था। ग्राहकों की भीड़ थी। छोटा जोर-जोर से आवाज लगा रहा था बड़ा मन ही मन हिसाब लगा रहा था कि इस लाट में अच्छे पैसे बचेंगे। इस बार वह छोटे भाई के लिये नयी स्कूल ड्रेस बनवाना चाहता था। वह सोच रहा था कि मां को इस बार ज्यादा रुपये देने चाहिये, कि अचानक चौक की तरफ से एक शोर उभरा

यह शोर उस शोर से भिन्न था जिसके वे अभ्यस्त थे, झाबे टोकरे उठा-उठाकर सब दौड़ रहे थे। वो दोनों औरतों से घिरे बिक्री में व्यस्त थे। एक ट्रक रुका। उसमें से दस पन्द्रह आदमी धम-धम करते हुए कूदे। रामली और अन्य सब्जी वालों की सब्जियाँ उन लोगों ने ट्रक में डालनी शुरु कर दी। बाजार में तहलका और सन्नाटा एक साथ थे। रामली बेचारी असहाय औरत परमात्मा को कोस रही थी।

एक आदमी की निगाह इन पर भी पड़ी। उसने ट्रक में ड्राइवर की बगल में बैठे, काला चश्मा चढ़ाए आदमीनुमा अफसर की ओर देखा। पहले ने खरखराती आवाज में कहा—डालो ट्रक में, फिर आवाज आयी—तोड़ दो।

और दस पन्द्रह जोड़े बूट उन चटकीं प्लेटों हैन्डल टूटे कपों पर चढ़ गये। हमेशा रौब मे बात करने वाला छोटा भाई सहमा सा एक ओर खड़ा था। बड़ा भाई दौड़-दौड़ कर हाथ जोड़ रहा था, मिमिया रहा था। उसकी आवाज कप प्लेटों से टूटने की आवाज में डूब जाती थी।

ट्रक चला गया। दोनों भाई उस ठीकरों के ढेर में से छाँट रहे थे ऐसे कप प्लेट जो शायद अभी भी बिक सकें।

अहिंसक क्रान्ति और बापू

—श्रीकांत पाण्डेय

"मेरा रास्ता क्रान्तिकारियों के रास्ते से बिल्कुल ही अलग है। इस देश की स्वतंत्रता मेरे विचारों से अहिंसात्मक आंदोलन द्वारा ही संभव है। मैं क्रान्तिकारियों के उत्कट देश प्रेम की प्रशंसा करता हूँ किन्तु उनकी नीतियों का मैं विरोधी हूँ।"

—गान्धी

गांधी जी और उनकी अहिंसक क्रान्ति के संबंध से पहले हमें अहिंसक क्रान्वि का अर्थ समझना होगा। अहिंसा की परिभाषा अलग-अलग दी गई है। अहिंसा की विवेचना करते हुए प्रख्यात सर्वोदयी दादा धर्माधिकारी लिखते है :

"जो यह समझते हैं कि खून बहाये बिना क्रान्ति नहीं हो सकती वे सचमुच क्रान्तिकारी हैं ही नहीं। उनके सामने ध्येय क्रान्ति का नहीं परन्तु वर्तमान सुखी और दुखी लोगों के स्थानों की अदला-बदली करने का है। क्या यह क्रान्ति है ?"

गांधी ने अहिंसा की व्याख्या करते हुए अनेक बार कहा कि किसी को लूटने अथवा अनुचित कार्य करवाने के लिये कोई मनुष्य दरवाजे पर अड़कर अनशन शुरू कर दे तब इसे अहिंस नहीं कहा जायेगा। बुद्धिजीवियों के एक वर्ग ने अहिंसा को कायरता एवं दुर्बलपन की संज्ञा दी है। बापू ने एक श्रेष्ठ उदाहरण पेश-कर उनके इस भ्रम को दूर किया। उन्होंने समझाया जिस व्यक्ति को मरने से डर लगता है तथा जो किसी भी प्रकार के अवरोध का सामना तो दूर उसे सहन भी नहीं कर सकता है उसे अहिंसा की शिक्षा देने में बुद्धिमानी नहीं है। एक निर्बल चूहा इसलिये अहिंसक नहीं हो जाता है कि बिल्ली उसका हमेशा ही भक्षण करती है। उसका वस नहीं चलता नहीं तो वह बिल्ली को कच्चा ही चबा जाय। वह हमेशा भागने की कोशिश करता है मात्र इसलिए हम उसे कायर नहीं कह सकते क्योंकि वह इससे अच्छा आचरण न करने के लिए बाध्य है। पर संकट की स्थिति में चूहा सा व्यवहार आदमी को कायर बना देता है।

गांधी जी "शौर्य की आत्मनैतिकता को ही अहिंसा" कहते थे। अहिंसा का सिद्धांत आज का नहीं बरसों पुराना है। आदि काल से लेकर आज तक इसे मनीषियों ने स्वीकार किया है। बुद्ध, अशोक, ईसा, कबीर सभी अहिंसा से किसी न किसी तरह संबद्ध हैं। बापू ने इस सिद्धांत को नया रूप दिया है। वे कर्म, वचन तथा मत से भी अहिंसा वादी थे। अहिंसा में सर्वोच्च जीवित एवं ईश्वरीय शक्ति है। बलवान तथा शक्ति संपन्न होकर भी शक्ति का प्रयोग न करना ही अहिंसा है। गांधी की अहिंसा हिंसा से कहीं ज्यादा मजबूत थी। उनकी क्रान्ति में कमजोरी को कोई स्थान न था।

गाँधी ने एक ओर जहाँ अहिंसा का प्रयोग सिखाया दूसरी ओर वे कायरता से परतंत्र होने के बजाय हिंसा से स्वतंत्रता पंसद करते थे। उन्होंने हमेशा ऐसा करने की सलाह दी। गांधी की अहिंसा मर मिटने की सलाह देती थी। उनकी अहिंसा का सिद्धांत था जब तुम्हारे पास मर मिटने की शक्ति हो दुश्मन का मुकाबला करो।

बापू के अपने स्वयं के शब्दों में "अहिंसा का मार्ग तलवार की ऐसी धार पर चलना है कि जरा भी गफलत हुई कि नीचे गिरे" गांधीजी ने सच्चे अहिंसावादी की तरह एक ओर अन्याय को सहन नहीं किया और दूसरी ओर हमेशा अत्याचारी को महत्व हीन समझा।

बापू की नीतियों उनके विचारों

(शेप पृष्ठ ९ पर)

कहानी

संदेह दंश

—प्रमोद सिन्हा

उसने कमरे में आते ही शीशे के दो कीमती फूलदान पटक कर तोड़ डाले। फिर थोड़ी देर कमरे में ही चहल कदमी करता रहा। बार-बार वह दायें हाथ से अपनी बायें हथेली पर मुक्का मारता। कुछ देर बाद उसने सामने मेज पर पड़ी ब्लेड उठायी और अपने मामाजी के वह कपड़े जो दीवार पर टंगे थे, जगह-जगह से काट डाला। दरअसल आज वह बेहद गुस्से में था। बात कोई बहुत बड़ी न थी परन्तु अत्यधिक भावुक और संवेदशील हृदय का होने के कारण वह जरूरत से अधिक परेशान था। पसीने से लथपथ वह कुर्सी में धँस गया। अचानक उसका अतीत सजीव हो उठा। वह सोचने लगा····

आज से मात्र तीन साल पहले जब मैं गोरखपुर में था, तो मंजु····या मंजिला····नाम भी ठीक से याद नहीं····को लेकर मुझे बदनाम किया गया था। मेरे हमउम्र लड़के यदि ऐसा करते तो कोई बात भी थी परन्तु ये चर्चे तो मुझसे बड़े और समझदार कहे जाने वालों की जुबान पर थी। मैं दसवीं कक्षा का विद्यार्थी था। मैं तो उसे ······मंजु या मंजिला······को जानता तक न था। उससे कभी बात तक नहीं की। उसका और मेरा रास्ता एक ही था। स्कूल से लौटते समय मुझसे कुछ कदम आगे या पीछे वह भी होती।······ मुहल्ले के कुछ शरीफ लोगों के कान भरने एवं अपने बुद्धिजीवी पिता की कृपा से मैं यहां यानि लखनऊ भेज दिया गया। यहां मेरी नानीजी एवं मामाजी रहते हैं। मामाजी मुझसे सिर्फ एक वर्ष बड़े हैं, अतः मैं शीघ्र ही उनसे घुलमिल गया। इस वर्ष मैं बी०एस०सी० प्रथम वर्ष का छात्र हूँ एवं मामाजी बी०ए० फाइनल वर्ष के। तब से आज तक सिर्फ तीन वर्ष का फासला रहा। परन्तु इन तीन वर्षों में ही मैं बहुत कुछ जान गया हूँ। कुछ मेरे मित्रों की देन है और कुछ मेरे हम उम्र मामाजी की। किन्तु छींटा कसी एवं लड़कियों के पीछे सीटी बजाना···जैसी महत्त्वपूर्ण बातों की आदत डालने में मेरे यार लोग और आदरणीय मामाजी असफल रहे। खैर·········

यहां आकर मैंने ग्यारहवीं कक्षा में प्रवेश लिया और अध्ययन-रत हो गया। जिस मकान में हम लोग रहते थे उसका एक भाग खाली था, जिसमें कुछ ही दिनों बाद एक नवदम्पति रहने लगे। धीरे-धीरे परिचय बढ़ा और मैं उन्हें अंकल और आण्टी का सम्बोधन देने लगा था। आण्टी अभी बहुत कम उम्र की थीं। सम्भवतः २० या २२ वर्ष की थीं। उनके दो वर्ष का छोटा बच्चा भी था। हमारे और उनके बाथरूम के बीच एक कामन दीबार है—जो छत से तीन फुट नीचे है—और जो मेरे लिए मुसीबत बन गयी। क्यों नहीं मैं जाकर साफ-साफ कह देता कि अंकल आप मुझे गलत समझ रहे हैं? अरे नहीं! ये तो और बड़ी बेवकूफी होगी। जब मैं निर्दोष हूँ तो सफाई देने की क्या आवश्यकता। मामाजी भी बिल्कुल ······उफ्। क्या पड़ी थी उन्हें ताक-झांक करने की। नहीं······नहीं-नहीं मामू की क्या गलती। गलती तो मेरी है। परन्तु नहीं······मैं भी गलत कैसे हो सकता हूँ। मैं कमजोर भले ही होऊँ क्योंकि अपनी भावमाओं पर नियंत्रण नहीं रख सका। ओफ्फ! रख भी कैसे सकता था। आण्टी लगती इतनी हीअच्छीथीं। मैं ही तो किसी न किसी बहाने उनके समीप जाता। कभी उनके इकलौते बेटे को खिलाता, पुचकारता। कभी आण्टी से पूछता—"अंकल कब तक आयेंगे?" वह हँस कर कहतीं,—"तुम रोज ही पूछते हो? देखते नहीं रोज ५ या ६ तक आते हैं?" और मैं झेंप जाता वास्तव में मैं उन्हें प्रेम करता था··· पवित्र प्रेम, जिसमें वासना की बू लेश मात्र भी न थी। मैं उनके निकट रहना चाहता था। मुझे याद नहीं कि कितनी ही बार मैं उनकी गोद में लेट जाता और वह मेरे बाल सहलाते हुए कहतीं,—"पुनीत! अब तुम बच्चे नहीं हो जो मेरी गोद में सोओ।" मैं हँसकर टाल देता,—"और क्या मैं बूढ़ा हूँ?" कभी-कभी ऐसा भी होता कि अंकल को आफिस भेजने एवं बच्चे को सुलाने के पश्चात

काम-काज से थक कर वह भी सो जातीं। मैं चुपके से जाता और आंटी की बड़ी-बड़ी पलकों और माथों को चूम लेता। वह चौंककर उठ बैठतीं- और कहती—"ये क्या पुनीत! ये गन्दी हरकत नहीं किया करो।"

"किसी को प्यार से चूमना क्या गन्दी बात है ?"—मैं कहता। "ओफ्फ! मैं तुम्हें कैसे समझाऊँ ?" —कहकर वह एक विवशता भरी मुस्कान बिखेर देतीं। समय धीरे-धीरे अपने मार्ग पर चलता रहा। मैं अब १२ वीं कक्षा का विद्यार्थी था। मेरी अनुभूतियों ने मेरी मानसिकता को कुछ और ऊँचा स्तर दिया। मैंने सामाजिक बंधनों को समझा। प्रेम की सीमा एवं उसकी विवशताओं को परखा। और तब··· मुझे लगा था कि आण्टी के हृदय में भी ढ़ेर सारे जख्म दवे पड़े हैं······जैसे राख के पर्त के नीचे अंगारे। मैंने कई बार उन्हें एकान्त में रोते हुये देखा। मेरे व्यवहार में भी काफी परिवर्तन हो गया था। कभी-कभी अंकल आफिस के कार्य से एकाध हफ्ते के लिये किसी दूसरे शहर चले जाते तो आंटी दो-एक रोज में ही काफी बोर हो जातीं। मैं उन्हें किसी पार्क या गोमती के किनारे ले जाता। वहां घंटों बैठकर हम अपना दुख-सुख एक दूसरे से कहते। कभी-कभी तो वह अपने आंतरिक असंतुष्टि के कारण भावावेष में रोने लगतीं। राख की पर्त उघड़ जाते और अंगारे उन्हें तपाने लगते। वह अपना सर मेरे कन्धों पर टेक देतीं। मैं धीरे-धीरे उनकी पीठ सहलाता और उन्हें सान्त्वना देता। फिर हम लोग एक दूसरे का हाथ थामें घर लौट आते फिर वही मधुर-मुस्कान उनके होठों पर थिरकती। और फिर मैं अपने अध्ययन में व्यस्त हो जाता।

उस दिन भावावेश में आकर वह कुछ तोड़-फोड़ करतीं कि मैंने उनका हाथ थाम लिया। उसी समय अंकल आ गये। उन्होंने कुछ कहा तो नहीं परन्तु संदेह के अंकुर उनके मन में उग आये थे। अजीब परम्परा है समाज की। कितना स्वार्थी और कमीनी हो गयी है दुनियां। किसी के बढ़े हुए बाल देखकर उच्चका कह दिया। फटे कपड़े देखकर उसकी गरीबी पर हँस दिया। बाहरी आवरण देख किसी के व्यक्तित्व को परिभाषित कर देना कहां की बुद्धिमता हैं? कोई किसी को समझने का प्रयत्न नहीं करता। कोई किसी के हृदय में झांकने की कोशिश नहीं करता। उफ्······किसे क्या कहूँ ? सब तो सब, मेरे पिता······मेरे······ अपने पिता को मुझ पर······अपने सगे बेटे······अपने खून पर विश्वास नहीं। वह भी मुझे आवारा और बदमाश समझते हैं। न जाने अपना कर्त्तव्य समझकर या मुझ पर दया करके कुछ रूपये भेज देते हैं कि एकाध प्राईवेट ट्यूशन करके मैं पढ़ सकूँ और किसी प्रकार अपना तन ढक सकूँ।

और उस दिन······जब मैं पेपर लिए हुये 'आण्टी-अंकल चिल्लाता हुआ उन्हें यों खुशखबरी सुनाने गया था कि मैंने इण्टर की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की है। आण्टी ने तो दबे-दबे से स्वर में मुझे बधाई भी दी थी परन्तु संदेह पीड़ित अंकल ने मुझसे घृणा के कारण मेरी ओर देखा तक नही। मैं अपना सा मुँह लिये अपने कमरे में लौट आया था। मेरी सारी खुशी जैसे निराशाओं के श्मशान में दफन कर दी गयी थी। मुझे अपने आप से नफरत हो आयी थी। तब से अभी तक मैंने उनसे बात-चीत नहीं की थी। आज से दो हफ्ते पूर्व मामू अपने बाथरूम में नहा रहे थे दूसरी ओर आण्टी भी अपने बाथरूम में नहा रहीं थीं। न जानें क्यों मामू ने उधर झाँक कर देखा और आण्टी को अर्धनग्न अवस्था में देखकर तुरंत ही बाथरूम से बाहर आ गये। परंतु आण्टी की नजर उन पर पड़ चुकी थी। सीधे-सादे विचारों की महिला आण्टी ने संकोचवश अंकल से केवल दीवार ऊँचों करवाने के लिये कहा होगा। तभी तो अंकल ने ऊँची आवाज में कहा था —"हाँ-हां! दीवार तो ऊँची होनी ही चाहिये। यह लड़का लगता ही ऐसा है।" और मैं सहम गया था। बाद में मामू को मैंने बहुत फटकारा था और उन्होंने अपनी गलती भी मान ली थी। परन्तु अंकल के हृदय में मेरे प्रति पल रहे संदेह को कौन दूर करता।······ और आज मैं बाथरूम में गया ही था कि अंकल का स्वर सुनाई दिया। वह अपने नये नौकर

से कह रहे थे—"श्यामू जरा देख तो बगल के बाथरूम में कोई है तो नहीं।" शायद दूसरी ओर आण्टी अपने बाथरूम में नहा रहीं थी। बदनामी के भय से मैं काँप गया। मैं हाथ-मुंह धोये बगैर ही अपने कमरे में आ गया......

अचानक अंकल का स्वर सुन वह चौंक पड़ा। उसके विचारों की कड़ियाँ बिखर गयीं। अंकल किसी से कह रहे थे—"आजकल के लड़के बड़े बदतमीज हो गये हैं। सोच रहा हूँ बाथरूम की दीवार छत से मिलवा दूं।" उसे लगा जैसे किसी ने उसके कानों में पिघला हुआ गर्म शीसा उड़ेल दिया हो। वह कुर्सी से उठकर बिस्तर पर लेट गया और शून्य में ताकने लगा। न जान कब उसे नींद आ गयी। उसे पता भी न चला कि कब बाथरूम की दीवार जुड़ीं और कब शाम का धुँधलका चुपके से कमरे में आकर विस्तृत होने लगा।

वह उठा तब जब घड़ी ने रात्रि के ८ बजने की सूचना दी। वह उठा और बोझिल कदमों से हाथ-मुँहधोने के लिए ज्यों ही बाथरूम में घुसा उसकी नजर ताजी जुड़ी हुयी दीवार पर पड़ी। उसे लगा कि अंकल के मन में लगा हुआ सदेह का अंकुर बरगद की तरह विशाल वृक्ष में परिणित हो गया है-और समाज एवं संसार का एक-एक प्राणी उसे संदेह की दृष्टि से देख रहा है। वह तुरंत अपने कमरे में लौट आया। आण्टी और अंकल की तस्वीर जो उसने अपने कमरे की मेज पर सजा रखी थी उसे उठाकर फेंक दिया।

और दूसरे दिन सुबह नानीजी रो-रोकर बेहाल हो रही थीं। मामाजी भी आँखों में आँसू भरे इधर-उधर दौड़ रहे थे। परन्तु पुनीत का कहीं अता-पता नहीं था। इसके बाद उसे आज तक किसी ने नहीं देखा।

सपना

—दीपक प्रकाश

वेदना से उत्पीड़ित दिल की स्थिति को भोक्ता के अलावा दूसरा कोई क्या जाने ! दिल में कितना दर्द रहता है, कितनी छटपटाहट रहती है, चेहरे पर कितने उतार चढ़ाव आते हैं, निर्दोष आँखे कहाँ-कहाँ भटकती हैं वही 'सबकुछ' महसूस करता है जिसपर गुजरता है। ऐन मौके पर उसका मन निर्जन स्थान जहां कोलाहल का तनिक भी आभास नहीं होता जहाँ आदमी की पदचाप भी नही सुनाई पड़ती है जाने को लालायित रहता है। वहीं उसके मन को कुछ राहत मिलती है। कुछ शांति मिलती है। नीरज के दिल में वेदना का सागर लहरा रहा है। उसके चेहरे पर वेदना की रेखाएँ जब तब उभरती मिटती रहती हैं, आंखों में रेगिस्तानी शून्यता छायी रहती है। वह हमेशा अपने को अकेला महसूस करता है। जब निराशा चरम सीमा पर पहुँच जाती है, तब वह घर से दूर गंगा के किनारे एक चट्टान पर बैठ जाता है और घंटों बैठा रहता है। गंगा के साथ उसे आत्मीयता है। दिल के जख्म को सुखाने का यही एकमात्र स्थान चुना है उसने।

आज कानपुर से तरुण की चिट्ठी आयी है। बचपन में तरुण बाढ़ में ही नीरज के साथ तालिमपुर स्कूल में पढ़ता था। दोनों में दाँत कटी रोटी थी। परन्तु मैट्रिक की छमाही परीक्षा होते-होते तरुण के पिता की बदली कानपुर हो गयी। आजकल वह वहीं एक कालेज में पढ़ रहा है।

तरुण नीरज की सपना के बारे में भी जानता था। पत्र-व्यवहार में कभी-कभी सपना का हालचाल पूछ लेता था और मजाक के एक दो वाक्य लिख देता था। नीरज खुशी-खुशी जवाब में उसका हालचाल लिखता था। परन्तु आज कई महीनों के बाद तरुण ने सपना की कुशल पूछी तो नीरज के चेहरे का रंग एका-एक उड़ गया। सूखा हुआ जख्म फिर से हरा होने लगा। वह अतीत को यादकर तड़पने लगा। उसकी यह तड़पन कभी-कभी आँसू में बदल कर गाल के बीच से पटरी बनाती हुई जेब में इकट्ठा होने का विफल प्रयास करती पर .....तभी वह गंगा की ओर चल पड़ा जाने पहचाने पत्थर के नजदीक पहुँचा और विचारों की दुनियां में खोता ही चला गया.........

"तरुण तुम्हे क्या पता कि नियति ने मेरे साथ कैसा क्रूर मजाक किया हैं" गंगा के शान्त पानी को अपनी उदास दृष्टि से देखते हुए बड़बड़ाया।

"शायद नियति को भी हम दोनों का प्रेम वरदाश्त नहीं हो पाया और......।" उसका हृदय वेदना से भर गया। शब्द उमड़ घुमड़कर हृदय में ही रह गये।

"तरुण तुम्हे उसके बारे में नहीं पूछना चाहिए था। यदि तुम्हे पता नहीं हैं तो कोई बात नहीं पर अब तुम यही जान लो कि मेरी सपना अब मेरे लिए सपना ही है.....नहीं ......नहीं......अब भी उसकी मासूमयत मुझसे प्यार........।" वह झुंझला उठा उसे अपनी स्थिति पर

(पृष्ठ ५ से आगे)

से हम भटक गये थे। हमें विश्वास है राजघाट पर उनके नाम की कसम हमारा पथ प्रदर्शन करेगी। गांधीजी आज नहीं हैं, लेकिन उनके विचार हमें हमेशा उस भारत के निर्माण में सहायता देंगे जिसे आदि काल में रामराज्य कहा गया था। महात्माजी को अपने विचारों पर कितना विश्वास था इसी विचार से पता चलता है :

"अगर मैं अपनी मृत्यु के बाद यह जान सकूं कि मैं जिस आदर्श और जिन विचारों के पक्ष में था वे एक सम्प्रदाय के रूप में विकृत हो गये हैं, तो मैं दुखी होऊंगा"।

घृणा होने लगी। उसे लगा कोई दिल को कचोट रहा है। आज गंगा के नीरव वातावरण में भी उसे मन नहीं लग रहा है। उसने अब दोनों हाथों की ऊँगलियों को एक दूसरे में फँसाया और विपरीत दिशा की ओर ताना। सभी उँगलियाँ कट्-कट् की आवाज से बज उठीं। फिर पत्थर पर से उठकर खड़ा हो गया। बगल में रखे हुए चप्पल को पहनकर चलने लगा पर न जाने क्यों लौटकर पुनः बैठ गया। उसकी इस हरकत से साफ जाहिर हो रहा है कि उसके मस्तिष्क में भावनाएँ तरंगित हो रहीं हैं इसका एक मात्र कारण तरुण की चिट्ठी ही तो है।

अच्छी तरह से बैठकर उंगलियों के नाखून से पत्थर पर बने गढ्ढ़ों को और अधिक गहरा करने के प्रयास में खुरचने लगा। इसी बीच डूबते हुए सूर्य की रक्त-रंजित किरणें उसके चेहरे को चूमने लगी। उसे यह अच्छा नहीं लगा। उसने सूर्य की ओर से दृष्टि हटाकर पानी की लहरों पर टिका ली।

उस दिन बड़े उत्साह से उसने उसका पत्र खोला, लिखा था—"नीरज मैंने तुमसे अनेकों बार मिलना चाहा परन्तु न जाने क्यों; तुम्हें देखते ही एक अज्ञात भय का आभास होने लगता है। तुम्हारी आखों में सम्मोहन शक्ति है। इसी नर्गिसी आँखों को नजदीक से देखने की इच्छा है। मैं तुमसे········।" इतना ही तो उस समय पढ़ पाया था उसने। उसके बाद घर आकर तन्मयतापूर्वक एक-एक शब्द को चबा-चबाकर पचाता हुआ न जाने कितनी बार पढ़ा था। ········कितनी तत्परता के साथ रात को दो बजे तक जाग कर पत्र का जवाब लिखा था······उसे सब याद आ रहा है। पत्र का अनेकों बार उसने संशोधन किया था, अनेक बार व्याकरण सम्बन्धी गलतियों को पूरा किया था, अनेकों बार पढ़ा था ताकि एक भी गलती रह न जाय। शुद्ध एवं लच्छेदार भाषा में लिखने के कारण ही तो दो बज गये थे।

यह सब सोचते ही उसके ओठों पर मुस्कान थिरकने लगी। उसे ऐसा आभाष होने लगा कि सपना उसके बगल में बैठी हुई है। इसी बीच उसके मस्तिष्क में एक झटका लगा ········वह सपनों की रंगीन दुनियां से हटकर यथार्थ की पृष्ठभूमि पर आया।

होनी को कोई नहीं टाल सकता। भविष्य में इंसान के साथ परिस्थिति किस तरह पेश आयेगी, कहना मुश्किल है। इंसान के न जाने कितने सुनहले सपने भविष्य के गर्त में चले जाते हैं। कुछ इसी तरह की परिस्थिति ने नीरज के साथ क्रूर मजाक किया—ख्वाबों के ताजमहल को डुबो कर।

एक दिन अचानक सपना बीमार पड़ी। नीरज को इसका पता चला। वह जानता था कि उसके घर में बूढ़ी माँ के अलावा और कोई नहीं है। उसके पिता पटना में नौकरी करते हैं और शनिवार को आते हैं। इसलिए वह शीघ्र ही उसके घर पहुँचा। उसने देखा कि सपना बिछावन पर आँख बन्द किये पड़ी है। उसका चेहरा कान्तिहीन हो गया है। बगल में उसकी बूढ़ी माँ खोयी-खोयीं सी बैठी है चेहरा बुझा हुआ है। नीरज ने उसकी माँ से डाक्टर बुलाने की बात पूछी तो वह चिन्तित स्वर में बोली—"नहीं, बगल वाले श्यामबाबू के लड़के को मैंने भेजा है बुलाने के लिये।"

तभी डाँक्टर आ गये। उन्होंने सपना को देखा, पूछने पर उसकी माँ बोली—

"दस्त और कै बहुत हुआ, डाक्टर साहब।"

"कब से ?"

"यही दोपहर से।"

"क्या-क्या खायी थी ?"

वही सब चावल, दाल······।

डाक्टर ने कहा—घबड़ाने की कोई जरूरत नहीं, यदि भगवान ने चाहा तो सब ठीक हो जायगा। गर्मी के दिन थे चारों ओर 'कालरा' का प्रकोप था। सपना को भी········। उसके बाद दबाई का नुस्खा लिखकर नीरज की ओर बढ़ाते हुए डा० ने कहा बाजार से जल्दी दबाई लेते आओ। जल्दी आना। 'पानी भी चढ़ाना है। नीरज ने सपना की ओर

(शेष पृष्ठ १२ पर)

कहानी

प्रतीक्षा

—भरत करपटने

मैं ज्योंहि घर आया मालूम हुआ भारत आया था और आधा घंटा प्रतीक्षा करके वापस लौट गया। उसके लौटने की सूचना पाते ही दुःख का अनुभव हुआ। मन ही मन में प्रश्नोत्तार होने लगा—भारत आकर लौट गया? वह रोज प्रतीक्षा कर अपना समय नष्ट करता है? क्यों नहीं भेंट होती हैं? वह यहा आकर अपना समय नष्ट करता रहता है और एक मैं, उसके द्वार पर एक आवाज लगाकर लौट आता हूँ।

एक सप्ताह पहले मिला था—हाथ में सिगरेट जल रहा था। मेरे तो होश उड़ गये उपदेश देने वाला आज खुद विमुख हो गया। मैंने उससे पूछा—"भारत तुम्हारे हाथ मे........" "हाँ शम्भू! समय का तकाजा है"—उसने मेरी बात पूरी होने के पहले कहा।

एका-एक झटका सा अनुभव हुआ—नहीं... नहीं... मैं उसे ऐसा नहीं देख सकता। उसकी आत्मा जरूर पीड़ित है। मैं उसका मित्र हूँ, दोस्ती की है। दोस्त को दुःख दर्द में सहायता करना, सान्त्वना देना ही दोस्तका कर्त्तव्य है। मैंने तभी जाकर उसकासाइकिल उठाई और भारत के घर चल दिया। जाते वक्त ही सोच लिया कि भेंट कर के ही लौटूंगा चाहे जितना देर लगे।

और उसके घर पहुँच कर ऐसा ही हुआ। उसकी प्रतीक्षा करते-करते शाम हो गयी समय पहाड़ सा हो गया। इसलिए समय गुजारने के लिए अलमारी पर पड़ी पत्रिका उलट-पलट रहा था। पत्रिकाओं की झुंड में एक टेबुल डायरी देखी। डायरी

(पृष्ठ १० से आगे)

देखा, जैसे कह रहा हो कि सपना मैं शीघ्र लौट आऊँगा। वह एक दम कम जोर हो गयी थी। उसकी स्थिति देखकर नीरज का दिल रो उठा। वह लगभग दौड़ता हुआ बाजार की ओर चल पड़ा। वह चाहता था कि जितनी जल्दी हो सके सपना ठीक हो जाय। सपना का मुस्कराता हुआ चेहरा नीरज की आखों के सामने घूम गया। 'कहीं सपना को कुछ हो गया तो...' सोचते ही वह पहले की अपेक्षा और तेजी से पाँव बढ़ाने लगा। जितनी तेजी से वह आगे की ओर बढ़ता जा रहा था उससे कहीं अधिक तेज गति से उसका मन अन्यत्र भागा जा रहा था।

करीब पौन घंटा बाद दवाई लेकर पसीने से लथ-पथ वह घरके करीब पहुच ही रहा था अचानक उसकी दृष्टि डाक्टर साहब पर पड़ी। वे जा रहे थे। डाक्टर ने कहा-"जाओ मैं अभी आ रहा हूं।"

वह घर के नजदीक पहुचा तो उसकी माँ की चित्कार सुनाई पड़ी। वह ठिठका। दरवाजे पर मुहल्ले के अनेक लोग खामोशी साधे खड़े थे। औरतें आ जा रहीं थीं। वह दौड़ता हुआ एक दो व्यक्ति से टकराता कमरे में पहुचा। उसने देखा सपना की आंखें खुली हुई हैं और गर्दन तकिये से टेढ़ी होकर दरवाजे की ओर टिकी हुई है। यह सब देखते ही उसके हाथ की दवाई की शीशी उँगलियोंके बीच से लगातार फिसलती चली गयीं.......

.....अब अँधेरा हो चुका था नीरज बैठ गया और बगल में पड़े हुये पत्थर के टुकड़े को उठाया और पानी में फेंक दिया। पानी में पत्थर पड़ते ही छपाक् की आवाज हुई और उस आवाज से शान्त वातावरण निनादित हो उठा फिर वह उठ खड़ा हुआ और पानी में उठती तरंगों को देखते हुए अपने घर की ओर कदम बढ़ाने लगा।

❧

यथास्थान छोड़कर पत्रिका में व्यस्त हो गया, क्योंकि मैं दूसरे की डायरी पढ़ना उचित नहीं समझता। पर कुछ क्षणों में ही मेरे हाथ डायरी पर जाकर रुक गये। सफेद डायरी बाहर खींच ली। डायरी जीवन गाथा होती है, जिसके माध्यम से किसी अज्ञात बात की जानकारी प्राप्त हो जाती है। मैं भी भारत के जीवन की वह बात जानने को उत्सुक हुआ।

ज्यों ही डायरी खोली कि पन्ने अनिश्चित गति से एक ओर से दूसरी ओर होने लगे। एक स्थान पर लिखा था—'पिता जी के देहान्त के बाद पारिवारिक झझटों का बोझ सम्भालने वाली अकेली माँ रह गयी। सम्बन्धी सब तो ऐसे हो गये जैसे पराया। स्त्री क्या कर सकती है? पर स्त्री को अपना बच्चा बड़ा प्यारा होता है, चाहे वह जैसा भी हो। माँ भी अपने बच्चे को दुःख देना नहीं चाहती पर भला एक स्त्री क्या कर सकती है। वह तो बच्चों का देखभाल कर सकती है पर पैसा तो पुरुष ही लाता है। पुरुष सिर्फ पैसा कमाना जानता है घर चलाना नहीं। घर की कुँजी स्त्री के हाथ रहने पर ही सुनहरा संसार बस सकता है। लेकिन जब पैसे का स्रोत ही बन्द हो जाये तो स्त्री क्या कर सकती है।

मां की लम्बी तपस्या के उपरान्त सफलता हाथ लगी। जब बड़ा बेटा कमासुत हो जाता है, तो माँ का झंझट खत्म हो जाता है। घर में बहू आने पर कुंजी उसे दे देती है। यहीं उसका उत्तर-दायित्व समाप्त हो जाता है और वह आराम की साँस लेती है। माँ भी इसी अवस्था में आ गई तो उसे भी क्यों न आराम मिलता?

मैं पन्ना पलटने ही वाला था कि किसी के पदचाप का अनुभव हुआ आखे ऊपर उठायी तो सामने भाभी हाथ में प्याली लिये आ रही थी। मैंने झट डायरी बन्द कर टेबुल पर रख दी। चाय रखती हुयी भाभी बोली—"शम्भू जी। आपको काफी प्रतीक्षा करनी पड़ रही है न। लीजिए चाय से दिल बहलाईये।"

"आज भेंट करके ही जाऊँगा -" मैंने उत्तर दिया-"चाहे जितनी देर हो।"

"देखिये कितनी देर में आते हैं" भाभी बोली, "आजकल तो दिन भर गायब रहते, घर में न कुछ बोलते और न सुनते। ऐसा स्वभाव हो गया है जैसे कोई पराया····

"नहीं भाभी नहीं। उसके स्वभाव में कोई परिवर्तन नहीं आया है। समय-समय की बात है -"

"नहीं शम्भू जी! मैंने कितनी बार समझाने की कोशिश की पर कुछ सुनते ही नहीं जैसे मेरी बात उन्हें······" "सब ठीक हो जायगा भाभी, सब ठीक हो जायगा-" "अच्छा भाई चाय ठन्ढी हो रही है, और सब्जी भी जल रही है" कहती हुयी भाभी कमरे से बाहर निकल गयीं।

मैंने चाय की चुसकियां लेते हुए फिर डायरी खोली, "नीता! हम दोनों के अछूते प्रेम ने सफलता प्राप्त कर ली, दोनों विवाहित हो गये पर आज मैं विवाहित होकर भी अविवाहित हूँ। इसका एक मात्र कारण है–पैसा, तुम्हारे धनवान पिता ने मेरी पत्नी को मुझसे अलग कर दिया। नीता तुम अपने में सुख-चैन की जिन्दगी बिता रही हो और मैं··········खैर मैं इन बातों पर ध्यान नहीं देता किस्मत का दोष है। क्या किया जा सकता है; रेखाएँ जो खिच गई है, उन्हें मिटाने वाला कोई नहीं इस संसार में।"

"नीता मैं तो उस दिन की प्रतीक्षा कर रहा हूँ, जब तुम्हें आराम की जिन्दगी मैं दे सकूं और तू मुझे प्यार······" रात की नींद भी करवटे बदलते-बदलते पूरी हो जाती है। रात की काली छाँव में पड़े उस दिन की यादे सताती रहती हैं जब मैं कालेज में दाखिल हुआ था, पहले दिन ही तुम्हारी सुन्दरता पर मोहित हो गया था पर एक दिन जब मैंने प्रयोगशाला में तुमसे बाते कीं तो मेरी आत्मा ने तुम्हें पुकारा नीता तू कितनी भोली है। शायद हम दोनों की आत्माओं ने आपस में बहुत सारी बातें की प्रेम भरा संदेश ग्रहण किया पर मुझमें इतना साहस न था कि एक धनवान बाप की बेटी को अपना

साथी बनाऊँ।

पर दो धड़कते हुये दिलों ने एक दिन समझौता कर लिया। एक दूसरे की बातों का अनुभव कर दो हृदय प्रेम बन्धन में जकड़ गये। हम लोगों के कदम इतने आगे बढ़ गये कि एक दिन मैंने भैय्या के सम्मुख शादी का प्रस्ताव प्रस्तुत किया। भैय्या ने मुझे बहुत समझाया, यहां तक उन्होंने कहा "भाई तुम पढ़ लिखकर आदमी बन जाओ फिर शादी·····" मैं उनकी बात काटता हुआ बोला "भैया नीता के पिता उसकी शादी करना चाहते हैं और मैंने न किया तो वे और कहीं···"

भैय्या ने फिर समझाया "देखो! ब्याह के बाद पढ़ाई-लिखाई में बाधा होगीं, तुम अपने जोवन को सार्थक नहीं कर सकोगे। जो तुम्हारे लिए परम आवश्यक है। "भैय्या शादी के बाद मानव इतना गिर जाता है मैं ऐसा कदापि न होने दूंगा"

"भारत मैं यह नहीं कहता कि तुम अपने रास्ते से विमुख हो जाओगे" "भैय्या! मैं चाहता हूँ कि शादी हो जाने पर नीता को मैके में ही छोड़ दूंगा जब तक मुझे नौंकरी नही मिल जाती। "नही भारत! तुम्हारा यह सोचना गलत है" – भैया का स्वर गम्भीर था "शादी के बाद पति पत्नी का जीवन एक गाड़ी की दो पहियों जैसा हो जाता है यदि एक दूसरे को पृथक रखा जाय तो जीवन गति स्थिर पड़ जाती, है। नाचती दुनियाँ दृढ़ता का रूप धारण कर लेती है। इसलिए जब तुम्हारी शादी होगी तो तुम्हारी पत्नी तुम्हारे साथ रहेगी।"

"पर भैया नीता के पिता कहते हैं जब तुम दोनों शादी ही करना चाहते हो तो कर लो, पर नीता तुम्हारे साथ तभी रहेगी जब तुम इसे कमाकर पैसे दोगे। यदि मैं शादी नहीं करूँगा तो नीता आत्म······· "नहीं·····नहीं ऐसी बात मत बोलो तुम दोनों का जीवन सलामत रहे यही मेरी इच्छा है" भैय्या बोले "ठीक है शादी हो जायगी तुम दोनों······"

'नीता मैं तुम्हें कब पाऊँगा नीता······' एकाएक मेरे हाथ कापें डायरी हाथ से गिर पड़ी····

मैंने फिर डायरी उठायी तो एक लिफाफा उसमें से गिरा लिफाफे के अक्षर तो पहचाने से मालुम हो रहे थे पर ख्याल न पड़ रहा था कि किसकी लिखावट है? लिफाफे से पत्र निकाल कर पढ़ने लगा—

प्रियतम,
आपकी प्यार भरी चिट्ठी मिलती रही। आपकी प्रत्येक चिट्ठी में यही सांत्वना रहती हैं कि धीरज रखो, प्रतीक्षा करो, प्रतीक्षा करो, उस मोड़ तक इन्तजार करो जब तक मुझे कोई नौकरी नहीं मिल जाती है। परन्तु मैं पूछती हूँ आपका जीवन कब सार्थक होगा? पहले तो आप लिखते रहे, मुझे पढ़ने दो, कम-से- कम उच्च शिक्षा तक। पर आप तो दो साल पहले ही एम० एस० सी० कर चुके हैं। अब नौकरी मिलने तक प्रतीक्षा करने को कहते हैं। लेकिन अब मुझसे एक क्षण भी प्रतीक्षा नहीं हो सकती, चाहे आपको नौकरी मिले या न मुझे पहले पास बुला लीजिए प्रतीक्षा में आपकी
नीता!"

मैंने चिट्ठी बन्द करनी चाही कि आँसूओं की बूंदे उस पर टपक पड़ी। सिर उठाया तो ठिठुर सा गया, भारत खड़ा था। हाथों से मुँह छिपा लिया। मैं उसकी दशा देखकर आवाक सा हो गया न उससे कुछ बोल सका न उसे बैठने को कहा।

"भारत" भैय्या ने आवाज दी भारत के साथ मैं भी वहाँ पहुँचा भैय्या के हाथ में एक बडा लिफाफा था। वह कह रहे थे "यू आर वेरी लकी भारत! तुम प्रोफेसर हो गये यह उसी की चिट्ठी है"

भारत खुशी से रो पड़ा। भैय्या के पांव छुये झपट कर मुझे गले लगा लिया!

बधाई !
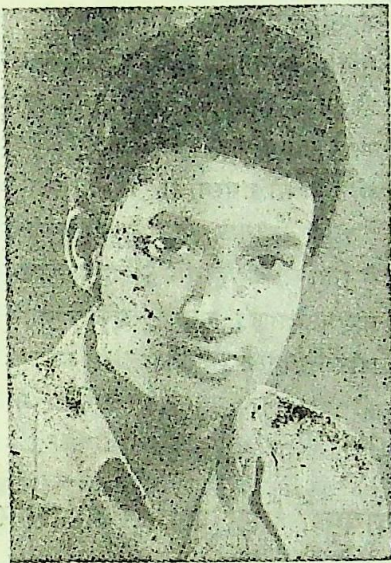
के० के० शर्मा

अक्टूबर के पूर्वार्द्ध में हुये मेरठ कालेज मेरठ के छात्र संघ के चुनाव में अध्यक्ष पद के लिए श्री के० के० शर्मा भारी बहुमत से विजयी हुये हैं। यों तो प्रत्येक महाविद्यालय एवं विश्व विद्यालय में छात्र संघ का अध्यक्ष होता है किन्तु पिछले दो दसकों के महत्वपूर्ण संदर्भ, छात्र संख्या, कालेज परिसर की विशालता तथा भारत की राजधानी के करीब होने के कारण राजनीतिक और कतिपय कूटनीतिक वातावरण से प्रभावित मेरठ कालेज और उसके छात्र संघ का अध्यक्ष न केवल अपने कालेज बल्कि पूरे पश्चिमी उत्तर प्रदेश के छात्रों की रहनुमाई करता है। कहावत है कि "एक सौ विद्वान व्यक्तियों से एक व्यवहार कुशल व्यक्ति श्रेष्ठ होता है।" सार्वजनिक जीवन में श्री के० के० शर्मा के अब तक के कार्यों को देखते हुये कहा जा सकता है कि वह अत्यन्त नम्र, व्यवहार कुशल, और अपने प्राप्त पद की गरिमा को बढ़ाने में सर्वथा सक्षम है। युवा-रश्मि परिवार की ओर से हार्दिक बधाई।

कविता,

"कहता है प्रबल मौन..................

—उमा गुप्ता "अर्पिता"

टूटा नहीं है आज भी अहसास प्यार का
दिखती है तेरी आँखों में चाहत घनी - घनी।

तुमसे बनी तो सारे जमाने से बनी है
तुमसे नहीं बनी तो किसी से नहीं बनी।

बनने को तो दुश्मन से भी बन जाती है लेकिन
कैसे कहूँ कि बात हमारी नहीं बनी।

कहता है प्रबल मौन ये एकाधिकार का
मैं ही तुम्हारी याद के कानन की स्वामिनी।

मैं तुझको भूल जाऊँ असंभव सी बात है
मेरे हृदय - पटल पे यही भावना बनी।

अस्तित्वहीन सी हूँ तुम्हारे बगैर मैं
तुमसे प्रकाशमान है मेरी हृदय - कनी।

बदलते संदर्भ में युवावर्ग की आकांक्षाएं क्या हैं ?

आयोजिका—
उर्मिला गोस्वामी

आज के बदलते संदर्भ और नित परिवर्तित जीवन मूल्यों, सामाजिक मान्यताओं के प्रहर में युवा वर्ग क्या चाहता है, उसकी मुख्य आकांक्षायें क्या हैं ? यह प्रश्न अत्यन्त महत्वपूर्ण है। युवावस्था में जहाँ एक ओर साहस और उत्साह की अधिकता रहती है, वहीं दूसरी ओर उसकी आकांक्षाएँ भी विविध प्रकार की और विराट होती हैं। मजबूरी का अहसास स्फूर्ति और साहस को प्रभावित करता है। जिस देश का युवक बेबसी से अक्रांत होगा उस देश की प्रगति किंचित अवरुद्ध तो हो ही जायेगी। आज हमारे देश में युवकों के सम्मुख बेरोजगारी एक सर्वाधिक अहम समस्या है। इस समस्या ने मानवीय जीवन के आदर्शों, सिद्धांतों को कुचल दिया है। संघर्ष-मय जीवन में सुख शान्ति के लिए सामाजिक व्यवस्था को सुव्यवस्थित, सुसंगठित करने के लिए युवा वर्ग के मन में क्या है ? इन्हीं तथ्यों को जानने की जिज्ञासा से मैंने कई भाई-बहनों से बात-चीत की।

अभाव तो रहेगा ही

—सुश्री गीता

पारस्परिक कटुता और बुराइयों को जड़ से मिटाने के बाद ही युवा वर्ग की आकांक्षाओं को सही रूप मिलेगा। अकर्मण्यता की स्थिति में आकांक्षा का कोई महत्व नहीं होता, युक्ति और साहस के अभाव में योजनाएँ आकाश कुसुम बनकर रह जाती है। जिस युवा वर्ग में जमाने को बदल देने की ताकत है, वही आज पारस्परिक द्वेष भावनाओं से सर्वाधिक ग्रस्त है।" प्रश्न पर मनोवैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत करती हुई कुमारी गीता ने कहा—"प्रत्येक व्यक्ति की अपनी विवशता होती है और अभाव का सम्बन्ध जीवन से जुड़ा है। आदमी की सारी इच्छाएँ कभी पूरी नहीं होती, इसलिए जब तक जीवन है कोई न कोई अभाव बना रहेगा। युवा वर्ग की आकांक्षाएँ क्या हैं ? उन्हें गिनाना तो मुश्किल होगा। सम्पूर्ण इच्छाओं की सन्तुष्टि के बाद हर तरह से सुविधा की जिंदगी जीने की आदमी की आकांक्षा होती है। लेकिन सुविधा का मतलब सिर्फ अपनी सुविधा ही नहीं होनी चाहिए। युवा वर्ग अगर साहब बनने का अपना पूर्वाग्रह छोड़ दे, तो समस्याओं से भरे हमारे देश में रोजगार के पर्याप्त अवसर हैं। हालाँकि यह सच है कि ये अवसर अपेक्षाकृत कम हैं, लेकिन जहां और जितना है, उसका लाभ उठाना ही देश और युवा वर्ग के हित में है।"

दोषपूर्ण शिक्षाप्रणाली अभिशाप

— सुनीती टोकेकर

कुमारी सुनीती टोकेकर ने कहा कि रोजगार में भाई भतीजावाद और पक्षपात की नीति ने आकांक्षाओं को दमित कर युवा मानस को विद्रोही बना दिया है। दूसरी ओर सिफारिश के आधार पर अयोग्य लोगों को ऊँचे

पद पर बैठाने से देश का भी बड़ा अहित होता है। रोजगारिक शिक्षा प्रणाली का न होना हमारे देश का बहुत बड़ा दुर्भाग्य है। सबसे अजीब बात तो यह है कि आजादी के तीस वर्ष बाद भी हमारे देश में शिक्षालयों की बेहद कमी है। लाखों की तादाद में युवक युवतियाँ विद्यालयों में प्रवेश नहीं ले पाते। इस अपर्याप्त व्यवस्था में सुधार भी युवा वर्ग की एक बलवती आकांक्षा है। शिक्षा के व्यापक प्रसार से ही युवा वर्ग को समाज की दूषित कुरीतियों से लड़ने का बल मिलेगा। सुश्री टोकेकर ने कहा—"युवा वर्ग की समस्याओं आकांक्षाओं आवश्यकताओं की ओर ध्यान देना सरकार का पहला कर्तव्य होना चाहिए, अन्यथा युवा पीढ़ी के कुंठाग्रस्त हो जाने से देश समुचित प्रगति नहीं कर पायेगा।"

रोजी रोटी की आवश्यकता सबसे बड़ी

—राधाशरण गोस्वामी

श्रीराधाशरण गोस्वामी ने भी रोजी रोटी की आवश्यकता को सर्वाधिक महत्व पूर्ण बताते हुये कहा "कुछ अपवादों को छोड़कर मनुष्य निरन्तर सुख वैभव प्राप्त करने की चेष्टा में लगा रहता है, लेकिन जब उसकी रोजी रोटी की बुनियादी आवश्यकता पूरी नहीं होती तो वह तिलमिला जाता है, कुंठाग्रस्त हो जाता है।" रोजगार परक शिक्षा पद्धति की अनिवार्यता पर जोर देते हुए श्री गोस्वामी ने कहा कि आज की दूषित शिक्षा प्रणाली क्रैन एन्ड वामिट (रटो और उगलो) के सार में गुंथी हुई है जिससे विद्यार्थी वर्ग अपने उद्देश्य के प्रति केन्द्रित नहीं रह पाता। दोष हमारे अभिभावकों का भी है जो अपने बच्चों को केवल डाक्टर, इंजीनियर और वकील बनाना चाहते हैं। श्रीगोस्वामी ने कहाकि रोजगार का मतलब केवल नौकरी नहीं है, स्वयं कोई छोटा-मोटा धंधा करके जीविका चलाना वास्तविक रोजगार है और इसी तरह से अधिकांश लोगों की आकांक्षाएं पूरी हो सकती हैं।

वैचारिक क्रान्ति आवश्यक

—आशा जैन

"हमारे शास्त्रों में कहा गया है कि भूखा कौन सा पाप नहीं करता अत: व्यक्ति की जीवन रक्षक आवश्यकताओं को पूर्ण करना सरकार का कर्तव्य है। जहाँ तक युवा पीढ़ी का सवाल है यह पीढ़ी तो राष्ट्र का मेरुदण्ड होती हैं इसलिए इसकी आकांक्षाओं और समस्या की ओर शासनतंत्र को विशेष सचेष्ठ रहना चाहिये।" कुमारी आशा जैन ने प्रश्न पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए कहाकि समय के संदर्भ में वैचारिक क्रान्ति द्वारा समाज की चिन्तन धारा को मोड़ना और तदनुसार जीवन के नये प्रतिमान गढ़ना युवा-वर्ग की बहुत बड़ी आकांक्षा है।

*

एक से बढ़कर एक

—नन्द नन्दन

सतीश को कार्यालय में आये एक सप्ताह भी नहीं हुआ और उसे एकाउन्ट सेक्सन की टेबुल मिल गई। बड़े कार्यालय में यह टेबुल भले ही माथापच्ची करने के लिए बनी हो, लेकिन बिजली विभाग के बानपुर सेक्सन की यह टेबुल कामधेनु है। इसी टेबुल के चलते सात साल में शिवराम बाबू अच्छी जमीन के मालिक बन गये। शानदार मकान बनाकर नई मोटर साइकिल भी खरीद ली है।

सतीश को यह टेबुल मिल जाने के बाद शिवराम बाबू, प्रशाखा पदाधिकारी द्विवेदी साहब के सामने काफी गिड़गिड़ाये—

—"ये दैनिक वेतन भोगी कर्मचारी हैं। इन्हें तो फिल्ड वर्क में भेजना चाहिए था, हुजूर!"

—"अरे! कुछ दिन के लिए आये हैं"—अनमना सा उत्तर था, द्विवेदी साहब का।

—"ऑफिस में अब काम ही क्या रहा हम लोगों का"—व्यंग भरे शब्द थे शिवराम बाबू के।

—"आप तंग न करें, वे दक्ष कामगार हैं......"

—"हुजूर को कुछ अधिक शेयर......"दबे स्वर में आखिरी तीर था शिवराम बाबू का। वह भी बेकार हो गया।

दूसरे दिन शिवराम बाबू एक बजे बिजली एस० डी० ओ० सिन्हा साहब के कार्यालय पहुंच गये। मौका देखकर कमरे में प्रवेश किया।

—"प्रणाम हुजूर......!" लम्बी सलामी देकर शिवराम बाबू टेबुल के एक तरफ खड़े हो गये। सिन्हा साहब लिखते ही रहे।

—"मैं तो निवास पर भी गया था......" शिवराम बाबू के इस वाक्य ने सिन्हा साहब की कलम में ब्रेक लगा दी। वे समझ गये कि शाम का नाश्ता लाजबाब होगा। शिवराम जब भी निवास पर आता है, तो बच्चों के नाम पर किलो दो-किलो रसगुल्ले के अतिरिक्त सीजनल अन्न जैसे—कभी चावल, तो कभी गेहूं दे जाता है।

"क्या समाचार है, शिवराम?"

—"दया हुजूर की......लेकिन कल का बच्चा सतीश! दो दिन पहले ज्वाइन किया है और द्विवेदी साहब ने उसे एकाउन्ट की टेबुल दे दी है।"

—"अच्छा......!" ......आश्चर्य हुआ उन्हें, क्योंकि द्विवेदी साहब को उन्होंने अच्छी तरह समझा दिया था कि शिवराम मेरा खास आदमी है।

—"आश्चर्य की बात तो यह है कि सतीश दैनिक वेतन भोगी कर्मचारी है। उसे फील्ड में भेजा जाना चाहिए था"—मूड अच्छा देखकर शिवराम बाबू बोलते गये।

—"यह कैसे हो सकता है?"... गुस्से में चीखे सिन्हा साहब।

—"मैं झूठ बोलूंगा...? हुजूर! यही तो अन्याय हो रहा है।"

—"अच्छा ठीक है! मैं कल ही सेक्सन आ रहा हूं।"

एस० डी० ओ० साहब की जीप देखकर कार्यालय के सभी सहायक सतर्क हो गये। कमरे में प्रवेश करते ही उन्होंने सबों के अभिवादन का जवाब दिया। उनकी नजर टिकी एकाउन्ट टेबुल के पास बैठे सतीश पर।

—"ये साहब कौन हैं?

—"नये एकाउंट असिस्टेन्ट! चार दिन पहले ज्वाइन किये हैं। योगदान की प्रतिलिपि तो हुजूर के कार्यालय भेज दी गई है"—द्विवेदी साहब का उत्तर था।

—"ओ· · · · याद आया! दैनिक वेतन भोगी कर्मचारी"—याददास्त पर जोर देने की भूमिका बनाई उन्होंने।

—"जी· · · ·जी हाँ......सर!" —हकलाते हुए शिवराम बाबू बोले।

—"इन्हें तो फील्ड में भेजा जाना

(शेष पृष्ठ २१ पर)

अन्तर्जातीय विवाह कितना उचित–कितना अनुचित

-आयोजक —
नित्यनाथ तिवारी

स्वाधीनता के बाद के तीस वर्षों में भारत में अनेक सामाजिक सांस्कृतिक परिवर्तन हुये हैं परम्परागत और नये सांस्कृतिक प्रतिमानों के द्वन्दों के बीच भारतीय समाज में मूल्य-गत अनेक चुनौतियां प्रस्तुत हुयी हैं। मान्यतों और मूल्यों की टकराहट ने हमें कई अन्तें-विरोधी समझौते करने को बाध्य किया है। साथ ही सांस्कृतिक मूल्यों की टकराहट ने अर्न्तजातीय विवाह के संदर्भ में अनेक जटिल समस्याओं को जन्म दिया है। आज के संदर्भ में अन्तर्जातीय विवाह कितना उचित कितना अनुचित है इसका विश्लेषण करते हुए बदलते जीवन मूल्यों और विभिन्न स्तर पर परिवर्तनों को महसूस किया जा सकता हैं साथ ही देखा जा सकता है परम्परा और रूढ़ियों के प्रति कुछ लोगों का व्यापक मोह। इस बात से कौन इंकार करेगा कि हमारे रहन-सहन में पश्चिमी शैली का आधिपत्य होता जा रहा है। जीवन की पृष्ठ-भूमि में प्राचीन और नवीन का बेमेल मिश्रण धीरे-धीरे कामयाबी की ओर अग्रसर हो रहा है। खून का रंग एक होने के बावजूद जो दो आदमियों के बीच जाति की रेखा खींच दी है, उसे मिटाने के लिए आज युवा पीढ़ी उद्द्त हो गयी हैं। वह चाहती है कि इस संदर्भ में रोड़ा अब तक बनी तमाम अन्तं विरोधों को दूर कर राष्ट्र के सामाजिक सांस्कृतिक जीवन का नये आधार पर पुनर्गठन हो। हमारे समाज की महिलायें अन्तं-जातीय विवाह के औचित्य को कहां तक उचित व

अनुचित मानती हैं यह जिज्ञासा लेकर मैं लखनऊ की प्रबुद्ध महिलाओं से मिला ।

अर्न्तजातीय विवाह की पृष्ठभूमि अभी तैयार नही

—आशा शर्मा

"हमारे सामने जो अर्न्तजातीय विव ह के उदाहरण आयें हैं, वे असफल विवाह के उदाहरण हैं। जब दो व्यक्ति विभिन्न सांस्कृतिक परिवेशों से आकर एक नये परिवेश में जुड़ते हैं, तो एडजस्ट की दिक्कत होती हैं, भाषा का सवाल उठता है। धीरे-धीरे मूल्यों की टकराहट शुरू हो जाती है तनाव बढ़ने लगता है। अभी हमारे भारतीय समाज में अर्न्तजातीय विवाह के लिए सामाजिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि तैयार नहीं हुई है।" लखनऊ स्थित बालविद्या मंदिर की प्रधानाचार्या श्रीमती आशा शर्मा ने प्रश्न पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुये यह स्वीकार किया कि बहुत से अर्न्तजातीय विवाह सफल भी हुये हैं। उन्होंने कहा कि भारतीय सामाजिक व्यवस्था में अभी तक अर्न्तजातीय विवाह को बहुत अधिक महत्व नहीं दिया गया है, लेकिन यह स्पष्ट है कि नागरीकरण के फल स्वरूप बढ़ते हुये नागरिक अधिकार, भौतिक सुख साधनों का आकर्षण आदि बहुत से ऐसे कारण हैं जो अर्न्तजातीय विवाह के लिये पृष्ठ भूमि तैयार कर रहे हैं।

समय के साथ मान्यिताएं बदल रहीं हैं

—आभारानी वर्मा

लोकगीतों की लोकप्रिय गायिका कवयित्री श्रीमती आभारानी वर्मा ने बड़े संयत स्वर में कहा 'मैं उस परिवार में पली हूँ, जहाँ हिन्दू संस्कारों का कठोर बंधन है। जहाँ तक मेरा निजी मत है मैं पूर्ण रूप से सहमत हूं कि जब अर्न्तजातीय विवाह को प्रोत्साहन नहीं मिलेगा समय की दौड़ में हम पीछे रह जायेंगे।

सुश्री वर्मा ने कहा कि अब जिन्दगी बदल गई है, सुबह से शाम तक भाग-दौड़ तमाम विषमताएं टूटते हुए संयुक्त परिवार बढ़ती हुई सह शिक्षा तमाम आर्थिक पहलू, ऐसे बहुत से कारण हैं, जिससे अर्न्तजातीय विवाह को प्रोत्साहन मिलता है। मन और समाज दो विरोधी बातें हैं। मानसिक जगत में सामाजिक नियम और परम्परायें अपना महत्व खो बैठती हैं। समय और परिस्थितयों में अनुकुलता बनायें रखने के लिए अर्न्तजातीय विवाह को प्रोत्साहन मिलना ही चाहिये।

संस्कारों से ऊपर उठना आवश्यक

—नीलिमा पाण्डेय

भाषा विज्ञान की विदुषी, साहित्य, कला और संस्कृति में गहरी रुचि रखने वाली श्रीमती नीलिमा पाण्डेय ने संस्कार से ऊपर उठने पर बल दिया। सुश्री पाण्डेय ने कहा "मैं मैं तो एक ब्राह्मण परिवार में पली और जन्मी हूँ। किन्तु मेरा विचार है कि व्यक्ति को अपने व्यक्तित्व के सर्वागीण विकास के लिए संस्कार से ऊपर उठना चाहिये। आज का युग स्पर्धा और सुविधा का युग है। मनु-

व्य को विकास का पूरा अवसर मिलना ही चाहिए, इसलिए मैं अन्तर्जातीय विवाह का समर्थन करती हूँ।

धर्म और जाति का दायरा आवश्यक

—शाहजहाँ बानो 'याद'

उर्दू जगत की जानी मानी शायरा सुश्री शाहजहाँ बानो "याद" ने अन्तर्जातीय विवाह पर अपनी तीखीं प्रतिक्रिया व्यक्त की। उन्होंने कहा "मैं अन्तर्जातीय विवाह की बात से पूरी तरह असहमत हूँ। एक मुसलमान लड़के को मुसलमान लड़की के साथ ही शादी करनी चाहिये, भले ही वह निम्न वर्ग का मुसलमान क्यों न हो"। सुश्री 'याद' ने कहा कि मैं धर्म के बाहर शादी को उचित नहीं मानती, क्योंकि इससे दाम्पत्य जीवन में वह लचीलापन नहीं आता जो कि एक सुखमय परिवार के लिए आवश्यक है।

परम्परा और आधुनिकता के बीच का रास्ता चुनना होगा

—माधुरी बाजपेयी

"दहेज प्रथा का आधिपत्य अन्तर्जातीय विवाह का एक प्रधान कारण है। बहुत सी सुयोग्य कन्यायें दहेज के अभाव में अच्छे एवं मन चाहे घर नहीं पहुँचपातीं, फलत: विवश होकर उन्हें अन्तर्जातीय विवाह में बंधकर दाम्पत्य जीवन की ओर उन्मुख होना पड़ता है"। हिन्दी काव्य धारा के बदलते प्रतिमानो की पक्षधर तथा अंग्रेजी साहित्य की मर्मज्ञा सुश्री माधुरी बाजपेयी ने कारणों की गहराई में जाकर प्रश्न पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की। उन्होंने कहा कि मैं रागात्मक सबंध के आधार पर अन्तर्जातीय विवाह का समर्थन करती हूँ। हमारा समाज तेजी से बदल रहा है। परम्परा और आधुनिकता के बीच का रास्ता हमें तय करना होगा नासमझी और कोरी भावुकता के कारण जीवन व्यवधानो से भर जाता है, अत: जीवन के यथार्थ को भूलकर कोई निर्णय भी नहीं लेना चाहिये। बहुत से परम्परागत विवाह सफल हो जाते हैं और बहुत से असफल भी। एडजस्जमेन्ट को कायम रखना चाहिये नहीं तो स्थिति आत्महत्या तक पहुँचती है।

(पृष्ठ १८ से आगे)

चाहिए था"—कुछ आवेश में एस० डी० ओ० साहब की आवाज सुनकर द्विवेदी साहब से न रहा गया—

"हुजूर! अगर आप आदेश दें, तो इन्हें फील्ड में भेज दूं!"

सिन्हा साहब काम आसानी से होते देख मन ही मन मुस्कुराये द्विवेदी साहब के मन में अधीक्षण अभियन्ता की बात याद आ गई, उस दिन उन्होंने साफ कहा था—"मि० द्विवेदी सतीश जी दैनिक वेतन भोगी कर्मचारी हैं, इन्हें आपके सेक्सन में भेज रहा हूँ"—फिर दरवाजे की ओर देखकर, धीरे से कान के पास मुँह ले जाकर कुछ गोपनीय बात कहीं।

एस० डी० ओ० साहब जाने लगे तो द्विवेदी जी ने धीरे से कान में कहा—सर.....सतीश जी..बोर्ड के चेयरमैन के खास आदमी हैं,

—"..." सिन्हा साहब अचम्भित सा हो गये। —"जैसा आदेश हो" —मौन भंग की द्विवेदी जी ने। —"अच्छा, तत्काल आदेश स्थगित रखा जाय"—कहकर एस० डी० ओ साहब जीप में बैठ गये बोले—" ड्राइवर.....गाड़ी बढ़ाओ।"

नई कविता में परम्परावादी-तत्व

—अनिल कुमार मिश्र

विगत चार दशकों से नई कविता का झण्डा हिन्दी-काव्य की अग्र चोटी पर फहरा रहा है हर क्षेत्र में नएपन ने अपना 'अंगद-पग' जमा रखा है । 'नए' विशेषण को अपनाने के लिए कवियों का जबरदस्त आग्रह है। नएपन के प्रति कवियों का आग्रह इतना प्रबल हो उठा है कि वे प्राचीनता का जीर्ण-वस्त्रवत् बहिष्कार करना चाहते हैं । वे डंके की चोट पर यह उद्घोषणा करते हैं कि "नई कविता परम्परा से अलग हटकर लिखी जा रही है ।" उनकी दृष्टि में परम्परा-

लेखक

गत प्रतिमान मैले हो गए हैं, घिस गए हैं, उनका 'मुलम्मा' छूट गया है और वे इस काबिल भी नहीं हैं कि उनपर पुनः कलई की जा सके ।

इस प्रकार की अटकलें कुछ असंगत सी प्रतीत होती है । सम्भवतः नए कवियों ने 'परम्परा' का अर्थ 'रूढ़ि' लिया है, किन्तु रुढ़ि और परम्परा में सूक्ष्म भेद है । 'परम्परा' प्रगति को प्रोत्साहित करती है, जबकि रूढ़ि स्थिरता को । 'नए' विशेषण का आदि स्रोत परम्परा है, रूढ़ि नहीं । 'नया' तो एक समय सापेक्ष शब्द है । अतः अपने उद्गम से निसृत सरिता कितनी ही दूर क्यों न चली जाय, उससे सम्बन्ध अवश्य रखती है । क्यों परम्परा से सर्वथा हटकर चलना सम्भव है ?

रीति काल में एक काव्य-धारा थी—"रीतिस्वच्छन्द—काव्य धारा" । मान्यता है कि यह धारा रीतिकाल की सामान्य प्रवृतियों से अलग हटकर काव्य सर्जना में लीन थी; परन्तु यदि सूक्ष्म पर्यवेक्षण किया जाए, तो विदित होता है कि इस रीति स्वच्छन्द काव्य धारा में भी रीतिकाल की प्रवृत्ति अनुस्यूत है । आधुनिक काव्य की जिस कविता को 'छायावाद' कहा जाता है, वह रीतिकाल का ही विकसित और परिवर्तित रूप है । रीतिकाल का नाद-सौन्दर्य, मुक्तकता पद लालित्य, प्रकृति प्रेम, नारी के माँसल सौन्दर्य निरूपण प्रभृति प्रवृत्तियाँ छायावाद की भी प्रमुख विशिष्टताएँ हैं । अन्तर केवल इतना है कि रीतिकाल में जहाँ नारी पर प्रकृति का आरोपण हुआ, वहाँ छायावाद में प्रकृति पर नारी का । तदनन्तर 'प्रयोगवाद, के रूप में जिस समाजवाद, साम्यवाद की चर्चा की गई है, वह अन्तर्मुखी तुलसी के राम राज्य में परिलक्षित होता है । नई कविता के कथ्य-सन्दर्भ प्रायः वही हैं, जो छायावाद या उसकी पूर्ववर्ती धारा के हैं, यत्किन्चित परिवर्तन उपलक्षित होता है, वह युगबोध का ही प्रतिफल है । वैयक्तिकता की छायावादी अनुभूति आज भी नई कविता में नाना रंगों से अभिरन्जित है । 'हरी घास पर क्षण भर', बावरा अहेरी', 'नाव के पाँव', ये जिन्दगी के रास्ते' 'कल्पना' प्रभृति कविताएँ वैयक्तिकता के आत्यान्तिक स्वरूप की परम्परा सूर, तुलसी आदि में भी विद्यमान है, पर वह भक्ति भावना से परिप्लावित है ।

परम्परा के प्रति नए कवियों की यह उपेक्षा, यह अलगाव इतना बढ़ गया कि उसने जीवन के शाश्वत मूल्यों को भी परम्परा कहकर त्यागना चाहा—

"प्यार शब्द घिसते घिसते
चपटा हो गया है ।
अब हमारी समझ में
सहवास आता है ।"

नावीन्य की दुहाई देकर और भी ऐसे खुले आमंत्रण दिए गए, किन्तु यहाँ भी नया कवि मात खा गया । जिस खुले आमन्त्रण, वासनात्मक प्रेम और श्रृंगार के दर्शन इस नई

कविता में होते हैं, उसकी परम्परा तो जयदेव, विद्यापति और रीतिकाल में भी प्राप्त हो जाती है ।

इसी प्रकार नई कविता की मानवता वादी दृष्टि भी प्राचीन मानवतावाद की अगली कड़ी है। छायावाद तक मानवता जहाँ आदर्श की भूमि पर अवस्थित थी, वहाँ नई कविता में वह यथार्थ की भाव-भूमि पर विद्यमान है। वस्तुत: यह मानवता अथवा नव-मानव की परिकल्पना परम्परागत दृष्टि का युगीन-सन्दर्भ में विकास ही है ।

प्राचीन काव्य प्रशस्तियों का सहज एवं स्वाभाविक प्रयोग, उसकी परम्परा को साकार कर चलने कीं प्रवृति का ही द्योतक है। एक ओर नया कवि यदि वैदिक वातावरण की ओर आकर्षित होता है, तो दूसरी ओर लोक-साहित्य पर भी। मुक्ति बोध ने जिस 'ब्रह्म राक्षस' की अभिकल्पना की है, इसकी परम्परा भी अति प्राचीन है। 'ब्रह्म राक्षस' कुछ और नहीं कविका अवचेतन मन हीं है जो आनन्द की खोज में भटकता है। आनन्द की प्राप्ति के लिए तो मानव आदिकाल से प्रयत्न शील है।

नए कवि अति यथार्थवादी प्रवृति का भी नवीनता के सम्बन्ध में पर्याप्त शंख फूंक रहे हैं, किन्तु, यह अति यथार्थवादी प्रवृति भी नए कवियों को निराला आदि पूर्ववर्त्ती कवियों से विरासत में मिली है। 'नए पत्ते' तथा कुछ बाद की रचनाओं में भी ये तत्व प्राचुर्य के साथ वर्तमान हैं।

इसके अतिरिक्त परम्परागत पौराणिक कथाओं, पात्रों और घटनाओं पर आधृतकियत् रचनाएँ—'अन्धायुग' 'कनुप्रिया', 'संशय की एक रात' 'आत्मजयीं' आदि नए युग बोध के साहचर्य में नए कवि के परम्परा के प्रति औदार्य को प्रकट करती है। नवींन युग बोध एवं नवीन वैचारिक पृष्ठ भूमि की दृष्टि से ये रचनाएँ नई कविता की श्रेष्ठतम परिलब्धि हैं।

समग्रत: नई कविता आकाश से गिरी कोई वस्तु नहीं, वह इसी धरातल की उपज है। उसका विकास 'परिवर्तिन संसारे' की पृष्ठ भूमि पर हुआ है। वृक्ष प्राय: पुराने हीं रहते हैं, वसन्त स्वरस संचार से उनमें नावीन्य एवं सौरस्य का आविर्भाव कर देता है। यहीं कार्य कवि का है। वह भी नवीन वैचारिक शक्ति एवं नवीन युग बोध के प्रभावसे परम्परा को नए महल में पहुंचा देता है, जहाँ वह अन्त:पुर में किसी अल्हड़ यौवना नायिका के समान विभूषित होकर चमक उठती है। यह नयापन 'प्लास्टिक सर्जरी' सदृश कृतिम है, ऊपरी है। इस कृत्रिम नएपन ने हिन्दी कविता को बिना नाथ पगहिया के बैल के समान हिन्दी साहित्योद्यान को उजाड़ डाला है।

निष्कर्षत: नई कविता परम्परा का नया रूप तो कही जा सकती है, पर परम्परा से भिन्न नहीं। उसमें परम्परावादी तत्व अन्त: सलिला के समान सदैव प्रवाहित होते हैं।

डूबती आवाज

—गंगा प्रसाद राजौरा

अब तो पटरी की दुकानें ऐसे गायब हो गयी हैं जैसे गधे के सिर से सींग। किसी समय पटरी की दुकानों और उनके ग्राहकों के कारण बसें रेंगती सुई सी चलती थीं; और गली मुहल्ले के बच्चे मुफ्त में बस की यात्रा का आनन्द लेते थे।

कीकर वाले चौक पर एक सिरे से दूसरे सिरे तक पटरी पर दुकान सजा कर प्रायः सब्जी बेचने वाली औरतें बैठती थीं। सब्जीमंडी का शोर बदनाम है। फिर भी जहाँ की दुकानदार भी औरतें हों और ग्राहक भी औरतें हों वहाँ के शोर का क्या ठिकाना। इक्का-दुक्का मर्द भी बैठा होता पर उनकी अवाज नक्कारखाने में तूती की तरह लगती थी। वे सब्जी नहीं, कप प्लेट बेचते थे, चटके, हैंडल टूटे।

इधर दोपहर ढलती और उधर बाजार का शोर उभरता। वे दोनों भाई भी अपनी दुकान सजाते। उनके बराबर में रामली बैठती थी, सब्जी वाली। बड़े की आयु सोलह सत्रह वर्ष थी और छोटे की तेरह चौदह वर्ष। रामली के ग्राहकों की भीड़ और शोर साथ-साथ बढ़ता। एक पाव आलू के लिये पाव घंटे से चिल्ला रही है। दूसरी ने तमाम सब्जियों के भाव पूछ लिये है और अब अन्य सब्जी वालो के भावों का प्रसारण कर रही है। तीसरी झाबे में सजी भिंडियों की सजावट को नये ढंग से सजाती हुई बात भी करती जा रही है। तभी रामली चिल्लायी—"ऐ लुगाई, तुझे शरम न लिहाज, मूली छाँट रही है या खा रही है।"

कभी कोई औरत सब्जी छाँटती हुई कप-प्लेटों पर पैर रख देती तब छोटा भाई रौब से चिल्लाता—"ऐ परली तरफ हठ, कप क्यों फोड़ रही है।" बड़ा भाई दबी अवाज में कहता "अबे रामली के ग्राहकों को मत डॉट नहीं तो यहाँ बैठने नहीं देगी।"

छोटा और चीखता—"तो क्या माल खराब कराता रहूँ।"

बड़ा भाई मुँह बिचका कर हँसने का विफल प्रयास करता हुआ बुदबुदाता "टूटे फूटे मिट्टी के ठीकरों को माल कहता है।" फिर गरदन को झटककर गम्भीरता से सोचता—इस धन्धे से दोनों वक्त चूल्हा तो जलने लगा है। बीमारी और दो यूनियनों के चक्कर में पिता की नौकरी और उसकी पढ़ाई छूट गयी। कभी उसने दफ्तर में बाबू बनने का सपना लिया था। अफसर बनने की बात उसके दिमाग आयी ही नहीं। छोटे आदमी की छोटी इच्छा। उसे इस बात का आभास भी न था कि बाबू बनना भी टेढी खीर है।

बाजार में प्रायः जाने पहचाने चेहरे ही आते थे कुछ दिनों से दो बहनें प्रायः दिखाई देती थीं, जिन्होंने जवानी की देहलीज में अभी कदम रखा ही था। वो श्याम की दुकान से ही सब्जी लेती थीं। बाजार में सबको मालूम था कि बाप की निगाह बचाकर, श्याम सब्जी के साथ गल्ले से रेजगारी निकाल कर उनके झोले में डाल देता है। कई बार वे उनकी दुकान के सामने ललचाई निगाह लिये ठिठक जाती थी। उस समय बड़े का चेहरा डूबते सूरज सा लाल हो जाता था, अनजाने में।

वे छाँटती बिना हैण्डल के फूल वाले कप-प्लेट पर सौदा कभी नहीं पटता। छोटा दूगने दाम बताता। लड़कियाँ बड़े की तरफ देखकर एक दूसरे को कोहनियाँ मारती। बेबात हँसती। बड़े के मन में विकृत सी लालसा जगती। उसका मन करता कि खुद छाँटकर कपों से उनकी झोली भर दे। पर छोटा तब तक उन्हें दुकान से भगा देता। बड़ा सोचता चलो ठीक ही हुआ। वह मन ही मन हिसाब लगाता। नयी स्कीम सोचता जिससे आमदनी बढ़े। सोचता छोटे की पढ़ाई नहीं छूटनी चाहिये। अपनी आवाज में रौब लाने का प्रयत्न करता कि छोटे भाई से कहे कि वह दुकान पर आने के स्थान पर अपना मन पढ़ाई में लगाये। पर कह नहीं पाता उसे लगता कि छोटे के अभाव में दुकान चलाना उसके बस की बात नहीं है।

(शेष पृष्ठ ४ पर)

करुणा और सहिष्णुता

"हमारी सदा मान्यता रही है कि ईश्वर के अनेक रूप हो सकते हैं। हर भारतवासी को, भले ही वह कहीं जन्मा हो या कोई भी आस्था रखता हो, अपने उद्धार और मुक्ति मार्ग ढूढने की स्वतंत्रता रही है। साथ ही हमारे मनीषियों ने वैदिक युग से लेकर अब तक सदा ही हमें अपने साथी मानवों के प्रति करुणा और सहिष्णुता का पाठ पढ़ाया है। गाँधी जी ने इस तत्व का सार उनके प्रिय शब्द 'अत्योदय' में व्यक्त किया। अत्योदय का अभिप्राय है निम्नतम और निर्धनतम वर्गों के हितों की रक्षा और कल्याण जिसके लिए प्रत्येक समाज को संलग्न करना चाहिये।"

—श्री अटल विहारी बाजपेयी

(संयुक्त राष्ट्रसंघ में दिये गये भाषण से)

अक्टूबर, १९७७

रजिस्ट्रेशन नं० आर० एन० २६६७४/७४

पोस्टल रजिस्ट्रेशन एल० डब्लू/एन०पी १४७

मुद्रक प्रकाशक अवध किशोर पाठक द्वारा विश्वास प्रेस अमीनाबाद के लिए उत्तर प्रदेश सहकारी मुद्रणालय, ८५, तिलपुरवा हुसेनगंज लखनऊ में मुद्रित एवं डी-२/२ पेपर मिल कालोनी लखनऊ-२२६००६ से प्रकाशित

सामाजिक घोषणा

पर

युवा हस्ताक्षर

वर्ष-३ अंक-१० नवम्बर, १९७७

गाँधीवादी विचार धारा के अतिरिक्त इस देश पर अब और दूसरी विचार धारा लादी नहीं जा सकती। सरकार बदलने से यह न समझ लेना चाहिये कि तदनु-कूल समाज भी बदल गया। अतएव जन जागरण का अभियान हमें तब तक चलाते रहना है, जब तक गाँधीजी के सिद्धान्तों पर गठित प्रजातन्त्र परिपुष्ट न हो जाये"

—हेमवतीनन्दन बहुगुणा
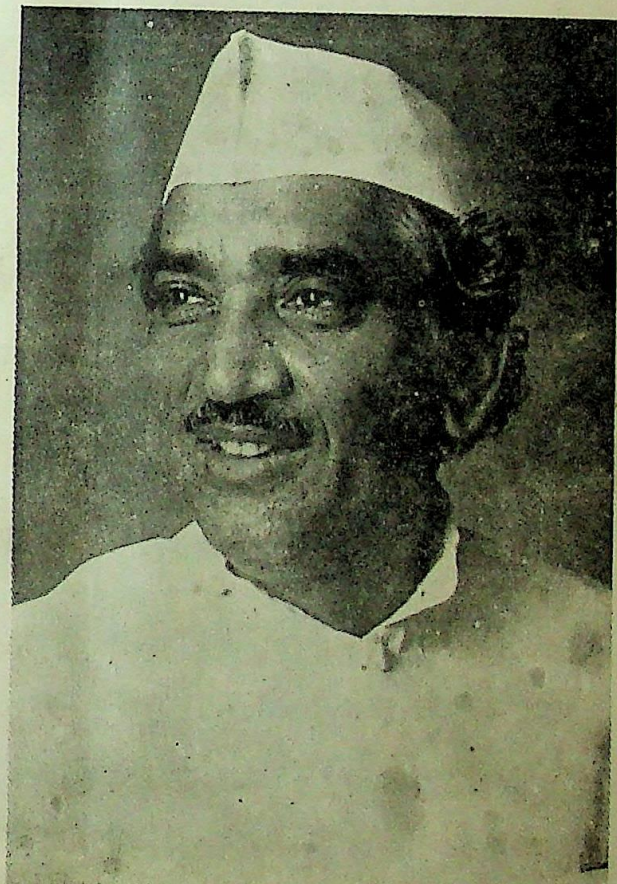
ब्रह्मचर्य

एक बार एक कालेज के छात्र ने मुझसे पूछा 'हमें यह तो बताइये कि हमारी बहन रास्ते से जा रही है और कोई गुंडा उसे छेड़ रहा है, तो क्या हम अहिंसक रह जायं? चुप रह जायं?'

मैंने कहा 'चुप क्यों रहो, पर यह तो बताओ कि आज तक ऐसे मौके कितने आये?'

उसने कहा 'मौक़े नहीं आये, लेकिन आ सकते हैं।'

मैंने कहा 'ठीक है, अगर कभी मौका आये तो तुम क्या चाहते हो?'

बोला 'हम चुप कैसे बैठ सकते हैं'?

मैंने कहा 'हाँ चुप मत बैठो।'

बापूजी उस समय जीवित थे। बापू के आधार पर मैंने उसे कुछ समझाया और कहा 'पहले से ऐसा विचार मत करो। लेकिन अगर देखो भी कि ऐसा हो रहा है तो उसकी गर्दन उतार लो। मैं गांधी से तुम्हारे लिये अहिंसा का प्रमाणपत्र ला दूंगा।'

वह बहुत खुश हुआ कि यह गाँधीवाला कहता है कि गाँधी से भी अहिंसा का सर्टीफिकेट ला दूंगा।

मैंने उससे कहा 'पर एक शर्त है।'

बोला 'वह क्या?'

यही कि जिन लड़कियों के साथ तुम कालेज में उठते बैठते हो, खेलते कूदते हो, पढ़ते-लिखते हो उनकी तरफ देखने की तुम्हारी अपनी दृष्टि कैसी है, और उस दृष्टि में यदि फर्क है तो गर्दन उतारने के कार्यक्रम का आरम्भ अपने से कर दो।

बस, इतनी शर्त उसने सुनी और वह बैठ गया।

—दादा धर्माधिकारी

(सर्वोदयदर्शन से)

सामाजिक घोषणा
पर
युवा हस्ताक्षर

संरक्षक
श्री सत्य प्रकाश राणा

०

सम्पादक
अवध बैरागी

०

पत्रिका में उधृत विचार लेखकों के हैं उनसे सम्पादकीय सहमति अनिवार्य नहीं।

०

वार्षिक शुल्क—दस रुपये
एक प्रति—एक रुपया

०

सम्पादकीय कार्यालय :
डी-२/२ पेपर मिल कालोनी
लखनऊ-२२६ ००६

आवरण चित्र
श्री हेमवती नन्दन बहुगुणा
पेट्रोलियम, रसायन व उर्वरक मंत्री, भारत

(कवर पेज ४ का चित्र ''आज'' से साभार)

विषय-सूची

राहत के लिये हजारों हाथ की जरुरत है

पिछले दिनों आंध्र में आये तूफान और उसकी व्यापक विनाशलीला की कल्पना से ही रोंगटे खड़े हो जाते हैं। यह विनाश इतना व्यापक है कि अभी तक जन धन की बर्बादी का सही आंकड़ा सरकार इकट्ठा नहीं कर पायी है। मौत तो दुनिया की सबसे बड़ी और शायद एक मात्र सच्चाई है। मौत आती भी कई तरह से है किन्तु किसी दुर्घटना में हुई मौत बड़ी हृदय विदारक होती है। लाखों लोगों का एकाएक बेघर हो जाना, एक अनिवच घटना है। इस सर्वनाशी जलप्रलय की आघातों से जो बच गये हैं उनकी हर संभव सहायता करना मानव का सबसे बड़ा धर्म है। सन्तोष की बात है कि हजारों हाथ दुख बंटाने में जुट गये हैं। युवारश्मि भी तूफान पीड़ितों के दुख में भागीदार है, और अपने समस्त पाठकों, सदस्यों, लेखकों से आग्रह करती है कि वे "युवारश्मि तूफान पीड़ित सहायता कोष" में दान दें। दान की रकम, चेक, पोस्टल आर्डर, पे आर्डर, डिमान्ड ड्राफ्ट तथा नकद धनादेश द्वारा भेजी जा सकती है। दान की न्यूनतम राशि पाँच रुपये है। सभी दान - दाताओं के नाम उनके पते सहित युवारश्मि में प्रकाशित किये जायेंगे। युवारश्मि की वह प्रति जिसमें उनके नाम पते प्रकाशित होंगे उनकी सेवा में निःशुल्क भेजी जायेगी।

भाषा का सवाल

पिछले दिनों लखनऊ में मीर अकादमी के तत्वावधान में आयोजित एक पुस्तक विमोचन समारोह में बोलते हुए केन्द्रीय पेट्रोलियम, रसायन एवं उर्वरक मंत्री श्री हेमवतीनन्दन बहुगुणा ने कहा कि उर्दू का मुकाबला हिन्दी से नहीं किया जाना चाहिए। हिन्दी राष्ट्र भाषा है। और वह समस्त भारत में बोली जाती है। श्री बहुगुणा ने उर्दू लिपि को अरबी और फारसी के बीच एक पुल बताया। साथ ही उर्दू की लिपि बदलने की हिमायत करने वालों के लिए उन्होंने स्पष्ट कहा कि किसी पुल को तोड़ना अकलमन्दी की बात नहीं।

भाषा के सवाल पर तमाम तरह की बातें अर्से से कही जा रही हैं। किन्तु जो लोग गहराई से इस तथ्य को महसूस करते हैं कि भाषा उच्चारण, शब्द विन्यास, और लिपि की सहजता आदि अपनी खूबियों के कारण ही लोगों के दिल दिमाग में छा जाती हैं, वे तमाम लोग श्री बहुगुणा के विचार से सहमत होंगे। भाषा भावों की वाहिका होती है। एक संवेदनशील मन में एक कारण के संदर्भ में समयान्तर से अलग अलग भाव आते हैं। हिन्दी के 'अनुभव' में अभिव्यक्ति कि जो गहराई है अंग्रेजी का 'फील' करना उससे हल्का पड़ जाता है और उर्दू का 'महसूस' करना कुछ ज्यादा वजन रखता है। हमारे रोज के बोल चाल में हिन्दी उर्दू, अंग्रेजी, पुर्तगाली, बंगला के तमाम ऐसे शब्द आ गये हैं जिन्हें समस्त पूर्वाग्रहों को छोड़कर हमें अपनाना ही होगा, 'आज बाजार बन्द है' हिन्दी में हम किस प्रकार कहेंगे! आलपीन, तारपीन, दूरबीन आदि पुर्तगाली शब्दों को हम क्यों न अपना लें। आवश्यकता तो इस बात की है कि भाषा में मुकाबले का सवाल उठाने के बजाय अभिव्यक्ति की सहजता और सुन्दरता पर ध्यान दिया जाये। यह मानकर सभी को चलना चाहिए कि एक हिन्दी राष्ट्रभाषा है, बाकी सभी भाषायें हिन्दी की छोटी बहनें हैं साथ ही हर आदमी को हर भाषा की जरूरत है क्योंकि इसके बिना 'वसुधैव कुटुम्बकम्' वाली बात निरर्थक हो जायेगी।

जनजागरण और लोकतंत्र

—लक्ष्मी नारायण चौधरी

लोकतंत्र में जन - जागरण का अत्यन्त महत्व है। दूसरे शब्दों में यदि यह कहा जाये कि जन-जागरण वह आधार शिला है जिस पर लोकतंत्र टिका हुआ है तो अतिशयोक्ति न होगी। राजतन्त्र और अधिनायक तन्त्र में तो जन - जागरण का कोई महत्व नहीं होता क्योंकि इन शासन प्रणालियों में तो एक या अधिक से अधिक दो चार की बातें सभी को अनिवार्य रूप से माननी पड़ती है। फिर जन-जागरण की क्या आवश्यकता ? हां यदि राजतन्त्र और अधिनायक तंत्र बर्बरता पूर्वक आम जनता से व्यवहार करें तो व्यापक जन जागरण के द्वारा उसका खात्मा किया जा सकता है। केवल शासन प्रणाली ही नहीं, तमाम सामाजिक बुराइयों, कुरीतियों पर भी जन जागरण के माध्यम से विजय पाया जा सकता है। सती प्रथा की समाप्ति के लिए बंगाल के प्रसिद्ध समाज सुधारक राजाराममोहन राय ने सती प्रथा को एक बहुत बड़ी सामाजिक बुराई कहा और कुछ प्रबुद्ध लोगों की एक टीम बनाकर जनता में भावना भरी, इस बुराई के खिलाफ व्यापक जनजागरण किया और इस प्रकार उन्हें सफलता मिली। अंग्रेजी सत्ता को समाप्त करने के लिए महात्मा गांधी ने भी जनजागरण का माध्यम ही अच्छा समझा, क्योंकि उनका विचार था, कि थोड़ी फौज के लड़ने खून खराबा करने से कोई नतीजा नहीं निकलेगा, हिंसा होगी, प्रतिशोध की भावना पनपेगी जिसका कोई अन्त नहीं होता। इसलिए उन्होंने असहयोग का रास्ता अपनाया। विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार किया। सरकार से सहयोग करना बन्द कर दिया ऐसी स्थिति में सत्ता डगमगाई और बड़ी शान्तिपूर्ण और अहिंसक तरीके से आजादी मिली। आजाद होने के लिए जितने संघर्ष और जागरूकता की जरूरत है, आजाद बने रहने के हेतु उतना ही जागरूक बने रहना जरुरी है।

आजादी के बाद के तीस वर्षों में हमारा लोकतंत्र एकाधिकार वाद का जामा ओढ़कर गाँधी जी के बताये रास्ते से भटकता चला गया और इस सीमा तक पहुंचा जहां उसकी दमनीयता के आगे तानाशाही का रवैय्या भी धूमिल हो गया। आपात् काल में सरकार के तानाशाही रवैये का प्रतिवाद करने वाले सारे नेता जेल में डाल दिये गये, वे असमर्थ हो गये, लेकिन जनता ने इस दमन को बर्दास्त नहीं किया जनजागरण इतना इतना व्यापक रुप से हुआ कि हर व्यक्ति घृणा, क्रोध और क्षोभ से भर उठा। और एक दिन वह भी आया जब न केवल तानाशाहों ने बल्कि पूरी दुनियां ने आश्चर्य चकित होकर देखा कि किस प्रकार कागज के टुकड़ों से जागरूक जनता ने देश का इतिहास बदल दिया। लेकिन इसके फलस्वरूप जो परिवर्तन आया है उस पर भी नजर रखना बहुत जरुरी है। सत्ता में पहुंचकर व्यक्ति विचलित हो सकता है। जैसीकि अतीत से शिक्षा मिली है। इसलिए जनजागरण का सिलसिला चलते रहना चाहिए। गांधीवादी विचारधारा एक ऐसी सर्वमान्य विचारधारा है जिसमें दुनियां की सभी विचारधाराओं की अच्छी और सारगर्भित बातों का समन्वय है। मनुष्य अपनी मनुष्यता को कायम रखते हुए तभी अपने लक्ष्य पर पहुंच सकता है जब वह आपस के तमाम भेदभाव को भुलाकर एक जुट होकर
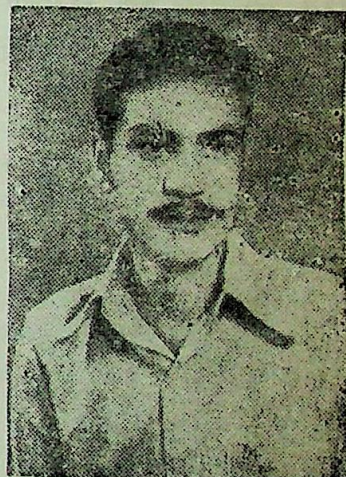
लेखक

अग्रसर हो। जातिधर्म और सम्प्रदाय पर आधारित राजनीति न तो देश को आगे बढ़ा सकती है, और न तो नागरिक की सुरक्षा कर सकती है। गांधीवाद में भेदभाव कि किसी भावना का कोई स्थान नहीं है और इसी लिए लोकतन्त्र की रक्षा के लिए जनजागरण का रास्ता गांधी जी के बताये रास्ते के अनुरूप होना चाहिए।

समाचार

प्रेस की स्वतन्त्रता आवश्यक

सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय द्वारा जारी एक घोषणा पत्र में कहा गया है कि प्रेस की स्वतन्त्रता सभी स्वतन्त्रताओं की मूल है। जहाँ हम सूचनाओं का आदान-प्रदान स्वतन्त्रता पूर्वक नहीं कर सकते वहाँ कोई अन्य स्वतन्त्रता

लाल कृष्ण अडवानी

सुरक्षित नहीं रह सकती। एक लोकतान्त्रिक समाज में समाचार पत्र समाज का प्रहरी होता है। उसे यह अधिकार है कि वह सरकार की कड़ी से कड़ी आलोचना कर सके बशर्ते आलोचना देश और जन सामान्य के हित में हो।

अत्याचार करने वालों की सम्पत्ति जब्त होनी चाहिये।

—जगजीवन राम

रक्षा मंत्री श्री जगजीवन राम ने हरिजनों एवं कमजोर वर्गों पर हो रहे अत्याचारों पर गहरा क्षोभ व्यक्त करते हुए कहा है कि बेलछी के बाद धर्मपुरा में ऐसी निंदनीय घटना हुई और सरकार को यह जानकारी नहीं कि इस क्षेत्र में तनाव है। उन्होंने कहा कि यह मामला मैं केवल हरि-

जगजीवन राम
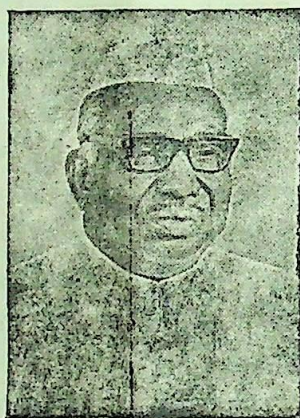
जनों पर अत्याचार का नहीं मानता बल्कि यह तो वास्तव में सर्वहारा पर किया गया अत्याचार है।

मँहगाई न घटी तो कॉग्रेस आंदोलन छेड़ेगी।

—चन्द्रजीत यादव

भूतपूर्व केन्द्रीय इस्पात और खान मंत्री श्री चन्द्रजीत यादव ने फैजाबाद में एक सभा को सम्बोधित करते हुए कहा कि प्रधान मंत्री के आश्वासनों के बावजूद मँहगाई में कोई कमी नहीं आई है और ऐसा लगता है कि जनता सरकार मँहगाई
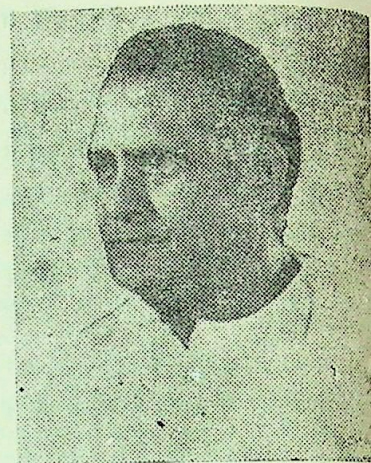
चन्द्रजीत यादव

कम नहीं कर पायेगी। उन्होंने कहा कि यदि मँहगाई कम नहीं हुई तो जबरदस्त आन्दोलन छेड़ा जायगा।

हिन्दी साहित्य में बुन्देली लोक गीतों का योगदान

—अजय कुमार दुबे

किसी भी देश के साहित्य में उस देश के जनता जनार्दन के हृदय से निकले उदगारों का योगदान अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। जनता जनार्दन के मुखार विन्दु से निकली क्षण-क्षण की भावनाओं में उनका हृदय जैसे निकल पड़ा दिखाई देता है। इस स्वाभाविक साहित्य का सृजन प्रसन्नता के क्षणों में, आडम्बर से कोसों दूर, अशिक्षित हृदय, टूटी फूटी भाषा में फूट पड़ता है। यही भावनामयी पंक्तियाँ लोक गीत का रूप धर कर अपनी सुन्दर छटा से मानव का मन मोह लेती हैं।

परिवर्तनशील संसार में विभिन्न परिस्थितियों से थका मानव मन प्रेमालाप करके अपने स्नेही को टोकते हुए अपने जीवन की व्यस्तता पर व्यंग सुनाता है—बुन्देली भाषा के सम्राट 'ईशुर की रचना देखिये—

"ऐंगर बैठ लेओ कुचकाने,
काम जनम भर रोने।
सबको लागौ रात जियत भर,
जो नई कमऊ बड़ाने।
करि पी काम धरी भर के
बिगर कछु नई जाने।
ई धंधे के बीच 'ईसुर'
करत-करत मर जाने।।

शृंगार के अन्तर्गत सिखावन का वर्णन कितना कलात्मक है—

बाँके नैन कजरवा आँजौ,
बलम बिना न साजौ।
दुलहिन करे दिखैया को है,
वौ पर देस बिराजौ।
आई बड़ी बड़न के व्याई,
अपनौ कुल को लाजौ।
करती कौन काम का कहिये,
कजरौटी न मांजौ।
साजौ नई लगत 'ईसुर'
वे औसर को बाजौ।।

लोक गीतों की सहजता एवं प्राकृतिक उन्मेग के बारे में रामनरेश त्रिपाठी ने लिखा है, "ग्राम गीत प्रकृति के उदगार हैं। इनमें अलंकार नहीं केवल रस है, छन्द नहीं केवल लय है, लालित्य नहीं माधुर्य है। ग्रामीण मनुष्यों में स्त्री पुरुषों के मध्य आसन पर बैठकर प्रकृति गान करती है। प्रकृति के गीत ग्राम गीत हैं।

देवेन्द्र सत्यार्थी का यह वाक्य लोकगीतों के सम्बन्ध में कहा जाता है—"लोकगीत किसी संस्कृति के मुंह बोलते चित्र हैं।"

मानव जीवन के प्रत्येक क्षण से लोक गीतों ने हाथ मिलाया है ग्रामीण जन-जीवन का चप्पा-चप्पा लोक गीतों से बिंधा पड़ा है। लोक-गीत जो कि हर क्षेत्र के अनुसार वहाँ की संस्कृति की अभिव्यक्ति का माध्यम है, बड़ी ही सरलता से वहाँ की संस्कृति को परखा जा सकता है। परन्तु प्रेम सम्बन्धी गीत चाहे किसी भी क्षेत्र के हों, केन्द्र भावना एक ही होती है प्रस्तुत पद में प्रिय की आँखों की तेजी की अभिव्यक्ति का ढंग ही निराला है—

नैना हैं बरछी से पैने,
मारे रजुआ तैने।
इनकी चोट बचावैं खातिर
जतन करे है मैंने।।

यौवन के मादक आगमन को कवि ने अपनी अभिव्यक्ति से चार चाँद लगा दिये हैं—

आ गई रजउ पै भरदर ज्वानी;
दुनिया देख ललानी।
हुमसे फिरत उड़तनी ऊपर,
छतरी सी धर तानी।
जो मिलमात गैल खौर न,
मैं देखत ही मुसक्यानी
'इसुर' कईयक फिरत पिय से,
कबहु मिलै जो पानी।।

हिन्दी साहित्य के अग्रज कवि गोस्वामी तुलसी ने भी अपनी रचनाओं में बुन्देली भाषा का प्रयोग बहुत सफलता के साथ किया है। तुलसी ने अपने शब्दकोश को बुन्देली देन बताया है। तुलसी ने लोक-सम्पर्क और पर्यटन से बुन्देलीं शब्दो के उपयोग हेतु अपने को सुपात्र सिद्ध कर दिया है। चित्रकूट को बुन्देल खण्ड का तीर्थ स्थान माना जाता है। इसका वर्णन तुलसी ने अपने साहित्य मे अपनी कैसी भाषा का प्रयोग किया है—

चित्रकूट, और छे,
कलिंजर, उन्नाव तीर्थ
पन्ना खजुराहों जहां
कीर्ति भूमि है।

अमर अनन्दनीय,
असुर, निकन्दनीय,
बन्दनीय विश्व में,
बुन्देलखण्ड भूमि है।"

बुन्देली भाषा के कवियों ने अपनी रचनाओं से बुन्देली को जहां समृद्धि प्रदान की वहां हिन्दी साहित्य को अनमोल सम्पदा भी दी है। इस सम्पदा को इकट्ठा करके हमारा प्रखर हिन्दी साहित्य विश्व के किसी भी साहित्य से पीछे नहीं रह सकता। गीत साहित्य में जहां बुद्धिमत्ता, मौलिकता, कृत्रिमता दिखाई देती है वहीं लोक गीत में स्वाभाविकता, और मौलिकता और अकृत्रिमता अपना मुंह खोले प्रसन्नता, दुख-सुख, खट्टी - मीठी तीखी अनुभूतियों का घूंघट पहने स्वागत करती दृष्टिगोचर होती है। लोक गीत में स्वाभाविक एवं अकृत्रिमता का भाव होता है और भी अश्लीलता की अनुभूति नहीं होने पाती।

हिन्दी साहित्य को बुन्देली साहित्य सृजन ने कितना कुछ दिया है यह इससे जाना जा सकता है कि श्रीराम चरण हयारण मित्र ने अपनी पुस्तक बुन्देलखण्ड की सस्कृति और साहित्य नामक पुस्तक एवं लोक गायनों द्वारा अपनी संस्कृति एवं साहित्य का विकास किया, इसके अतिरिक्त श्री कृष्णानन्द गुप्त ने 'लोकवार्ता' नामक पत्र का सम्पादन किया। आपने अन्य पत्र - पत्रिकाओं के माध्यम से बुन्देली को उच्च स्थान दिलाया। श्री बनारसी दास चतुर्वेदी ने 'मधुकर' पत्रिका निकाली। लोक गीतों में शिवसहाय चतुर्वेदी ने उल्लेखनीय कार्य किया। क्योंकि उनकी तीन कवितायें प्रकाशित हुई—'गौने की विदा', पाषाण नगरी', 'बुन्देलखण्ड के गीत'। श्यामसुन्दर बादल की बुन्देली का फाग साहित्य' नामक, पुस्तक हाल ही में प्रकाशित हुई।

ऋतु गीतों के अन्तर्गत बुन्देली लोक रागिनी को 'सैर के नाम से जाना जाता है। छतरपुर, मउरानीपुर, झांसी के जिलों में ही इसका अधिक प्रचलन है। 'सैर' छन्द के रूप में एक दोहा, सोरठा आदि के बन्द लगाकर प्रस्तुत करने की पद्धति का विकास हुआ जिसे 'झूमका' नाम से जाना जाता है—

"बुद्धिमान पंड़ित चतुर
सावधान निरज्ञात
कोउ बात बाजी समद,
वाज आन के खाज।"

एक पुरानी परिपाटी की 'सैर' दृष्टव्य है।

"रेवा के मांय सारंग में सर सिज फूले अलि गूंज गूंज तिने सवई सुद वुद भूले।

इस लोक रागिनी को लोक कवि प्रतियोगिता में फड के नाम से जाना जाता है। 'राछरे' नामक लोक गीत पावस ऋतु में गाया जाता है। आनन्द, उल्लास एवं करुण रस का समवेत स्वर इनमें देखा जाता है। एक उदाहरण देखिये—

"बदरिया रानी बरसीं विरन के देस
काना से आयी कारी बदरिया,
काना बरस गये मेह अगम दिशा से,
आई बदरिया, पच्छिम बरस गये भे"
बदरिया............

पड़वाजी में रंगत के फागों के अतिरिक्त अधर पहेलियां लता पक्ष, चित्र काव्य जैसी अनुप्रासांगिक पांगे भी बुन्देली कविता में मिलता है—

"होत खड्ग धार सौ पैनी,
देखत भई बे चैनी।
मींन, मलीन देनी गति खंडा,
वगजन मद मृग नैनी।
ऐसी दई रचिरता विधि ने,
चन्द्रा रूप न वेनी।
ख्याली राम, पाय ऐसी तन,
काम अनन्त हिएही।

इसके अतिरिक्त 'छन्दकाउ' और 'डिड़ खुरियाउ' पांगे भी प्रचलित है। वारहमासी, तीर्थ यात्रा सम्बंधित गीतों को 'रमटेरा' या 'टप्पे' कहा जाता है—

इस प्रकार से बुन्देली भाषा का हिन्दी साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान है। खेद का विषय है कि इस ओर जितना ध्यान दिया जाना चाहिए था नही दिया गया। अगले वर्षों में आशा की जाती है कि बुन्देलखन्ड विश्वविद्यालय में बुन्देली भाषा को उचित स्थान एवं सम्मान मिलेगा। इस बुन्देली भाषा के विकास में उल्लेखनीय कार्य छतरपुर रेडियो भी कर रहा है। आशा है कि उत्तर प्रदेश सरकार भी इस ओर समुचिन ध्यान देकर इसकी समृद्धि को कम न होने के लिए प्रयास करेगी।

बी डी बी का तबादला

—गंगाप्रसाद 'राजौरा'

नाना का मरना और अकाल का पड़ना, कुछ वैसा ही संयोग है जैसे टांट का मुंड़ना और ओलों का पड़ना। बी० डी० बी० अर्थात् भगवानदास बघेरवाल उर्फ बुद्ध देव बांस का ट्रांसफर होकर हमारे दफ्तर में आना और देश में आपात्स्थिति लागू होना कुछ कलिकाल का संयोग ही था।

हमारे दफ्तर में आने से पूर्व ही बी० डी० बी० साहब चर्चा का विषय बन चुके थे। लोगों ने उनके नाम के अंग्रेजी संस्करण का हिन्दी अनुवाद बुद्ध देव बाँस किया था। जो उनकी खल्वाट खोपड़ी पर चरितार्थ भी होता था। उनका रौब, गुस्सा, स्टाफ के साथ चाणक्य नीति, उनकी निष्काम बौद्ध मुद्रा आदि अनेक बातों की विभिन्न कहानियां हमारे यहां प्रचलित हो चुकी थी। उनके आने से पूर्व बड़े-बड़े बिग-डैल बनैले कलर्कों ने स्वयं को सुधारने की शुरुआत कर दी थी। जो चपरासी हर साल गरम और ठंडी वर्दियों तथा हर महीने उन्हें धोने का वाशिंग अलाउन्स लेते थे, पर वर्दी कभी नहीं पहनते थे, उन्होंने टूटे बक्सों से पुरानी वर्दियां ढूंढ़ ली थीं।

आनन्द बाबू उस दिन दफ्तर नहीं आ सके जिस दिन साहब हमारे दफ्तर में पहले-पहल आये। दूसरे दिन जब वे दफ्तर में घुसे और उन्होंने बी० डी० बी० साहब को देखा तो उन्हें पांव से जमीन और नाक से चश्मा खिसकता हुआ मालूम हुआ। पर सीधे-सादे लगने वाले आनन्द बाबू सफल कहानीकार थे। उन्होंने मन ही मन एक कहानी गढ़ ली। साहब के बुलाने से पूर्व ही वे स्वयं कोहनियों से पैंट को ऊँचा करते हुये केबिन में चले गये।

घूमती कुर्सी पर, पंखे के नीचे साहब अलसाये से ऊंघ रहे थे। तभी आनन्द बाबू ने उनके चरण पकड़ लिये। बी० डी० बी० ने पहले सोचा कि इस मक्कार को टुड्डा मार कर भगा दें। पर किसी अज्ञात प्रेरणावश उनका दिल जीवन में पहली बार पसीज गया। उठो तुम कौन हो? वे गुरु गम्भीर वाणी में बोले। "सर, मैं आनन्द हूं, आपका ही बन्दा हूं, आपके बराबर वाले गाँव का, आपकी जाति का," गिड़गिड़ाते हुये आनन्द ने कहा। "इस जन्म में आप बाँस है मैं क्लर्क हूं। पूर्व जन्म में आप गुरु थे मैं शिष्य था।

अनायास ही बी० डी० बी० उर्फ बुद्ध देव बाँस को तीसरी जमात में पढ़ी—बुद्धं शरणं गच्छामि, वाली पंक्तियां याद आ गयीं। उन्होंने सहज भाव से अभयदान करते हुए दाहिना हाथ उठा दिया। इस मुद्रा में वे पारम्परिक बुद्ध प्रतिमा से प्रतीत हो रहे थे। फिर उन्होंने आदेश दिया—आनन्द आज से तुम लीव रिजर्व हुए। जिस रोज कोई बाबू नहीं आयेगा, उस रोज तुम उसके विभाग का काम देखोगे। बाकी समय समाचार संग्रह और शाम को खबरों का खुलासा। साहब के बंगले पर मेमसाहब के कामों में हाथ बंटाना आनन्द बाबू ने अपनी इच्छा से शुरू कर दिया।

आनन्द बाबू तो गेंडे की तरह गरदन अकड़ाते हुए बाहर आये और साहब ने घंटी को ऐसे दबाया जैसे चील चूजे को दबोच लेती है। लीलूराम चपरासी बेचारा कान में बुझी बीड़ी खोंसता हुआ जब अन्दर पहुंच गया तब ही उन्होंने घंटी को छोड़ा। आनन्द को शिष्य बनने के बाद अब संघ अर्थात् यूनियन की बारी थी। साहब ने संघ सचिव अर्थात् यूनियन के सेक्रेटरी को बुलाने की आज्ञा दी।

संघ सचिव मिस्टर वर्मा आदतन बुद्ध प्रकृति के व्यक्ति हैं और मध्यम मार्ग में विश्वास रखते हैं। उनका सिद्धान्त है—हां जी, हां जी कहना और उसी गांव में रहना। तथाकथित ट्रेड यूनियनों की भाँति वे भी दो नावों में चलते हैं। मैनेजमेंट और वर्कर दोनों को खुश रखने के चक्कर में किसी न किसी को डुबोते रहते हैं। लिहाजदारी बरतना उनका निजी गुण है। उचितानुचित मांग के लिए वे सहजभाव से भारत सरकार की भाँति आश्वासन दे सकते हैं।

बॉस के केबिन में जाने से पूर्व उन्होने फटे कालर को ठीक करते हुए बाकी लोगों को ऐसे देखा जैसे वन-प्रस्थान से पूर्व गौतम ने यशोधरा एवं राहुल को देखा होगा। अन्दर दो महात्माओं में क्या प्रवचन हुआ यह सर्वथा गोपनीय रहा।

पर जैसे कुल्हिया में गुड़ नहीं फूट सकता, नारी का गर्भ और इश्क व मुश्क नहीं छिपते वैसे ही कुछ देर बाद एक मेज से दूसरी मेज पर आफिस आर्डर दौड़ने लगा। भारत सरकार के बजट पर जैसे मिश्रित प्रतिक्रिया होती है उसी प्रकार इस आफिस आर्डर पर कुछ लोग कान खुजा रहे थे, कुछ हँसी का गला घोंट रहे थे, इस आफिस आर्डर के अनुसार—

१. समय पूर्व आना, समय पश्चात जाना,
२. चाय-पान गप्प गोष्ठी बन्द,
३. केजुअल लीव अर्थात आकस्मिक अवकाश हेतु एक दिन का नोटिश या स्वीकृति ली जाय,
४. आफिस टेलीफोन का उपयोग बन्द,
५. सीट छोड़ने से पहले बड़े बाबू से अनुमति ली जाय।

साथ ही बड़े बाबू को एक डायरी दी गई जिसमें हर बाबू के आने-जाने, चलने-फिरने का दैनिक चिट्ठा तैयार किये जाने का उन्हें आदेश हुआ।

पहली दो बातें तो लोगों के दिमाग में किसी प्रकार बैठ गयीं पर अन्य बातें लोगों के गले नहीं उतरती थीं। आधे घंटे बाद बाबू बिहारी लाल एक हाथ उठाये दूसरे से पैंट को पकड़े बड़े बाबू की मेज के पास खड़े, स्कूली लड़के की तरह आज्ञा माँग रहे थे—साहब पेशाब कर आऊँ। फिर बाबू प्यारे लाल को प्यास लगी थी, और फिर तो एक सिलसिला शुरु हो गया। बड़े बाबू माथा पीट रहे थे। अन्दर जाने का साहस नहीं और बिगड़े बाबुओं से उलझे कौन? बेचारा बीच का बाबू।

बी० डी० बी० सब समझते हुए शीशे से झाँक रहे थे और स्मित मुस्कान का गला घोंट रहे थे। निश्चिन्त, निष्काम शान्त मुद्रा।

दूसरे दिन सुबह-सुबह लेटलतीफ का फोन था। बड़े बाबू ने फोन उठाया। आवाज थी—"सर एक स्कूटर वाला मेरी साइकिल से एक्सीडेंट करना चाहता है, उसका इरादा साइकिल के साथ मेरी टाँग तोड़ने का है। मैंने उसे समझाया है कि मैने कैजुअल लीव का नोटिश नही दिया है, पर वह मानता नहीं है, सर, यदि आप मुझे छुट्टी दे दें तो मैं टाँग तुड़वा लूं। वह बेवकूफ टेलीफोन के बाहर खड़ा है, मुझे डर है कि मेरी टांग के साथ बेचारे सरकारी बूथ को न तोड़ दे।" बड़े बाबू क्या जवाब दे। डायरी के चक्कर से वे अलग परेशान थे। दफ्तर का काम करें या लोगों का रोजनामचा तैयार करें।

मिस सुजाता स्टेनो है। उस सुजाता के हाथों खीर खाकर सिद्धार्थ को बोध प्राप्त हुआ था और बुद्ध कहलाए। इस सुजाता को चाय पिला कर दफ्तर के बाबू बुद्ध बनते थे। फोन की पाबन्दी से सबसे अधिक परेशानी सुजाता को हुई। उसके सर्वाधिक फोन आते थे और वह भी खुलकर करती थी। मानों दफ्तर का फोन न हो फर्सत का प्रेमी हो। उसकी परेशानी को दफ्तर के मालिक ने दूर किया। अन्य किसी के आवश्यक फोन को बन्द कर दिया जाता था, पर सुजाता को फोन की पूरी छूट थी। बाद में सुजाता ने बताया कि उदारमना बी० डी० बी० नयनलोभी व कर्णलोलुप थे। रसिक प्रवृत्ति से प्रेरित हो उन्होने छूट दी थी।

एक बाबू की नई-नई शादी हुई थी और वह साथी से बीबी के बारे में धीमे-धीमे बतिया रहा था। उनकी धीमी-धीमी फुसफुसाहट में आनन्द बाबू को षडयन्त्र का आभास हुआ क्योंकि बातों में बार-बार बीबी शब्द आ रहा था अतः आनन्द बाबू ने इसे बी० डी० बी० सुना। उन्होंने तुरन्त अन्दर खबर भेज दी। बी० डी० बी० के समक्ष उन बाबुओं ने लाख कसमें खायी कि वे बीबी की बात कर रहे थे। पर सब व्यर्थ। अपील, वकील, दलील को कोई स्थान न था। सस्पेंड करने की धमकी के साथ उन्हे कारण बताओ नोटिश मिला कि वे दफ्तर में बीबी की बात क्यों कर रहे थे।

एक झंझावात था। व्यवस्था एवं कानून मुख्य थे, मानवता गौण हो चुकी थी। साधन साध्य बन गये थे। मनुष्य को मशीन में ढाला जा रहा था इतना कलुषित हो चुका था कि सभी एक दूसरे को संदेह की दृष्टि से देखते थे। गधा घास खा सकताथा पर सूंघ नहीं। सूंघने पर हो सकता है वह सोचे घास ताजा है या बासी।

एक रोज बाबू तिरलोक चन्द से आनन्द बाबू बात कर रहे थे। कहो भई, क्या हाल हैं, आजकल तो बोलते नहीं, क्या साँप सूंघ गया। तिलोकचन्द ने खिसियाने होते हुए कहा— सब ठीक है, भगवान की कृपा है।" क्या कहा ? भगवान की ? आनन्द बाबू ने ऊँचा सुनने का अभिनय किया। उन्हें लगा कि बी० डी० बी० अर्थात् भगवान दास बघेरवाल पर यह व्यंग तो नहीं कस रहा कहीं। तब तक तिरलोक बाबू ने लम्बी साँस लेते हुए संभल कर कहा—"भई, भगवान से मेरा मतलब ऊपरवाले से है।" आनन्द बाबू को विश्वास हो गया कि ऊपर वाला तो बी० डी० बी० ही है उससे ऊपर तो कोई नहीं हैं।

उसी सप्ताह बाबू तिरलोक चन्द का तबादला हो गया।

बकौल बी०डी०बी० के वे सफल बॉस थे। और लीलूराम चपरासी के मुताबिक वे सबसे असफल बॉस थे। उनकी असफलता का कारण उनके ट्रांसफर का कारण भी बना। हमारे दफ्तर से वे एक भी 'केस' नहींदे सके। बी० डी० बी० के चार लड़कियां हैं। पुत्ररतन को मुक्ति का माध्यम मानते हैं। एक दिन बी० डी० बी० ने लीलूराम चपरासी से 'केस' की बात की थी। लीलूराम की बात की थी। लीलूराम ने फैलते हुए कहा था—

"साहब, नेकी और बूझ-बूझ। चलिए दोनों साथ-साथ चलते हैं। बी० डी० बी० का चेहरा बुझ गया था। और लीलूराम का चेहरा रौशन हो गया था। लीलूराम चपरासी चौड़ा होकर चलने लगा था। पर भेद की यह बात उनके तबादले के बाद ही लोगों को मालूम हुई थी।

⚜

तुलसी के राम

हद से बढ़े हैं "गुदड़ी के लाल" मद से,
न डरते कभी हैं कुछ नाम बदनाम को।
दर-दर खोज-खोज काम के सभी मुकाम,
काम-काम में ही भूल गये निज काम को।
जग के हैं ज्ञान में गुमान में जहाँ भी गये,
वहीं पर करते विराम अविराम को।
तुलसी के राम को भुला के हैं सुला के अब,
जपने लगे हैं खुद अपने ही राम को।।

अगम, अनादि सर्वव्यापी, सर्वशक्तिवान,
को ही ध्यान धर भज तुलसी के राम को।
समझ-समझ को ही समझ-समझ सब,
समझ-समझ भज तुलसी के राम को।
सुबह-सुबह, शाम-शाम, काम-धाम पर,
एक नेक नाम भज तुलसी के राम को।
"गुदड़ी के लाल" को भुला के है सुला के अब,
सब मद तज भज तुलसी के राम को।।

—गुदड़ी के लाल

गीत

—ज्ञानेन्द्र अग्रवाल

मत जलो दीपक तुम्हे सौगन्ध है,
एक झंझावात मेरे सामने।

आँख में कितने अभावों का धुआँ,
पाँव चाकर हैं किसी अभिशापके।
हाथ में केवल पराजित कल्पना,
शब्द औ रस-पुत्र पावन पाप के।

मत गलो हिमकण तुम्हें सौगन्ध है,
सृष्टि का उत्पात मेरे सामने।

दर्द मन का हो गया है बेहया,
हर किसी घर द्वार की जय बोलता
पाप अथवा पुण्य जो पुस्तक मिली—
वह वही पढ़ता उसी को खोलता।

मत चलो साथी तुम्हें सौगन्ध है।
पंथ का आघात मेरे सामने।

सत्य तिनका है, भला अस्तित्त्व क्या,
धार में भटका, भँवर में खो गया।
किन्तु जुगनू शक्ति की जय बोलकर—
सूर्य पुत्रों का मसीहा हो गया।

मत छलो सागर तुम्हे सौगंध है
एक तीखी बात मेरे सामने।

तन जिया या मर गया क्या फर्क है,
हर जनाजे में कफन का मोल है।
खाल खिंच-खिंच कर पिटी बजती रही—
ताल का पर्याय तो अब ढोल है।

मत फलो सौरभ तुम्हें सौगन्ध है,
गंध का आयात मेरे सामने।

बदलाव

—धर्मपाल "हलधर"

लोग कहते हैं,
देश में बदलाव आया है।
चारों ओर खुशियाँ फैली हैं,
लेकिन,
मैं अपने वीरान खेतों को देखता हूँ
जिसका लगान और महसूल
हर साल की तरह
इस साल भी दिया है मैंने।
फाइलों में बहने वाली नहरों का पानी
मेरे खेत में नहीं आता।
नलकूप के पास मुर्झाई हुई फसल
मेरी लाचारी पर रो रही है।
दफ्तर की खिडकी पर
बिल अदा करते हुए
मुझे यह पूछने का हक नहीं है,
कि पिछले हफ्ते भर बिजली क्यों नहीं आई ?
मैं भूखों रहने के लिये जीता हूँ
और लेवी देने के लिये पैदा करता हूँ
अरमानों को अपने दिल में सँजोकर
सोचता हूँ कि
अँग्रेज, फिर काँग्रेस फिर उसके बाद
क्या परिवर्तन हुआ
कुछ भी समझ में नहीं आता।

साहित्य बहुजन हिताय हो,

गत १६ नवम्बर को अखिल भारतीय अगीत परिषद के तत्वावधान में युवा कवि श्री नित्य नाथ तिवारी की साल गिरह मनाई गई। स्थानीय गाँधी भवन में इस अवसर पर श्री तिवारी को बधाई देनेहेतु नगर के कवि समीक्षक, छायाकार आदि उपस्थित थे। सर्वप्रथम तुलसी साहित्य के चर्चित विद्वान एवं भारतीय नागरिक सेवा के सेवा निवृत्त अधिकारी प० जनार्दन दत्त शुक्ल ने कहा कि एक ओर जब विदेशों में साहित्यकार का सम्मान सर्वोपरि रहा है तो दूसरी ओर हमारे देश में साहित्यकारों को उचित सम्मन नहीं मिला है। सुप्रसिद्ध कहानी लेखिका श्रीमती चन्द्रकिरण सौनरेक्सा ने अपने संक्षिप्त भाषण में लेखकों को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता दिये जाने पर बल दिया। समीक्षक श्री उमेश शुक्ल ने पारम्परिक रचनाकार के प्रति युवा लेखकों में विद्रोह के स्वर को उचित बताया। लखनऊ के युवा लेखकों, वक्ताओं में अपनी स्पष्ट वादिता के लिए चर्चित रूसी भाषा-विद श्री संगमलाल मालवीय ने अपने सारगर्भित भाषण में स्पष्ट किया कि युवा लेखक चिन्तन की मौलिकता के साथ-साथ अध्ययन और खोज के लिए नवीन प्रतिमानों की स्थापना हेतु त्वरित गति से अग्रसर हैं। गोष्ठी में सुप्रसिद्ध छायाकार रमेश गुप्त, श्री गोमती प्रसाद पाण्डेय, कुमुदेश कान्ति चन्द्र सौनरेक्सा एवं श्री पंकज कुमार दास ने भी अपने विचार व्यक्त किये। इस अवसर पर एक कवि गोष्ठी भी हुई जिसमें श्रीमती प्रेमकुमारी ठाकुर, शाहजहां बानों 'याद', माधुरी बाजपेयी, गीता पांडेय ताजबानों, विद्यागुप्ता, शलभ दीपक, श्रीराम शुक्ल, अमर नाथ बाजपेई एवं सुरेशचन्द्र श्रीवास्तव ने अपनी नवीनतम रचनाओं का पाठ किया। कवि सम्मेलन का संचालन श्री रंगनाथ मिश्र 'सत्य' ने किया। समारोह के अन्त में श्रीनित्यनाथ तिवारी ने आगत महानुभावों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन करते हुए अपनी रचना प्रक्रिया पर प्रकाश डाला। उन्होंने कहा कि कविता का स्पष्ट दर्शन ही रचनाकार को ऐतिहासिक चेतना से सबद्ध करता है, क्योंकि स्पष्ट दर्शन से काव्य में नई प्रवृत्तियां आती है जिससे साहित्य आगे बढ़ता है। और युग चेतना नयी करवट लेती है।

—पंकजकुमार दास

कृपया अन्य वस्तुओं की तरह ही पत्रिका भी खरीद कर पढ़ें।

स्थिति—सामान्य से पूर्व की

—प्रदीप मेहता

कसैले धुवें सी
बदबूदार बलगम उगलती
बूढ़ी चिमनी/अपने आप को
मुखौटे चढ़े चौराहे पर
तेज रफ्तार से दौड़ती बिना ब्रेक की
हरी जीप के नीचे दबकर मरने के
लिए बरगलाया गया
तीस वर्षों तक घटिया उत्पादन का
एक मात्र गवाह थी।
साहस की आड़ में
सरासर सच बोलवाया गया।
उसने सूर्य को कभी पूर्व से
उगते नहीं देखा
विवश होकर हामी जरूर भरी।
सूर्य एक दो बार आत्म हत्या के
इरादे से पश्चिम की ओर गया
जरूर था
ऊपर से चढ़ी कड़वी नीम
सामान्य जन गूंगा हो गया।
देशी जीभ कड़वे नीम की आदी नहीं है
वास्तविकता का पारदर्शी रैपर
हटाकर दवा के नाम पर
'पोटेशियम साइनाईड' जनजीवन के
दीर्घायु के लिये शुभ कामना के
बतौर दिया जाने लगा।
बाप ने कभी बेटा पैदा नहीं किया
नगर पालिका के रजिस्टर गवाह है
बेटे ने बाप को अस्तित्व में लाया है

दलहन एवं तिलहन के अधिक उत्पादन के लिए अपनी फसल को कीड़े एवं बीमारियों से सुरक्षित रखिये जिसके लिए विभाग द्वारा दी गई सुबिधा का लाभ उठायें ।

१. मटर पर पाउड्री मिल्ड्यू बीमारी के लिए अधिकतम रुपये २५/- प्रति हेक्टर की दर से अनुदान ।

२. चना मटर एवं अरहर पर फली छेदक कीट के लिये अधिकतम रु० १५/- प्रति हेक्टर अनुदान ।

३. छिड़काव में लगे श्रम पर रु० १२-५० प्रति हेक्टर अनुदान ।

४. राई सरसों पर माहू कीट के लिये दवा एवं श्रम पर रु० ३०/- प्रति हेक्टर अधिकतम सीमा तक अनुदान ।

उपरोक्त सुविधायें कृषि विभाग द्वारा दवा के मूल्य को कम करके उपलब्ध कराई जाती है ।

जानकारी के लिये अपने जनपद के जिला कृषि अधिकारी/कृषि रक्षा अधिकारी से सम्पर्क करें !

कृषि विभाग, उत्तर प्रदेश द्वारा प्रसारित

ये स्वार्थी, पत्रकार !

—क्षेमचन्द्र 'सुमन'

हिन्दी - पत्रकारिता का विगत इतिहास राष्ट्रीयता का उद्बोधक, सम्पोषक और दिग्दर्शक रहा है। अतीत काल में सर्वश्री भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, बालमुकुन्द गुप्त, प्रतापनारायण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट, मदनमोहन मालवीय, रुद्रदत्त शर्मा संपादकाचार्य, ईश्वरीप्रसाद शर्मा, अम्बिका प्रसाद बाजपेई, लक्ष्मण नारायण गर्दे तथा अमर शहीद, गणेश शंकर विद्यार्थी आदि अनेक वरेण्य पत्रकारों में भारतीय स्वाधीनता - संग्राम को आगे बढ़ाने और तत्कालीन ब्रिटिश नौकरशाही को जड़ मूल से उखाड़ फेंकने में जो अनन्य सहयोग दिया था, वह सर्व विदित है।

इसी परम्परा की ज्वलन्त कड़ी के रूप में सर्वश्री माखनलाल चतुर्वेदी, कृष्णकान्त मालवीय, बाबूराव, विष्णु पराड़कर, हरिभाऊ उपाध्याय, श्रीकृष्ण दत्त पालीवाल, इन्द्र विद्यावाचस्पति, श्री रामवृक्ष बेनीपुरी और सत्यदेव विद्यालंकार प्रभृति बहुत - से ख्यातनामा पत्रकारो के नाम स्मरणीय हैं। इन महानुभावों ने जहां तत्कालीन गोरी सरकार से लोहा लिया, वहाँ अपनी लेखनी के माध्यम से जन-जागरण का भी उत्कट उद्घोष किया। यहाँ तक कि उक्त सभी महानुभावों ने जन-आन्दोलन को आगे बढ़ाने के पुरस्कार - स्वरूप कारावास भोगने के अतिरिक्त अन्य अनेक नृशंस यातनाएँ भी सहीं।

कुछ ऐसे पत्रकार भी उन दिनों हमारे समक्ष आए जिन्होंने न केवल सरकार से डटकर मोर्चा लिया, प्रत्युत सशस्त्र क्रान्ति में लगे हुए अनेक युवकों को प्रश्रय तथा प्रोत्साहन भी प्रदान किया। ऐसे वन्दनीय पत्रकारों में सर्वश्री राधामोहन गोकुल जी, प० सुन्दरलाल, रामरख सिंह सहगल, विजयसिंह पथिक, दशरथ प्रसाद द्विवेदी तथा यशपाल आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

वह काल हिन्दी - पत्रकारिता का स्वर्ण - युग था। उक्त सभी महानुभावों के द्वारा प्रदर्शित मार्ग पर चलकर आगे के दिनों में अनेक पत्रकारों ने हमारी 'राष्ट्रीयता' और 'अस्मिता' की प्राणपण से रक्षा की थी। क्या आप कभी यह कल्पना भी कर सकते हैं कि जिस हिन्दी - पत्रकारिता की इतनी 'उज्ज्वल' और 'निष्कलंक' परम्परा रही हो, उसी के संवाहक पत्रकार 'आपातकाल' में भीरु, चापलूस और अवसरवादी निकलेंगे कि वे 'नीर - क्षीर विवेकी' इस पावन 'आसन्दी' के लिये कलंक सिद्ध होंगे।

हमें यह लिखते हुए अत्यन्त लज्जा अनुभव हो रही है कि इन सुविधा - जीवी पत्रकारों में देश के तानाशाह प्रशासकों की आरती उतारने की ऐसी होड़ लगी कि उन्होंने नैतिकता को सर्वथा ताक पर रख दिया और आँख मूंदकर उनकी हर एक बात का खुला समर्थन ही नहीं किया, बल्कि उनके प्रत्येक वाक्य को 'ब्रह्म वाक्य' कहने और उनकी हर ओछी हरकत के सामने 'कोर्निस' बजाने में भी वे पीछे नहीं रहे। वे अपनी 'स्वार्थ-पूर्ति' और पद-लिप्सा में इतने अन्धे हो गए कि उनकी दृष्टि में उस जनता - जनार्दन का कोई अस्तित्व ही नहीं रहा, जिसके जागरण के वे 'अग्रदूत' समझे जाते थे। यहाँ तक कि उनमें से कुछ ने तो अपनी लेखनी को इतना कलंकित किया कि उन्होंने तानाशाह बनने का का स्वर्णिम स्वप्न संजोने वाली देश की तत्कालीन प्रधान मंत्री को 'दुर्गा' 'भवानी' और 'चण्डी' तक कहा और उनके स्वेच्छाचारी राजकुमार के चरित्र में भारत के 'भावी प्रधान मंत्री' के महत्वपूर्ण लक्षण तथा गुण भी देखें।

पिछले तीन - चार वर्ष का, हिन्दी - पत्रकारिता का इतिहास हमारे उक्त कथन का ज्वलंत साक्षी है। ऐसे अनेक 'स्वनामधन्य' पत्रकारों में से किसी ने उनकी जीवनी लिखकर डि. लिट्. की मानद उपाधि प्राप्त की, तो किसी ने उनके शासन के दस वर्षो की उपलब्धि का लेखा-जोखा प्रस्तुत करके उन्हें प्रजातन्त्र की संवाहिका - शक्ति का अजस्त्र स्त्रोत माना। साथ ही उन्होंने उनके

(शेष पेज २१ पर)

पाठकों के पत्र,

युवा रश्मि का अक्टूबर का अंक मिला। सभी रचनायें विशेषकर दोनों परिचर्चायें अच्छी लगीं। निःसन्देह ही पहले की अपेक्षा युवा-रश्मि में काफी निखार हैं, परन्तु कमियाँ अभी और भी हैं। और निखार लाने का क्रम अभी चलते रहना चाहिये। आशा करती हूँ कि अगला अंक अधिक बेहतर होगा।

—शाइस्ता मुस्तजाब, गंगोह

नियमित पाठिका होने के नाते कहना चाहूँगी कि युवा रश्मि के सितम्बर और अक्टूबर अंक काफी रोचक हैं। कुछ और कहानियां, परिचर्चायें दें, जाहिर है इसके लिए पृष्ठ संख्या बढ़ानी पड़ेगी। परिचर्चा नियमित रुप से दिया करें तों ज्यादा अच्छा होगा।

—उर्मिला गोस्वामी, भोपाल

अब मैं बिहार के समाचार पत्रों में यदा कदा स्थान प लगा हूँ,। इसका श्रेय मैं आपको ही देता हूँ। युवा रश्मि के कई अंकों में मुझे प्रोत्साहन देकर आपने मेरा बड़ा भला किया है। विश्वास है तथा कथित बड़े लोगों द्वारा ठुकराये गये नवोदितों को आपका प्यार व प्रोत्साहन इसी प्रकार मिलता रहेगा।

विनयसिंह 'विनय'
मोतीहारी

एक अर्से से युवारश्मि देखता, पढ़ता चला आ रहा हूं। इस संक्रमण काल में वैचारिक धरातल पर समान विचारों के लोग देर सबेर एक नये मंच की आवश्यकता महसूस करेंगे ही। कितना अच्छा हो कि युवारश्मि के माध्यम से आप वह मंच तैयार करें।

—रमेशदीक्षित, नई दिल्ली

अक्टूबर अंक मिला। बहिन उर्मिला गोस्वामी द्वारा आयोजित परिचर्चा सामयिक है। बहुत अच्छी लगी। रोजगार परक शिक्षा पद्धति के संदर्भ में श्री राधाशरण गोस्वामी के विचार तर्क संगत है। गीता बहन ने युवावर्ग की आकांक्षाओं पर अपना अकाट्य तर्क प्रस्तुत किया है। सच-मुच अकर्मन्यता की स्थिति में आकांक्षा का कोई महत्व नहीं होता। मेरी शुभकामनाएं।

—मालारस्तोगी, हैदराबाद

जून ७७ से अक्टूबर तक के सम्पादकीय पढ़ने के बाद आपसे मिलने की इच्छा हो रही है। अपना उल्लू सीधा करने वालों को तमाचा लगाने का आपका साहस सराहनीय है।

—मोहम्मदनईम, गुलबर्गा (कर्नाटक)

युवारश्मि काफी इन्तजार के बाद मिल जाती है इसके माध्यम से आप सतत् रूप से नये चेहरों को प्रोत्साहित कर रहे हैं, यह बड़ा साहस का कार्य है। जून ७७ का सम्पादकीय एक ऐतिहासिक दस्तावेज है। पृष्ठ संख्या बढ़ायें एवं प्रूफ की भूलों पर ध्यान दें :

—गंगाप्रसाद राजौरा
नई दिल्ली

छोटे कलेवर के बावजूद युवा-रश्मि की सारी रचनाएं मुझे पसन्द, आती हैं। इसका देर से प्रकाशित होना जरूर खलता है। कृपया ऐसी व्यवस्था करें कि माह के पहले सप्ताह में उस माह की युवारश्मि पाठकों को मिल जाये।

—अतुल पाठक, कन्नौज

युवा रश्मि आपकी अपनी पत्रिका है। आपकी भावनाओं के अनुरुप हर अपेक्षित परिवर्तन अबतक होते रहे हैं। और अधिक परिवर्तन के संदर्भ में हमें आपके बहुमूल्य सुझावों की प्रतीक्षा है।

तथा

यदि आप युवा रश्मि को अपनी भावनाओं के अनुरुप पाते हैं, तो शीघ्रता से वार्षिक सदस्यता शुल्क भेजें।

संयम : अभय का स्वरुप

—जयशंकर अवस्थी

भय को केवल मानसिक एवं व्यक्तिगत समस्या समझना भूल है संक्रामक होने तथा अपने निष्क्रिय, किंकर्त्तव्यविमूढ़ और पथभ्रष्ट कर देने वाले प्रभाव के कारण भय शारीरिक, नैतिक, सामाजिक और राजनैतिक समस्या भी है। अतः लौकिक, आत्मिक, सामाजिक और राष्ट्रीय उन्नति के लिये इस समस्या का समाधान खोजा जाना अनिवार्य है। यह समाधान हमें धन, युद्ध-कौशल, सैनिक शक्ति अथवा वैज्ञानिक प्रगति में नहीं मिलेगा। भय की समस्या का एकमात्र और चिरस्थायी समाधान है—संयम या आत्म-नियंत्रण।

अनेक लोगों का विचार है कि संयम हमें कुंठाग्रस्त और दब्बू बना देता है, क्योंकि यह हमारे आवेगों का दमन करता है, उनकी स्वाभाविक अभिव्यक्ति नहीं होने देता। पहली नजर में यह कथन सही सा लगता है, परन्तु है यह वस्तुतः अज्ञानजन्य। संयम के गंभीर रहस्य को न जानने वाले ही इसे मानेंगे।

संयम को सामान्यतः यौन भावना के दमन के अर्थ में लिया जाता है। लेकिन वस्तुतः यह एक महान शब्द की नितांत अपूर्ण और इसलिए गलत व्याख्या है। संयम का अर्थ 'तुच्छ' की ओर उन्मुख अपने आवेगों और प्रवृत्तियों का दमन नहीं, उनका उदात्तीकरण है। मनुष्य की ऊर्जा स्वयं को काम, क्रोध, भय आदि प्रवृत्तियों के रुप में अभिव्यक्त करती है। दूसरे शब्दों में, हमारी सारी प्रवृत्तियां हमारी ऊर्जा के ही विभिन्न रुप हैं। जब ये वृत्तियां आवेग बनकर उभरती हैं तो शरीर में एक तनाव-सा आ जाता है और जब ये कर्म का रुप लेकर अभिव्यक्ति होने लगती है तो उस तनाव के शिथिलीकरण की प्रक्रिया आरम्भ होती है, जिसे हम सुख कहते है। यह बात कामवेग के लिए जितनी सत्य हैं, उतनी ही क्रोधावेग, भयावेग तथा प्रत्येक अन्य प्रवृत्ति के लिये। क्रोधावेग उठने पर जब हम उसे पूर्णतः व्यक्त कर लेते हैं तो हमें 'शान्ति' मिल जाती है। इसी तरह भयावेग में हम कोई सुरक्षा ढूंढ़ने लगते हैं और जब वह हमें मिल जाती है तब हम 'सुखी' हो जाते हैं। ऊर्जा तो स्वयं को अभिव्यक्ति करेगी ही, क्योंकि यह उसका धर्म है। परन्तु उसकी अभिव्यक्ति का रूप क्या हो, यह विचारना हमारा काम है। यह आवश्यक नहीं है कि कामावेग उठने पर हम हर बार रति क्रिया का ही आश्रय लें, क्रोधावेग से फट पड़ें और भयावेग से दुबक जायें या जड़ हो जायें। जल का सहज धर्म है हर ढलान पर बह जाना, लेकिन यदि हमें जल की शक्ति से लाभ उठाना है तो हमें उसके बहाव और उसकी दिशा पर पूर्ण नियंत्रण रखना होगा। आवेग उठे और अनियन्त्रित विसर्जित हो जायें तो इससे क्षणिक शारीरिक सुख की प्राप्ति भले ही हो, कोई उन्नति नहीं होती। हाँ, शारीरिक, मानसिक, और नैतिक क्षति अवश्य होती है। सवाधिक घातक परिणाम तो यह होता है कि बारंबार आवेगों के उत्थान-विसर्जन की इस प्रक्रिया से आवेगों को बारबार उठने की और हमें उन्हें तत्काल विसर्जित कर देने की प्रबल प्रेरणा मिलती है। ऊर्जा जिसके सदुपयोग में महान सभावनायें निहित हैं, के अपव्यय का द्वार खुल जाता है। हम अपने आप पर नियंत्रण खो बैठते हैं और अपने आप पर नियंत्रण खो बैठना ही हर प्रकार पतन का एकमात्र कारण है। इसीलिए आवेगों के अनियन्त्रित विसर्जन से मिलने वाले सुख को 'तुच्छ' कहा गया है।

प्रश्न उठता है, आवेगों के रचनात्मक नियोजन का स्वरुप क्या है? उनका उदात्तीकरण कैसे हो? सक्षेप में इसका उत्तर यह है कि आवेगों और प्रवृत्तियों की अनियंत्रित एवं अविचारपूर्ण अभिव्यक्ति की आपातरमणीयता को, उससे मिलने वाले तथाकथित 'सुख' की विषमता को ध्यान में रखा जाये। तब स्वयंमेव हमारे प्रयत्न उच्चतर सुख वास्तविक सुख की प्राप्ति के लिए

होंगे। सद्विचारों का अधिकाधिक मनन, कल्पना में स्वयं को प्रलोभनों पर विजयी होते देखना, स्वास्थ्य के नियमों का पालन और जीवनोद्देश की पहचान मिलकर संयम की साधना के सकारात्मक पक्ष का निर्माण करते हैं। एक उदाहरण लें। हमें काफी भूख लगी है। सामने ताजा और सुस्वादु भोजन रखा है, किन्तु वह विषमिश्रित है। हमें भी पता है कि वह विषैला है। अब हमें चाहे जितनी भूख लगी हो, हम उसे नहीं खायेंगे। परन्तु विषयुक्त भोजन न करने भर से तो हमारी भूख मिटने से रही। भूख मिटाने के लिये हमें दूसरे निर्विष भोजन की तलाश करनी हीं होगी। प्रतीयमान सुखों की त्याज्यता का बोध और वास्तविक सुख की प्राप्ति हेतु प्रयत्न—ये संयम साधना के नकारात्मक और सकारात्मक पक्ष हैं, जिन्हें गीता 'वैराग्य' और 'अभ्यास कहती है।

अब हम अपने विषय पर आयें। संयम भय की रामबाण औषधि है। कैसे? हम जानते हैं कि जिस समय हमारे समक्ष प्रलोभन होते हैं, उस समय वे इतने सुखद प्रतीत होते हैं कि उन्हें ठुकरा देना एक असह्य दुर्भाग्य-सा लगने लगता है। डर से डरना भी एक प्रकार का प्रलोभन है। जब हम डरकर चुपचाप बैठ जाते हैं तब डर लड़ने का साहस न करने में हमें एक प्रकार का 'सुख' का अनुभव होता है। कैसा होता है वह सुख? भय से लड़ने में अनुकूल फल की प्राप्ति तो अनिश्चित प्रतीत होती है, प्रतिकूलता की आशंका ही अधिक सताती है और हम सभी अनुभव से जानते हैं कि यह आशंका कितनी जड़ कर देने वाली, कितनी दाहक होती है। भय से न लड़कर चुपचाप बैठ जाने से भी हमें हीनताबोध, ग्लानि और दुःख के सिवा और कुछ नहीं मिलता, पर यह दुःख पूर्वोक्त आशंका के साकार होने से मिलने वाले कल्पित दुःख से कम दाहक होता है। यदि ऐसा नहीं होता तो आज संसार में शायद ही कोई डरपोक होता, क्योंकि हम बलवत्तर प्रेरणा से ही संचालित होते हैं। इस प्रकार भय से भयभीत होकर चुप बैठने के समय हम वस्तुतः एक निश्चित परन्तु महान सुख पर वरीयता दे रहे होते हैं। उस स्थिति से हम प्रयत्नसाध्य और बिलम्ब से प्राप्त होने वाले महान के मुकाबले अनायास और तत्काल प्राप्त होने वाले तुच्छ को स्वीकार कर लेते हैं। परन्तु जब हम संयम का पर्याप्त अभ्यास कर चुकते हैं, तब हममें वह धैर्य, स्थिरता, वीरता और विचारशीलता आ जाती है, जो हमे तुच्छ को ठुकराते हुये महान की ओर बढ़ने की प्रेरणा और शक्ति देती है। संयम फल की अमृतमयी मधुरता ऐसे ही विजय क्षणों में अनुभव होती है। अभय का अर्थ ही है—संयम।

—प्रकाशितमन से

जंगल वाला नगर

—लोकेश चन्द्र 'कुसुम'

इस छोटे से नगर
जहां चारों ओर
बर्फ की चादर बिछी हुई है।
सिर्फ रह गया हूं मैं,
सभी पक्षी उड़ गये हैं
उनके उजड़े घर-बार
अभी भी
उनकी गाथा गा रहे हैं,
ये नगर मुझे
जंगल-सा प्रतीत होता है,
यहां न जंगल है
न नगर
यह सीमा है
जहां मैं तैनात हूं।
यह जंगल सा निर्जन है
शहर सा ही आबाद।
गोलियों की आवाज से,
पक्षियों का चहचहाना
बन्द हो गया है,
जानवर भी
अपनी आवाज को
अपने कमरों में बन्द रखते हैं।
एक दहशत सी फैल गई हैं
इस जंगल वाले नगर में।
जहां सिर्फ मैं रह गया हूं
अपनी राइफल के साथ।

पास पहुँचा और घर लाया था। यह सब सुनकर श्रद्धा के मन में मन्मथ के प्रति जो श्रद्धा उमड़ी थी वह बढ़ती ही गयी। एक दिन वह भी आया जब मन्मथ ने अपनी शादी करने सम्बन्धी अपना फैसला अपने पिता को बता दिया। पूरे गाँव में इसकी चर्चा होने लगी। श्रद्धा और मन्मथ के लिये यह प्रताड़ना बड़ी दुखद थी। अन्त: दोनों ने उस दमघोंटू परिवेश का परित्याग करना ही श्रेयस्कर समझा। सामाजिक मान्यतायें अन्ततः पराजित हुयीं। मन्मथ और श्रद्धा दोनों गाँव से दूर बहुत दूर शहर आ गये, जहाँ आदमी जाति और सम्प्रदाय के बन्धनों में रहकर भी मूल रूप से आदमी ही रहता है।

लेखक

सूरज मध्याकाश की ओर बढ़ चला है। कनेर के फूल और तेजी से दमकने लगे हैं। अपने ही वृन्त पर फूलों का मुस्कराना कितना मन भावन लगता है। काश! परिवेश ने उसकी भावनाओं की कद्र की होती तो यह सुख केवल सुख होता पलायन की पीड़ा से बिलकुल अछूता। श्रद्धा सोचती हुयी अपने कमरे की ओर लौटती है और न जाने क्यों आज एकाएक उसकी आँखों में आँसू भर गये हैं लेकिन साथ ही साथ ओठों पर तिर आयी मुस्कान उसके अपने ही लिए कोई कम अनिर्वच नहीं है।

अस्तित्व बोध

—राजश्री 'मुस्काती'

एक ही दिन में
मैंने सूरज के सम्पूर्णअस्तित्व को
समय की बाहों में
संवरते और बिखरते देखा है।
मेरे हाथ में एक लघु पत्रिका है
जिसके शुरू के एक लेख में
जीवन का परिचय है,
मध्य की कहानी में
कुंठा का अभिनय है
आखिर की कविता में
पराजय की पीड़ा है
मौत का गम है।
और·····और···
मैं सोंचती हूं
कितना साम्य है
जीवन और
लघु पत्रिका में।

'मुस्काती'

'बलिक जंगल में जाकर बाघ और हाथियों के बीच रहना अच्छा है पत्ते, फल और घास खाकर रहना अच्छा है, घास पर सोना और पेड़ की छाल पहनना अच्छा है लेकिन अपने परिवेश में धनहीन बनकर जीना अच्छा नहीं है।'

—चाणक्य

'पढ़ो जानकारी के लिये, लिखो उस जानकारी से आत्म विश्वास भरने के लिये और सोंचो लेखन और पठन में स्थायित्व के लिये इस प्रकार पढ़ो उससे ज्यादा लिखो, उससे ज्यादा सोचो'

—सूक्ति
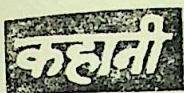
खंडितमान्यता

—अशोक आर्य

शरद् ऋतु में सूर्य रश्मियों की उष्णता जितनी प्यारी और सुखकर लगती है मलयानिल का ऐसे समय तन को झकझोरना मीठी-मीठी सिहरन पैदा कर देता है। इस सिहरन में पीड़ा है और पीड़ा में टीस है किसी याद की। याद और उससे होने वाली कसक सबको मिलाकर जिन्दगी पहेली ही तो बन जाती है और इस पहेली को बूझने के उपक्रम को ही तो जिंदगी कहते हैं न।

श्रद्धा इन्हीं बिचारों में डूबी हुई कभी अपने दोनों बाजुओं को देखती है और कभी सामने फूलों से लदे हुए कनेर के वृक्ष को। यह कनेर नारी जीवन के चरम उत्कर्ष का द्योतक है। जूही की खुशबू से शुरू होकर गुलाब की लाली को स्वयं में महसूस करता हुआ श्रद्धा का जीवन अब कुछ असमय ही कनेर के पीलेपन से आ लगा है। सामाजिक प्रतिक्रिया की आशंका और सृजन का सुख दोनों के बीच स्वयं को पाकर वह आंसू और मुस्कान के बीच की स्थिति से गुजर रही है।

मन्मथ से उसका लगाव उसके गुणों के कारण करीब एक वर्ष पहले हो गया था यों रुप में भी मन्मथ अपने किसी अन्य सहपाठी से कम नहीं। पुरुषोचित निर्भयता का वह धनी है वाक्पटु और सहिष्णु तो है ही। अभावों ने मन्मथ को संघर्षो की लोरी से जगाया, सुलाया है इसीलिये वह बेहद भावुक और दयालु है।

श्रद्धा को खूब याद है उस दिन चैत की पूर्णिमा थी। गाँव के तमाम लोगों की तरह ही वह भी गंगा नहाने गई थी। शाम को वापस आने के बाद उसकी बूढ़ी बीमार माँ ने कहा था कि घर की किसी मटकी में पानी नहीं है। माँ प्यासी थी। श्रद्धा ने सोचा तालाब का पानी जो रोज पीने के लिये घर में लाया जाता है माँ को देने से उसकी तबियत और खराब हो जायगी। वह जल्दी से ठाकुर के कुएं पर गयी। सूरज के छिपे हुये एक छोटा अर्सा बीत गया था। गहरे कुएं में उसने घड़ा डुबोया और कहीं कोई देख न ले, यह सोचकर जल्दी-जल्दी पानी भरे घड़े को बाहर खींचने लगी थी। बहुत दिनों के बाद एक घड़ा कुएं का साफ पानी आज उसे और माँ को पीने को मिलेगा। यह सोचकर वह बहुत खुश थी, साथ ही आशंकित भी थी कि कहीं किसी ने देख लिया तो खैर नहीं। गाँव में यही एक कुआँ था जिससे हरिजनों को पानी लेने की मनाही थी। गाँव के हरिजन तालाब का पानी पीते थे। पानी से भरा घड़ा उठाकर बस चलने ही वाली थी कि तभी उसके सिर पर एक तेज झटका लगा और वह चेतनाशून्य सी हो गयी। जब वह चैतन्य हुयी तो उसने अपने को घर के बरामदे में पाया। उसके सामने उदास बूढ़ी माँ थी और मन्मथ खड़ा था। मन्मथ को पहली बार अपने घर में देखकर वह चौंकी। सहसा ही उसे अपनी आँखों पर विश्वास न हुआ। लेकिन जो सच था वह सच ही था। उसे खूब याद है, मन्मथ ने उससे कहा था, "मेरा यहाँ आना तुम्हारे लिये अप्रत्यासित हो सकता है, लेकिन मैं तो कभी से तुमसे मिलना चाहता था। बदलते हुये जमाने की रफ्तार में उल्टा चलने की कोशिश से हम टूट जांयगे। गाँव के इस रूढ़िग्रस्त परिवेश में मेरा दम घुटता है।" अपनी बात कहते हुए मन्मथ अपलक नेत्रों से श्रद्धा की ओर देखे जा रहा था। श्रद्धा चुप थीं। लेकिन उसकी आंखों में पीड़ा की जगह जिज्ञासा ने ले लिया था। एक अज्ञात अपरिमित आनन्द से वह भर गयी।

दूसरे दिन शाम को स्कूल से लौटकर मन्मथ सीधा श्रद्धा के घर गया था और शाम वाली घटना के बारे में उसे विस्तार से बताया था कि किस तरह चौबे कुएं से वापस लौटते हुये उसके सिर पर वार करके चलता बना था और संयोग से पास ही उसकी चीख सुनकर वह कुएं के

प्रदेश की नयी औद्योगिक नीति

उत्तर-प्रदेश की नयी सरकार ने औद्योगिक विकास को संतुलित बनाने के लिये नयी नीति निर्धारित की है जिसकी विशेषताएं हैं :—

- उद्योगों को अधिकाधिक रोजगारपरक बनाना और इस हेतु कुटीर, ग्रामीण और लघु उद्योगों को प्राथमिकता प्रदान करना ।
- नये उद्योगों की स्थापना में विकेन्द्रीकरण को बढ़ावा देना जिससे थोड़े से चुने स्थानों पर ही औद्योगिक इकाइयों का जमघट न लगने पाये ।
- उन लघु उद्योगो तथा परंपरागत उद्योगों को प्रोत्साहन प्रदान करना जिनके लिए स्थानीय रुप से ही कच्चा माल और कुशल कारीगर सुलभ किये जा सकें ।
- पिछड़े एवं उपेक्षित क्षेत्रों के औद्योगीकरण पर विशेष बल ।
- बड़े उद्योगों को छोटे और ग्रामीण उद्योगों के लिये मशीन, कच्चा माल आदि सप्लाई करने का निर्देश ।
- सार्वजनिक उद्योगों के स्थान पर सहकारिता के आधार पर औद्योगीकरण को बढ़ावा ।
- एक पृथक ग्रामीण उद्योग विभाग की स्थापना ।
- लघु एवं ग्रामीण उद्योगों की तकनीकी समस्याओं के समाधान के लिये विज्ञान तथा प्रौद्योगिक विभाग एवं विज्ञान तथा औद्योगिक परिषद का पुनर्गठन ।
- ग्रामीण क्षेत्रों में औद्योगिक समूह प्रतिष्ठानों की स्थापना । चालू वित्तीय वर्ष में १४०० इकाइयों की स्थापना का लक्ष्य ।
- मुरादाबाद, आगरा तथा वाराणसी में हस्तशिल्प औद्योगिक आस्थानों की स्थापना तथा विशिष्ट शिल्पियों को राज्य पुरस्कार देने की योजना ।
- हथकरघा उद्योग के विकास के लिए मेरठ और बाराबंकी में दस-दस हजार इकाइयों के दो समुच्चयों की स्थापना का कार्यक्रम ।

सूचना एवं जन संपर्क विभाग उत्तर-प्रदेश द्वारा प्रसारित

(पेज १३ का शेष)

उदात्त सिद्ध करते हुए उसे देश की तरुणाई का प्रकाश-बिन्दु तक घोषित किया। कुछ एस महानुभाव इस काल के पत्रकारों मे हैं, जिन्होंने 'विश्व के संदर्भ में' उनके राजनीतिक विचारों का मूल्यांकन किया, तो कुछ ने उनके नेतृत्व को भारत के उत्कर्ष की चरम कसौटी माना।

बात यहीं तक होती तो भी क्षम्य थी। कुछ पत्रकार बन्धु तो भूतपूर्व प्रधान मंत्री की खुशामद में सीमा का इतना अतिक्रमण कर गये कि वे अपने विवेक को सर्वथा तिलांजलि देकर लोकनायक जयप्रकाश नारायण के 'तप' और 'त्याग' को भी कलंकित और लांछित करने में पीछे न रहे। आश्चर्य तो हमें इस बात पर है कि वे ऐसे ही पत्रकार थे जो अहर्निश 'नैतिकता तथा 'तटस्थता' का राग अलापते रहते हैं। इसके प्रतिदान में जहां शासन ने उन्हें सम्मानित किया, वहां डाक्टरेट की 'मानद, उपाधि देने की अनुशंसा भी एक प्रदेश के राज्यपाल ने की।

कुछ पत्रकार ऐसे भी इस बीच में आगे आए, जिन्होंने तत्कालीन प्रधान मंत्री की भटैती करने में ही अपने जीवन की 'कृतार्थता' अनुभव की। इनमें से कुछ को 'राज्यसभा' अथवा 'लोकसभा' की आकर्षक कुर्सी मिल गई और कुछ 'पद्मभूषण', 'पद्मश्री' अथवा ऐसे ही किसी अन्य आकर्षण की 'मृग-मरीचिका' के पीछे भागते रहे। कुछ ऐसे भी पत्रकार उन दिनों हमारे मध्य दिखाई दिये, जो अपने को तत्कालीन प्रधान मंत्री का निकट परामर्शदाता सिद्ध करने का भी मिथ्या प्रदर्शन करते रहे। कुछ स्वनामधन्य पत्रकारों ने तो पुराने राज-दरबारों के चारणों को भी मात देकर उनके 'बीस - सूत्री' 'तथा पांच - सूत्री कार्य - क्रमों की उत्कृष्टता एवं उपादेयता का ढिंढोरा इस प्रकार पीटा मानो उन्होंने कोई अभूतपूर्व क्रांति का बीज उनमें देखा हो। कुछ ऐसे भी चेहरे उन दिनों प्रकाश में आये जिन्होंने सारे लेखकों और पत्रकारों को संगठित करने और उनके माध्यम से यह घोषणा कराने का ढोंग रचाने का भी सूत्रधार का प्रयास किया कि ऐसा क्रांतिकारी कार्यक्रम तो इससे पूर्व किसी नेता ने प्रस्तुत ही नहीं किया था।

आइये, हम सोचें कि क्या वे वही पत्रकार हैं जो अपने को गणेशजी, माखनलाल जी, पराडकर जी तथा बेनीपुरी जी जैसी विभूतियों कीर्ति - पताका का संवाहक समझ हैं। देश के सौभाग्य से आज 'आतंक' एवं 'अवसाद' की कुहेलिका दूर हो गयी है और देश के शासन की बागडोर जनता ने पूर्ण आस्था तथा विश्वास के साथ ऐसे नेताओं के हाथ में सौंप दी है, जिसमें से अधिकांश के तप, त्याग और निष्ठा में रंचमात्र भी संदेह नहीं किया जा सकता। आज समय है कि हम ऐसे स्वार्थी, पद-लिप्सु और अवसरवादी पत्रकारों की नकाब को उतारें और अपनी उसी ज्वलंत परम्परा की प्रतिष्ठा करें जिसके अमर आलोक में हमने आजादी की लडाई लड़कर, देश में एक सुखद प्रजातंत्र की स्थापना का सपना संजोया था। आशा है, हमारे पत्रकार बन्धु निर्माण की इस कठिन बेला में अपने सम्पूर्ण विवेक से शासक वर्ग को उचित दिशा - निर्देश देने में पीछे न रहेंगे।

आपातकाल में अनेक साहित्यकारों एवं पत्रकारों ने, तत्कालीन तानाशाहों के प्रति, उनके दरबारियों जैसा आचरण प्रस्तुत कर, अमर शहीद गणेश शंकर विद्यार्थी, श्री माखनलाल चतुर्वेदी, श्री बाबूराव पराडकर आदि महान साहित्यसेवियों-पत्रकारों की धवल परंपरा को कलंकित कर डाला। प्रस्तुत लेख में विद्वान लेखक ने इसी संदर्भ में अपनी वेदना अत्यन्त सशक्त ढंग से व्यक्त की है, साथ ही, भविष्य के लिये साहित्यों के निमित्त प्रेरक दिशा संकेत भी दिया है।

—संपादक

गन्ना उत्पादकों की उपेक्षा क्यों ?

—एस० पी० राणा

चीनी मिल मालिकों को दीवाली का एक बड़ा सा तोहफा दिये जाने के सम्बन्ध में जो अटकलें लगाई जा रही थीं, अखबारों द्वारा भविष्य-वाणियां की जा रही थी वह इस माह के दूसरे सप्ताह में सत्य साबित हुई। केन्द्रीय सरकार ने खुले बाजार में बिकने वाली चीनी पर उत्पादन शुल्क साढ़े तैंतीस प्रतिशत से घटाकर बीस प्रतिशत तथा लेवी चीनी पर दस प्रतिशत से घटाकर मूल्य के अनुसार साढ़े सात प्रतिशत कर दिया है। केन्द्रीय वित्त मन्त्री श्री एच० एम० पटेल ने घोषणा की है कि सरकार द्वारा यह कदम चीनी उत्पादकों को उचित मूल्य दिलाने तथा चीनी उद्योग के हित के लिये उठाया गया है। किन्तु अत्यन्त खेद का विषय है कि इससे गन्ना उत्पादकों का शोषण होगा। यह भी एक अजीब बात है कि मिल मालिकों ने सरकार से निवेदन किया था कि यदि चीनी पर उत्पादन शुल्क बीस प्रतिशत घटा दिया जाय तो खुले बाजार में चीनी का मूल्य ढाई रुपये प्रति किलो तक हो सकता है। सरकार द्वारा मिल मालिकों की बात मान लिये जाने के बाद भी अभी तक चीनी के बाजार भाव पर कोई असर नहीं पड़ा है।

लेवी चीनी के उत्पादन शुल्क में १६८ रुपये प्रति क्विन्टल यानी १६८० रुपये प्रति टन पर ४२ रुपये प्रति टन की छूट दी गई है। इसी प्रकार खुले बाजार में बिक्री के लिये निर्धारित चीनी पर १७.५ प्रतिशत यानी ४७० रुपये प्रति टन की छूट दी गयी है। इस प्रकार सरकार ने चीनी मिल मालिकों को ९३ करोड़ रुपये उपहार में दिये हैं। जाहिर है कि सरकार की यह घोषणा केवल मिल मालिकों के लिये है इससे गन्ना उत्पादकों को कोई लाभ नहीं मिलेगा। मिल मालिकों को दिया जाने वाला यह उपहार बड़े सुनियोजित ढंग से दिलवाया गया। कहा जाता है कि सरकार में बैठे मिल मालिकों के समर्थकों के एक वर्ग ने मिल मालिकों से कहा कि सरकार के सामने चीनी पर उत्पादन शुल्क घटाने की मांग करो और घाटे की घोषणा कर मिलों में तालाबन्दी कर दो। फलतः कई मिलों ने वैसा ही किया और सीजन शुरू होते ही गन्ना लेने से इन्कार कर दिया। इन्हीं मिल मालिकों के समर्थकों के दूसरे वर्ग ने किसानों के बीच जाकर उन्हें आन्दोलन की धमकी देकर सरकार से यह मांग करने के लिये उकसाया कि चीनी मिलों को किसानों से गन्ना लेने के लिये बाध्य करें। इस प्रकार किसानों का हित सोचे बिना सरकार ने मिल मालिकों को खुश रखने के लिये ९६ करोड़ के राजस्व की हानि कराई। किसानों के बारे में सोचना इस संदर्भ में सरकार ने कतई जरूरी नहीं समझा।

लेखक

वर्तमान सरकार अपने किसानों का हित चिंतक और प्रबल पक्षधर होने का दावा करती है, लेकिन वह शायद यह देखना जरूरी नही समझती कि जहाँ एक ओर किसान के जीवन यापन की तथा कृषि के उपयोग के चीजों की कीमतें बढ़ रही है, वहीं उसके उत्पादन गेहूँ, गन्ना, कपास चावल आदि की कीमतें नहीं बढ़ी है। किसान यह कभी नहीं चाहता कि उसके द्वारा उत्पादित वस्तु की कीमत बेहद बढ़ जाये और

थपेड़ों से आहत सा............

—अवध वैरागी

ट्रेन की रफ्तार और चुपचाप ऊँघते रहने की बेवसी में रात कुछ वैसे ही गुजर गई जैसे उम्मीदों, आश्वासनों के सहारे जिंदगी गुजर जाती है। मौत की खूबसूरती के बारे में लिखने वालों ने काफी कुछ लिखा है, लेकिन जिंदगी की हकीकत के बारे में कुछ कहना विवादास्पद बनने का खतरा मोल लेना है। बावतपुर स्टेशन छूट गया है और वाराणसी करीब है। एक गाँव के बिल्कुल पास से गुजर रही है रेल। सफेदी पुते हुए घरों के मुड़ेरों पर तिरोहित होते हुए चाँद की चाँदनी गुम शुम बैठी है। ज्यों श्वेत अरबिन्द मुकुल पर शारद की निस्पंद वीणा रक्खी हुई हो। आस-पास के खेतों में दो माह पहले आयी बाढ़ का पानी अभी भी जमा है। मैं सोचता हूँ जिन्हे तवे का चाँद मयस्सर न होगा उन्हें आकाश के चांद से क्या लेना देना.......। कुछ हलचल और कुछ आवाजों से मेरी तन्द्रा टूटती है। मैं सुबहे बनारस देख रहा हूँ। उत्तर पूर्व मध्य भारत के तीन लुभावने नजारों में शामे लखनऊ और राते मालवा का जायजा एक अर्से तक लेता रहा हूँ। लेकिन सुबहे, बनारस का महत्व मैं ज्यादा मानता हूँ। शामे लखनऊ में कोरे आश्वासनों का छलावा है। राते मलावा में बिखरे सपनों को बटोरकर किया गया मन भावन रेखाङ्कन है। जब कि वरुणा नदी और अस्सीघाट के बीच बसे इस शहर में जिंदगी एक अनिवार्य कसक है और मौत महज अनुपस्थित हो जाना। जवानी में गंगा का बहाव है, मौज मस्ती और फक्कड़पन का बेमिसाल आलम एक नदी गंगा और एक देवता विश्वनाथ। आम शहरों की तरह भागदौड़ की यांत्रिकता से अलग इस शहर में डोलीं की खुशी और अर्थी का गम कोई मायने नहीं रखता। प्रायः सहज भाव से ही यहां बासुरी की सुरीली तान और शहनाई की दर्दीली आवाज को सुन लिया जाता है। दुनियाँ के तमाम शहर उनके लिए हैं जो दुनिया को समझना चाहते हैं, वाराणसी तो सिर्फ उन लोगों का शहर है जो अपने को समझना चाहते हैं। 'एक आदमी के भोजन का सवाल है भइया, सोचने का क्रम एकाएक टूट जाता है। सामने एक अधेड़ उम्र का व्यक्तिखड़ा है। ललाट पर चंदन का भरपूर लेप आँखों से

आम उपभोक्ता को परेशानी हो किसान तो अपने उत्पादन लागत में कमी चाहता है। खाद, बीज, कृषि औजार और सिंचाई में उपयोग की जाने वाली बिजली की कीमत उसे जिस ऊँची दर पर चुकानी पड़ती है उस हिसाब से उसके द्वारा उत्पादित वस्तुयें बेहद सस्ती हैं। उपरोक्त चीजों को किसानों के लिए सस्ती दर पर सुलभ कराना सरकार का दायित्व है और मिल मालिकों का हित साधन कर सरकार अपने दायित्व से मुकर रही हैं।

लोकसभा के चुनाव के दौरान जनता पार्टी के वरिष्ठ नेताओं ने कांग्रेस सरकार पर यह आरोप लगाया था कि वह विदेशों से गेहूं १४६ रुपये प्रति कुन्तल मँगा रही है जबकि अपने यहाँ के गेहूं का दाम १०५ रु० कुन्तल की दर से किसानों को दे रही है, यदि कॉंग्रेस सरकार १४६ रु० कुन्तल की दर से अपने किसानों को गेहूँ की कीमत दे तो इससे उन्हें प्रोत्साहन मिलेगा और वे अधिक उत्पादन करेंगे किन्तु जनता सरकार बनने पर उसके वरिष्ठ नेताओं ने गेहूँ पर केवल पांच रुपये प्रति कु० की दर से बढ़ोत्तरी की जिससे किसानों में निराशा फैली। प्रश्न उठता है कि क्या जनता सरकार की यह नीति किसान पोषक नीति कही जायेगी अथवा क्या यह नीति किसी किसान समर्थक सरकार की हो सकती है। किसानों से किये जाने वाले वायदे कोरे चुनावी वायदे नहीं होने चाहिये। कृषि प्रधान देश में अपना स्थायित्व चाहने वाली सरकार को किसानों की समस्याओं पर अपेक्षित रूप से सोचना चाहिये।

याचना का भाव और हथेली फैली हुई मैं क्षण भर को भावना की गहराइयों मे जाता हूँ। पेट में रोटी और जेब में पैसे रखकर अपनी प्रेमिका की झील सी, हिरनी सी आँखों में अपने सपने को तैरते हुये देखने वाले हर उम्र के व्यक्ति मैंने देखे हैं। इन याचना भरी एक जोड़ी आंखों में अरमानों का जनाजा क्यों डूबा हुआ है। क्या आजादी के तीस वर्ष बाद भी इस सवाल पर सोचने की कोशिश होगी? उसकी जरूरत के हिसाब से कुछ देना मुश्किल सा लगता है, अपनी जेब के हिसाब से उसे एक छोटा सा सिक्का देना चाहता हूँ। उँगली कटाकर शहीदों में नाम लिखाने की भी एक परम्परा हो सकती है शायद। ट्रेन काशी स्टेशन से चल पड़ी है। वाल अरुण की लोहित रश्मियों से गंगा का पानी आरक्त हो उठा है। वह संज्ञा सून्य सा सामने की प्राकृतिक मरीचिका में कुछ खोजने लगा है, निराश अपलक, कौन समझाये उसे कि गंगा में कुछ खोकर फिर ढूंढ़ा नहीं जाता।

.........मुगलसराय......बक्सर ....आरा......... सुआपंखी धन खेतों का दूर-दूर तक मनभावन नजारा; फिर वही गहरी गंगा और विशाल शोणभद्र, और पटना, प्राचीन भारतीय इतिहास की पोथी बाँचता हुआ हिन्दुस्तान का एक अदद शहर जहाँ अशोक और समुद्रगुप्त अब नहीं रहते.......... ।

सुबह बिनोद को बिना कुछ बताये ही चल पड़ा राजेन्द्र नगर की ओर। चलते-चलते अचानक कदम रुके। आखे नम हो आयीं किससे मिलने जा रहा हूँ, फणीश्वर नाथ रेणु तो अब रहे नहीं। हिरामन के उड़ जाने की हकीकत से एक टीस फिर भर गई, मन में, खाली पींजरा देखकर क्या करूँगा।......परिस्थियों का एक कारवाँ........संघर्ष समिति के नौजवान...... कभी नारे गगनभेदी हुआ करते थे। अब मन्सूबे मुट्ठी में कैद हैं। संचित अरमानो को मुट्ठी भर आश्वासन मिल गया है इससे ज्यादा इतने कम समय में क्या दिया जा सकता है। आखिर तीस बरस में क्या मिल गया? किसको क्या, कब, और कितना मिला, क्या करूँगा सुनकर अपने ही पास क्या व्यथा की कमी है?

...—कदम कुआँ की ओर कदम बढ़ चले हैं एक अर्से से परिचित घुमावदार रास्ते। हर मोड़ पर अट्टहासों में गूंजा हुआ मेरा अपना अतीत, सच, स्मृतियों के अलावा कुछ भी तो मधुर नहीं होता। ......प्रभा स्मृति, लोकनायक का निवास, जिसे बदलाव ने बेहद लोकप्रिय बना दिया है।.......सामने जे० पी० बैठे हैं, आँखों में साकार सपनों की चमक, प्रश्नों के इतने त्वरित उत्तर कि लगता है बुढ़ापा की परिभाषा बदलनी चाहिए। 'एगो कुर्सी ले ल इहाँ बईठ।' मेरी ओर देखकर मेरे अभिवादन का उत्तर देते हुए वह कहते हैं। भीड़ अब छँट गई है, शेष है गँवई गाँव के कुल तीन चार लोग, चन्द सवाल और अपेक्षित जवाब के बाद मैं चल पड़ा हू पटना से गया की ओर। यादों का एक लम्बा सिलसिला। तेज गति से भागती हुई कार। 'यहीं से बेलछी जाने का रास्ता है' ड्राइवर कार धीमी कर कहता है। मैं चुप रहता हूँ। ड्राइवर अपना मौन फिर तोड़ता है 'जब यहाँ मामला हुआ था सैकड़ों लोग रोज जाते थे वहाँ। मैं फिर चुप ही रहता हूं, क्या जवाब दूं। सुबह का अनपढ़ा अखबार पढ़ने लगता हूं। काँग्रेस के विभाजित हो जाने की पूरी उम्मीद है। जनता पार्टी में भी असन्तोष बढ़ता जा रहा है। मैं पन्ना पलट देता हूँ, कहीं गेहूँ सड़ने की खबर कहीं लोगों के भूखों मरने की खबर, मुझे लगता है कि किसी बच्चे के हाथों से रोटी का टुकड़ा छीनकर वनबिलाव भागा जा रहा है।*****

एक मिनी कविता

—अशोक आनन्द

सौ बार
दुतकारे जाने के बाद भी
तुम खड़े रहते हो,
हर हमराज
तुम्हारी सफलता का राज
यही बताता है।

युवारश्मि

१. उत्तर प्रदेश के अलावा अन्य चार हिन्दी भाषी प्रदेशों राजस्थान, बिहार, हरियाणा, मध्य प्रदेश के युवकों युवतियों में लोकप्रिय है।

२. इसके पाठकों में छात्र, अध्यापक, अभियन्ता- अधिवक्ता, चिकित्सक, ग्राम प्रधान, ब्लाक प्रमुख आदि समाज के सभी वर्गों के लोग हैं।

३. प्रकाशन के सिर्फ तीन वर्षों में चार सौ से अधिक युवकों युवतियों को लेखन की ओर प्रोत्साहित कर सामयिक चिन्तन से जोड़ने का श्रेय युवारश्मि को है।

आप अनुभूतियों के महासागर हैं, युवारश्मि के सम्पर्क से आपका चिंतन शब्दों में बँधकर मुखर हो उठेगा।

नवम्बर, १९७७

रजिस्ट्रेशन नं० आर० एन० २६६७४/७४

पोस्टल रजिस्ट्रेशन एल० डब्लू/एन०पी १४७

ये कातर आखें आपकी सहायता की बाट जोह रही हैं...

- बिपत्तियां कहीं भी, कभी भी आ सकती हैं।
- वे बिपदा से घिरे हैं।
- आप क्या कर रहे हैं?
- चुप न बैठे रहिये

"युवा रश्मि
तूफान पीड़ित सहायता कोष में
अधिकाधिक धन दीजिए।"

...देर न कीजिये, भरपूर सहायता दीजिये

मुद्रक प्रकाशक अवध किशोर पाठक द्वारा विश्वास प्रेस अमीनाबाद के लिए उत्तर प्रदेश सहकारी मुद्रणालय' ८५, तिलपुरवा हुसेनगंज लखनऊ में मुद्रित एवं डी-२/२ पेपर मिल कालोनी लखनऊ-२२६००६ से प्रकाशित

युवा रश्मि

सामाजिक घोषणा
पर
युवा हस्ताक्षर

वर्ष ३ अंक ११ दिसम्बर, १९७७

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान में आयोजित एक गोष्ठी में बोलते हुए केन्द्रीय शिक्षामंत्री डा० प्रतापचंद्र चन्द्र ।

गांव जा रहे शहर की ओर

'शहर में रोटी कमाना!' इसका क्या अर्थ है? इन शब्दों पर विचार करने से पता चलता है कि इनमें एक अजीब मजाक जैसी बात है। जिस देहात में जंगल-मैदान हैं, चौपाए हैं, सारांश—जहाँ धरती की सारी संपदा है—उस देहात को छोड़कर लोग रोटी कमाने के लिए भला ऐसी जगह क्यों आते हैं, जहां न पेड़ हैं, न घास, न धरती और जहाँ सिर्फ पत्थर और धूल ही धूल है? जब मैंने नगर में रहने वाले सैकड़ों हजारों लोग—कुछ अमीर और कुछ गरीब—से पूछा वे शहर क्यों आये हैं—तो उनमें से प्रत्येक ने बिना किसी अपवाद के यही उत्तर दिया—

'यहां बोया काटा नहीं जाता, फिर भी यहां धन का अम्बार लगा हुआ है।'

यहां प्रत्येक वस्तु की बहुलता है, यहीं वे उस धन का उपार्जन कर सकते हैं जिसकी उन्हें गांव में अनाज, मकान, घोड़ा आदि आवश्यक सामग्री के लिए जरूरत पड़ती है। फिर भी यह तो सब जानते हैं कि गांव ही समस्त सम्पदा का उद्गम हो सकता है और वहीं वास्तविक धन—अनाज, लकड़ी, घोड़ा आदि मिलता है। जो देहात में उपलब्ध है, उसे लेने के लिए लोग शहर क्यों जाते हैं? इससे भी बड़ा और महत्वपूर्ण प्रश्न है कि गांव वालों को आटा, जौ, घोड़े, चौपाए आदि जिन पदार्थों की स्वयं जरूरत होती है, उन्हें लोग देहात से शहर में क्यों ले जाते हैं?

—लियो तालस्ताय

सामाजिक घोषणा पर युवा हस्ताक्षर

*

संरक्षक

श्री सत्य प्रकाश राणा

*

सम्पादक

अवध बैरागी

पत्रिका में उधृत विचार लेखकों के हैं उनसे सम्पादकीय सहमति अनिवार्य नहीं।

*

वार्षिक शुल्क—दस रुपये

एक प्रति—एक रुपया

*

सम्पादकीय कार्यालय :

डी-२/२ पेपर मिल कालोनी

लखनऊ-२२६ ००६

*

आवरण चित्र

पूरे प्रदेश में विचार गोष्ठियों तथा हिन्दी संस्थान के प्रकाशनों की प्रदर्शनी की एक विस्तृत योजना बनायी गई है जिसके अनुसार विश्वविद्यालयों के सहयोग से हिन्दी माध्यम की सम्भावनाओं पर विस्तार से विचार विनिमय करना सम्भव हो सकेगा।

केन्द्रीय शिक्षा मन्त्री श्री प्रताप चन्द्र चन्द्र ने लखनऊ में इस योजना का हिन्दी संस्थान में आयोजित प्रदर्शनी का उद्घाटन करके किया। श्री चन्द्रभानु गुप्त ने गोष्ठी की अध्यक्षता की। गुप्त जी के समीप बैठे (लिखते हुए) उ० प्र० हिंदी संस्थान के निदेशक श्री ठाकुर प्रसाद सिंह।

विषय-सूची

........मानव तुम सबसे सुन्दरतम

महाकवि सुमित्रानन्दन पंत अब नहीं रहे। यानी हाड़ माँस के जिस शरीर को सुमित्रानन्दन पंत के नाम से जाना जाता था वह अब नहीं रहा। जमाने को नया युग बोध, नयी जीवन दृष्टि होने वाला मसीहा कभी मरा नहीं करता। अपने महान कृतित्व के कारण अमरत्व के दायरें में स्थापित हो जाता है। जब तक झरनों का कल-कल संगीत है, सरसों के फूलों में वसन्त का सकेत है, टेसू की लाली में ग्रीष्म का मौन निमंत्रण है, नभ से नीलिमा और निशा से नखत का साथ है, पंतजी को आदरपूर्वक स्मरण किया जायेगा। तुलसी और सूर की भाँति पंतजी ने भी स्वान्तः सुखाय लिखा। आज के कवियों की तरह प्रचार प्रियता उनको छू तक नहीं पाइ थी। उनका कहना था कि महत्व तो कृतियों का होता है फिर शरीर के अभिषेक से क्या लाभ ? हमारी एक अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण परम्परा हो गई है कि यहाँ कफन ओढ़ लेने के बाद ही व्यक्ति के महत्व को समझा जाता है। प्रसाद जी के प्रस्थान के बाद बेल्जीयन के एक पत्रकार ने कहा था कि यदि प्रसादजी 'फ्लेशमिस' भाषा के कवि होते तो उन्हें देवदूत सा पूज्य माना जाता। निराला के निधन पर यूरोप के दो दर्जन से अधिक प्रख्यात लेखकों और समीक्षकों का कहना था कि काश निराला यूरोप में पैदा हुये होते तो उनकी सिर्फ एक कविता 'जूही की कली' का महत्व 'वर्ड्सवर्थ की समस्त कृतियों से हजार गुणा अधिक होता वे सम्मान और स्तवन की पराकाष्ठा पर होते। पंतजी के बारे में यही बातें दुहराइ जायेगीं। यह हमारा सौभाग्य है कि भारत भूमि पर भारतीय साहित्य के युग कवि श्री पंत पैदा हुये और सबसे बड़ा दुर्भाग्य भी कि हम ऐसी महान विभूति को उनके जीवन काल में अपेक्षित सम्मान न दे सके। पिछले वर्ष दिसम्बर माह के अन्त में जब प्रख्यात लेखक यशपाल का लखनऊ में देहा वसान हुआ था तो तत्कालीन उत्तर प्रदेश सरकार ने उन्हें राजकीय सम्मान दिया था। बदलाव के बाद की सरकार ने पंतजी की मृत्यु की खबर भर रेडियों पर सुन ली। तीर्थराज प्रयाग के पावन संगम पर जब पंतजी की काया पंचतत्वों को समर्पित की जा रही थी ठीक उसी समय वहाँ से दो फर्लाङ्ग की दूरी पर स्थित शास्त्री पुल पर प्रयाग के कुछ प्रसिद्ध नेता जिन्दाबाद और मुर्दाबाद के नारे लगा रहे थे। पुल के नीचे गंगा बह रही थी और दूर ऐतिहासिक किले की प्राचीर से चिपकी हुई यमुना। दोनों नदियों के बीच विषमबाहु त्रिभुज की तरह फैली संगम स्थली पर सिर्फ दो ही आवाजें थी नेताओं के नारों की और धधकती चिता की सनसनाहट भरी आवाजें जिसमें विलीन हो गया था वह स्वर। वह स्वर जिसने सुमनो और विहगों की अपेक्षा मानव को सुन्दर तम् माना।

प्रसाद, पंत और निराला की त्रयी समाप्त हो गई है। अब प्रश्न यह उठता है कि क्या कवियों, लेखकों को हम पाठ्यक्रमों तक ही सीमित रखेंगे। पढ़ेंगे, परीक्षा देंगे और भूल जायेंगे अथवा हृदय की धड़कनों के साथ उनके कला सौष्ठव को जोड़ेंगे। क्या जीवन का वह भी कोई रूप हो सकता है जिसमें अनुभूति, संवेदना और भावना का कोई महत्व न हो ? यदि यह निर्विबाद रूप से सच नहीं है तो फिर आम आदमी के साथ ही व्यवस्था का ध्यान भी इस ओर जाना चाहिये।

हमारे देश के इतिहास में कला का सबसे बड़ा शत्रु औरंगजेब हुआ था। उसने कला की अर्थी जलवायी और शवयात्रा निकाली किन्तु जब एक स्वाभिमानी कलाकार ने उसे बताया कि यह सृष्टि ही कलामय है। जब तक कोयल की कूक, फूलों की हँसी बंद नहीं की जाती तब तक कला को निर्वासित करना असम्भव है। औरंगजेब इस बातपर मौन रह गया था।

यादों के ताजमहल बनाने में जितनी इमानदारी है, वेइमानी का उतना ही अंदेशा है इसमें। ताजमहल ऐसा हो जिसमें दृश्य और स्पर्श गुण हो। पंतजी की महानता थी कि उन्होंने मानव को सुन्दरतम माना। अब उनकी कल्पना के अनुरूप मानव को अपने को सुन्दरतम् बनाने का यत्न करना होगा। इतना कि सुमनों और विहगों के कार्य दर्पण में वह अपने को सुन्दर देख सके।

पंत जी अब नहीं रहे

—ठाकुर प्रसाद सिंह

प्रसाद, निराला और पंत के रूप में प्रसिद्ध त्रयी के दो आधारस्तम्भ प्रसाद और निराला जा चुके थे, पंत जी के निधन के साथ ही यह त्रयी इतिहास का विषय हो गयी। छायावाद के आधार स्तम्भ, आधुनिक हिन्दी कविता के प्रतिभा-संपन्न कवि, निरंतर क्रियाशील रचनाकार महाकवि श्री सुमित्रानन्दन पंत के साथ एक युग का अन्त हो गया। विगत ६० वर्षों से हिन्दी काव्य पर जलद-छायाभ रंग में छाये हुये पंत जी के जाने से निश्चित ही न केवल हिन्दी अपितु पूरे देश की अपूर्णीय क्षति हुयी है।

अंतिम बार पंत जी के दर्शन उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान के पुरस्कार वितरण समारोह में लखनऊ में हुये थे। वे संस्थान के सम्मानित सदस्य थे और उन्होंने इस समारोह में पधार कर निश्चित ही उसे मान्यता दी थी। बातचीत के क्रम में उन्होंने कुछ नयी योजनाओं पर प्रकाश डाला था और मुझे यह विश्वास दिलाया था कि वे इलाहाबाद से विस्तार से लिख कर अपनी योजनायें भिजवा देंगे। मेरा दुर्भाग्य है कि मैं इसके बाद इलाहाबाद जाकर उनके उन विचारों का लाभ नहीं उठा सका, जिन्हें वे विशेष रूप से संस्थान के लिए सुरक्षित रखे हुये थे। फिर भी उन्होंने जो कुछ लिखा है और जो संदेश वे अपनी रचनाओं में छोड़ गये हैं वह हमारे लिये निरंतर पथ-प्रदर्शक का कार्य करेगा।

पिछले वर्षों में उनका आना-जाना बहुत कम हो गया था और यात्रा के मामले में वे पहले से भी अधिक सावधान हो गये थे। फिर भी अत्यंत आवश्यक कार्य होने पर वे बच्चों की तरह अधीर होकर घर से चल पड़ते थे। उनकी हर यात्रा एक अन्वेषण यात्रा जैसी ही रोमांचक और चुनौती से भरी होती थी। आज उस यात्रा का अन्त हो गया है।

कौसानी से सटे हुये तल्ला-कौसानी के हथछीना गांव से इलाहाबाद का रास्ता बहुत सीधा नहीं था। जन्म के साथ ही माँ की मृत्यु हो जाने के कारण बालक सुमित्रानन्दन पंत का मन निश्चित ही घर से उचट गया होगा लेकिन घर के प्रति उनका मोह भाव निरन्तर बना रहा। प्रकृति के कवि के रूप में प्रसिद्ध पंत जी वस्तुतः घर आंगन के कवि हैं। माता पिता को अपने बच्चे के लिए नगण्य सात्याग करते हुये देखकर भी जिनकी आंखें सजल हो जायें, उनके मन में गृहस्थी के लिए कितनी ललक होगी यह जानना बहुत मुश्किल नहीं होगा। उन्हीं के शब्दों में "माँ ने न रहकर मुझे मातृत्व के महत्व को सिखला दिया है मुझे जन्म देने में ही मेरी मां नहीं रहीं। मेरे बराबर स्त्रियों और लड़कियों का प्रशंसक और समर्थक तुम्हें कोई नहीं मिलेगा।' स्त्रियों के लिए उनके मन में सहज ही कोमल भावनायें थीं, वे उसमें मातृत्व के कारण ही उसे पूजनीय और त्यागमयी मानते थे। वस्तुतः वे जिसे भी स्नेह करते थे मां की तरह उसे अपने आलिंगन में घेर लेते थे। प्रकृति भी उनके लिए मां जैसी ही थी। वह उनसे एकांत में बातें करती थीं और पंतजी उसकी बातें समझते भी थे। नैसर्गिक बोध की पवित्रता का स्पर्श उनके समस्त व्यक्तित्व को पवित्र और गरिमापूर्ण बना गया था। युवावस्था में वही प्रकृति उनके लिए प्रिया का रूप धर कर आयी। प्रकृति ने ही उन्हें कवि बनाया और प्रकृति की रहस्य की अनुभूति से ही वे दार्शनिक हुये। हिममंडित शिखर, वृक्षराज, झरने और पल-पल बदलता प्रकृति वेश सभी के पीछे एक रहस्य है जिसे वे निरंतर खोजते रहे। उन्हें बराबर प्रकृति की आड़ से कोई पुकारता रहा, संकेत देता रहा :—

'सघन मेघों का भीमाकाश,
गरजता हो जब तमसाकार,
दीर्घ भरता समीर निःश्वास,
प्रखर झरती जब पावस-धार,
न जाने तपक तड़ित मिस कौन,
मुझे इंगित करता तब मौन।"

हिमालय उनके लिए पिता जैसे भी था 'पूर्वांचल, प्रियतात, पुत्रवत रहा कुर्मव्रत दृढ़व्रत"।

हिमालय उनका शिक्षक भी था।

"सोच रहा जिसके गौरव से
मेरा यह अंतर जग निर्मित,
लगता तब है प्रिय हिमाद्रि,
तुम मेरे शिक्षक रहे अपरिचित।'

कौसानी के जीवन में साहित्य अनुराग भी प्रचुर था, परिवार के लोग अक्सर काव्य चर्चा में लीन रहा करते थे। उन दिनों संस्कृत में लिखे कुमंयूनी काव्य अल्मोड़ा

अखबार में छपा करते थे। उनमें कुछ कविताएं उनके बड़े भाई श्री हरिदत्त पंत की भी हुआ करती थीं। उनके बड़े भाई देवीदत्त जी राजनीति की ओर गये लेकिन वहाँ के भूल से बंधे रहे। संभवतः उन्हीं के प्रभाव से १९२० में जब पंत जी म्योर कालेज इलाहाबाद में पढ़ रहे थे, असहयोग आंदोलन में उन्होंने कालेज छोड़ दिया और स्वातंत्र्य चेता कवि बने रहे।

सहज करुणा और जन्मजात अंतर्दृष्टि के कारण ही वे निरन्तर संयमित तथा चेतनाशील रहे। वे जीवन में आस्था और आशावाद के समर्थक थे तथा विश्वासों के प्रति समर्पित होने में सुख का अनुभव करते थे। बचपन की पीले कागज की कापी में लिखी हुयी उनकी कविताओं तक में उनका यह चरित्र परिलक्षित होता है। अपर प्राइमरी कक्षा तीन पंत १९०९ में उत्तीर्ण हो गये। आगे की पढ़ायी के लिए अब उन्हें आगे अल्मोड़ा जाना था। १९१० में उनका प्रिय घर छूट गया, अल्मोड़ा में वह और विस्तृत क्षेत्र में आये। उन्होंने दुनियां का विस्तार तो वहां देखा लेकिन उनकी पीठ पर बराबर हिमालय का हाथ रहा। उन्हीं दिनों अल्मोड़े में स्वामी सत्यदेव तथा अन्य कई महत्वपूर्ण व्यक्तियों का पदार्पण हुआ, जिनके चलते वहां का शांत चित्त आलोड़ित हो गया। पंतजी इससे प्रभावित हुये बिना नहीं रह सके। तभी कालिदास के रघुवंश से प्रभावित होकर उन्होंने दिलीप की गाय—'नन्दिनी' के नामका अनुकरण करके अपना उपनाम 'नन्दिनी' रखा। उनका यह उपनाम १९२९ तक उनके साथ रहा, बाद में छूट गया। यहीं उन्होंने अपना पहला उपन्यास 'हार' लिखा जो १९६० में जाकर प्रकाशित हुआ। १९१८ में पंतजी देवदत्त पंत के साथ वाराणसी आये और वहां के जय नारायण हाई स्कूल से १९१८ में हाई-स्कूल परीक्षा पास की। १९१९ में म्योर सेन्ट्रल कालेज, इलाहाबाद में प्रवेश लिया जिसमें वे केवल असहयोग आंदोलन १९२० तक रह सके।

१९१९—२० तक पंत जी की प्रसिद्धि एक नये कवि के रूप में हो चुकी थी। उन्होंने पूरे हिन्दी संसार का अपनी जिन कविताओं की ओर ध्यान आकर्षित किया वे 'वीणा और 'ग्रंथि' में संकलित होकर प्रकाशित हुयीं। लेकिन छायावाद के उत्थान का जो गौरवपूर्ण कार्य पंत जी के हाथों होना था उसका श्रेय उनके काव्य संग्रह 'पल्लव' को ही जाता है। 'पल्लव' की भूमिका छायावाद के विकास की एक महत्वपूर्ण घटना है। उसे देखने से लगता है कि पंत जी जो ऐतिहासिक कार्य संपन्न कर रहे थे, उसके प्रति वे अत्यन्त सजग थे। हिन्दी कविता की नयी भाषा देने का साहसिक कार्य अनजाने में ही नहीं संपन्न हो गया। इसके लिए प्रसाद, निराला अथवा पंतने कितना मनन और चिंतन किया था इसका अंदाज उनके काव्य ग्रंथों के अतिरिक्त उनके समय-समय पर लिखे गये निबंधों से लगता है। 'पल्लव' के आस पास 'आंसू' और परिमल' का प्रकाशन भी हुआ। यह तीनों ही पुस्तकें छायावाद के बिकास की प्रारंभिक कड़ियां हैं। 'पल्लव' के बाद पंत जी ने पीछे मुड़कर नहीं देखा। उनके 'ज्योत्सना' काव्य रूपक और 'रूपाभ' मासिक-पत्र ने छायावाद को विशेष गति दी। इस बीच वे कालाकांकर पहुंचे, जहाँ उनकी दृष्टि और अधिक व्यावहारिक हुई। उनकी बाद की रचनाओं में इसीलिये सहज भाषा और ऋतु कल्पना की ओर उनकी प्रवृत्ति दिखायी पड़ती है। उसी के साथ उनमें एक तरह की रहस्यात्मकता के दर्शन भी होने लगते हैं। 'गुंजन' की रचनायें इसका प्रमाण हैं। इस बीच अल्मोड़े में पंतजी ने महात्मा जी के दर्शन किये और उनसे अभिभूत हो गये। विवेकानंद जी के जीवन का असर भी उनके जीवन पर था। अपने युगान्त और युगपथ शीर्षक काव्या-संग्रह की कविताएं लिखते समय उन्होंने ये पंक्तियां भी लिखीं थीं:

'तुम वहन कर सको-जन-मन में
मेरे विचार,
वाणी मेरी चाहिये तुम्हें क्या
अलंकार'

कालाकांकर से घूमघाम कर पंत जी इलाहाबाद आये और १९४० से वहीं बस गये। इसके पहले 'पल्लवनी' काव्य संग्रह भी प्रकाशित हो चुका था तथा 'ग्राम्या' भी उसी के साथ प्रकाशित हुई थी। यह दोनों ही

शेष पृष्ठ २२ पर

क्या आप भी लेखक हैं ?

—अमल कुमार डे

लेखन की कला सीखी नहीं जा सकती, यह सीखना अवश्य संभव है कि सुन्दर, सफल और एक नये लेखक के आवश्यक 'तत्व' क्या हैं—'तकनीक क्या है ? लेखन के मूल तत्वों एवं तकनीक जानने के पश्चात नियमित अभ्यास से लेखन में कलात्मकता आती है, अन्यथा नहीं, हर स्थिति में, पत्र पत्रिकाओं में लिखने के लिये स्कूली परीक्षाओं से भिन्न तरह के अध्ययन एवं दृष्टिकोण के साथ धैर्य तथा मेहनत की अनिवार्यता होती है, यह कोई जरूरी बात नहीं कि एक उच्च श्रेणी में उत्तीर्ण स्नातक अच्छा लेखक भी हो, और यह भी कोई जरूरी नहीं कि हर व्यक्ति लेखक और कवि हो।

अच्छे और एक नये लेखक के लिये सबसे पहली आवश्यकता है—भाषा पर अधिकार,

जब तक किसी भाषा विशेष का समुचित ज्ञान नहीं हो, आप अपने विचारों को अभिव्यक्ति नहीं प्रदान कर सकते हैं, इसी की कमी के कारण अच्छे विचारक भी सफल लेखक नहीं बन पाते हैं।

अत: लेखकों की दुनियां में पैर रखने से पहले भाषा को सुदृढ़ बनाने के लिये 'नियमित अध्ययन' अनिवार्य है, अध्ययन की उस कोटि के साहित्य की जिस स्तर पर आप अपने को प्रतिष्ठित देखना चाहते हैं, अगर आप निम्नस्तर के फुटपाथी साहित्य का अध्ययन कर रहे हैं, तो कभी भी आप उस स्तर तक नहीं पहुंच सकेंगे जहाँ आज उच्च कोटि के साहित्यकार प्रतिष्ठित हैं। मात्र लिख लेना और अपने को कहानीकार, लेखक अथवा कवि मान लेना कोरी भावुकता है। अपनी रचना को तर्कसंगत एवं सुरुचिपूर्ण बनाने के लिए अध्ययन के अतिरिक्त चिंतन, अवलोकन की भी आवश्यकता है, मान लिया आप किसी विषय-विशेष पर कुछ लिखना चाहते हैं, चाहे वह कहानी हो अथवा लेख या अन्य रचना—उस पर लम्बे अन्तराल तक चिंतन करें, उसे प्रस्तुत करने का नवीनतम तरीका सोचें; ताकि पाठक आपकी कृति को आरंभ से अंत तक पढ़ने के लिये विवश हो जाय और अन्त में उस पर अपना विचार या प्रतिक्रिया व्यक्त कर सके। पाठक को जब आप प्रभावित करते हैं—उसी समय आपका लेखन सफल कहलाता है, न कि आपकी रचना के छप जाने मात्र से।

अच्छे और सफल लेखक के लिये तीसरी प्रमुख बात है—विषय का चुनाव, बहुधा विषय से पूर्ण परिचित हुए बिना, नये लेखक लिखने के लिए बैठ जाते हैं, और जो कुछ उल्टा-सीधा कागज पर उतर गया उसे लेकर सम्पादकों के सर पटक देते हैं, इसकी सीधी प्रतिक्रिया यह होती है कि सम्पादक आपकी रचनाओं के प्रति उदासीन हो जाते हैं, अत: जिस 'विषय' पर आप लिखने जा रहे हैं—उस पर सर्वप्रथम पूर्ण चिंतन करें—दस-बीस पंक्तियों में उसका प्रारूप तैयार करें—प्रारम्भ, में घटना-क्रमों की एकता और चर्मोत्कर्ष तक पहुंचने के सही मार्ग को पकड़ें, फिर लिखना आरम्भ करें—पूर्ण आत्म विश्वास के साथ कि जो कुछ आप लिख रहे हैं वह सम्पूर्ण तथ्य सही और श्रेष्ठ है, पूरा लिखने के बाद उसे दो-तीन बार अवश्य पढ़ें, जहाँ उचित लगे आवश्यक संशोधन करें——काटें या जोड़ें। जब आपको यह पक्का विश्वास हो जाय कि आपकी रचना में बाकी कुछ नहीं रह गया है——उसे सादे पन्ने पर एक ओर समुचित हाशिया छोड़ते हुए स्पष्ट अक्षरों में लिखें—संभव हो तो टाइप करा लें, इसके बाद पुन: एक बार एक-एक शब्द एवं 'पंचुएशन' पर ध्यान देते हुए पढ़ें—आवश्यक सुधार करें, अब आपकी रचना किसी सम्पादक के पास भेजने योग्य हुई।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अच्छे लेखन के लिए काफी धैर्य, लगन, मेहनत की आवश्यकता होती है।

अब आपके लिए चौथी आवश्यकता है वह यह कि संवाददाता के आवश्यक गुणों से युक्त होना प्रत्येक लेखक के लिए जरूरी है, इनके बिना वह लेखन के क्षेत्र में न युग द्रष्टा ही रह सकता है और न युग श्रेष्टा ही बन सकता है, लेखक युग द्रष्टा और युग श्रेष्टा दोनों ही होता है, सफल

लेखक के लिये युगबोध और समकालीन परिस्थितियों से परिचित होना जरूरी है।

इसीलिये लेखक एक जागरूक चिंतनशील सजग पाठक और कर्मठ व्यक्ति होता है। परिस्थितियों और बंधन-प्रतिबंधनों से आबद्ध मान्यताओं को मानने या तोड़ते हुए आप जो कुछ भी लिखते हैं वह निश्चय ही अपनी परिपूर्णता के साथ होगी, किन्तु जब तक आप अपनी रचनाओं को पाठक के समक्ष नहीं रखते हैं उनका महत्व कुछ भी नहीं रहता है, अतः उनके प्रकाशन की व्यवस्था अनिवार्य है।

आप अपनी रचनाओं को दो तरह से प्रकाशित कर सकते हैं, प्रथम पुस्तकाकार में और द्वितीय पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से, रेडियो तथा टेलीविजन के नये माध्यमों से भी आपके बिचारों का प्रसार हो सकता है, लेकिन ये अधिक सुलभ साधन नहीं है, पुस्तक के रूप में अपनी रचनाओं को प्रकाशित करने में बहुत खर्च पड़ता है, नये लेखकों को प्रकाशक छापने का "रिस्क" भी नहीं उठाना चाहते हैं, क्योंकि प्रकाशन व्यय आज बहुत बढ़ गया है अतः नये लेखकों के लिए अपनी रचनायें पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करने का द्वितीय माध्यम ही सुलभ और आसान है।

उपर्युक्त कथन के अनुसार आप अपनी नोट-बुक में जितनी भी पत्र-पत्रिकाओं के नाम याद कर सकें लिख लें, तत्पश्चात् सभी पत्रिकाओं का बराबर अध्ययन करें, किसी नई पत्रिका बाजार में आपको मिल जाती है, तो उसके दो-तीन अंक खरीद कर उसकी भाषा शैली, सम्पादकीय नीति उतार-चढ़ाव का भली भांति अध्ययन करें और अपनी नोटबुक में इनके बारे में कुछ लिख लें।

मुख्यतः पत्रिका का नाम, सम्पादक का नाम और पता, सम्पादकीय नीति, रचनाओं की विभिन्नताओं का उल्लेख, प्रकाशन अवधि (मासिक है या पाक्षिक), वार्षिक तथा एक प्रति का शुल्क वगैरह।

इन सारी बातों का ध्यान अगर आप अपनी रचनाओं के लेखन और प्रकाशन काल में रखते हों तो अवश्य ही आप एक सफल लेखक हैं।

भोर का कोहरा

—रमाकान्त श्रीवास्तव

जा चुकी है रात काफी दूर
लेकिन शेष परछाई अभी है,
क्योंकि लम्बी रात होती सर्दियों की।
चू रहे बुझ कर सितारे
कोहरे की चुवन बन कर।
धुंध में डूबी हुई तरु फुनगियां
लगती कि जैसे हार की बिसरी
हुई यादें
आधी हुमस कर रह गयीं
मानस क्षितिज पर।
जागरण के बोल डूबे चुप्पियों में
रुक गई ठिठुरी हवा
अवरुद्ध गति
हारों वनों के पांव उठकर रूक गये
पगडंडियां
मन व्यालिनों–सी
धुंध के जल के सतह के तनिक नीचे
तैरती हैं।
ढूह टीले उड़ गये हैं भाप बनकर,
जम गयी हैं खेतियां।
राह में उल्टी दिशा का पथिक
सहसा सामने होता प्रगट
लगता जैसे धुंध की गहराइयों से
आत्मा भटकी हुई सशरीर आगे
आ गई हो।
उठ नहीं पाता अलावों का धुआं
शून्य की राहें न ढूढ़े मिल रही हैं।
दब गयी है आंच
लपटे केलियों के फूल-जैसी
दीखती हैं।
ऊबता मन
कब्र में
जिसमे दफन है
किरन-परियां और उनके धूपके पर।

फासला

—उर्मिला गोस्वामी

अचानक ही उसका मूड बन गया 'क्यों न भाभी-भाईसाहब से मिल लिया जाये' वैसे भी लम्बा अरसा बिना मिले व्यतीत हो गया है, करीब ढाई वर्ष होने को जा रहा है। यह दीर्घ अन्तराल कैसे गुजर गया, उनके दरम्यान कैसा क्या चलता रहा वह स्वयं नहीं जानता है ? यद्यपि इसके पूर्व वह कई बार इस शहर से गुजर चुका था, घटों स्टेशन या बस स्टाप पर बैठे बिता दिया करता था, परन्तु मन कभी न हुआ कि भाईसाहब से मिल लें। सच बात तो यह है कि आकर्षण का चिराग ही बुझ गया था भाईसाहब के प्रति उसके मन में। शनैः शनैः अतीत पीछे छूटता गया, अतीत की अपेक्षा वर्तमान को वह ज्यादा महत्व देता है, देना भी चाहिए। उसे कुछ तैरता सा अनुभव हुआ मन में और भावनाओं की रौ में आकर थम गया। कहीं कुछ अन्दर से उछलता सा बहाव आया क्या खून का रिश्ता भावुक मन की एक कल्पित सी अकांक्षा है जिसने अतीत के सायों को परे ढकेल दिया। भाई साहब के बारे में उसे पूरी तरह मालूम नहीं है कि वह किस तरह रहते हैं, उनकी वकालत कैसी चल रही है। एक दूसरे ने इस बात को जानने की दरकार भी न समझी। औपचारिकता वश चार छः मास में एकाध पत्र आ गया तो बस अन्यथा सब सामान्य-सा चलता जाता।

उसका मन अनजानी अनचाही प्रफुल्लता से लबलबा हो उठा छोटा राजू (भतीजा) कैसा लगता होगा, तब कितना प्यारा लगता था, कितनी प्यारी-प्यारी बातें किया करता था... तरह-तरह की शैतानियों से सबका मन मोह लेता था। अब भी उतना ही शैतान होगा··· । देखते ही चिल्ला उठेगा चाचा···चाचा··· दौड़कर पैरों से लिपट जायेगा। तब वह उसके गदे पैरों की परवाह किये बिना ही गोदी में उठाकर चूम लेगा······जैसे उसका अपना बचपना प्रत्यक्ष में प्रगट होने लगा······। अप्रत्याशित खुशी उत्सुकता उसके रोम-रोम को आल्हादित कर रही थी। उसने घड़ी में टाइम देखा चार बज गये थे। आज रात रुकूंगा, कल भी शायद, फिर परसों शाम को वापिस होऊँगा। उसने मन ही मन अपना प्रोग्राम तय कर लिया।

भाईसाहब के पास पहुंचते-पहुंचते पांच बज गये। नेम-प्लेट लगी हुई थी अतः उसे दिक्कत न हुई। राजू ····राजू उसने प्रथम सीढ़ी पर पैर रखते ही कई आवाजें जल्दी जल्दी लगायी······। अन्दर से न किसी के तेज चलने की आहट हुई न कोई स्वर ही। वह यूँ जीना चढ़ता चला गया और कमरे के बाहर जाकर खड़ा हो गया। भाभी-भाईसाहब बैठे थे। राजू जमीन पर कुछ बना रहा था। अचानक ही आया देख दोनों लोगों को अचरज-सा हुआ।

अरे······ भाईसाहब ने मुड़कर देखा··· ।

उसने भाभी-भाईसाहब के पैर छू लिये।

"तबियत खराब थी क्या आपकी ?" पहले वही बोला।

"नहीं तो।" भाईसाहब ने कहा।

"फिर यह ऐसी हालत, सभी ऐसे कैसे हो गये दुबले-पतले से·· ।"

उत्तर में फीकी मुस्कराहट थी उनके चेहरों पर।

"कुछ काम था क्या यहां ?"

"नहीं वैसे ही आपके पास चला आया।" चरम सीमा पर पहुंची प्रफुल्लभाव धारा तनिक अस्थिर-सी हो गयी। जाहिर है भाईसाहब को उसका आना अच्छा नहीं लगा। क्यों ? उसकी समझ में नही आया।

"राजू इधर आओ !" राजू यथास्थान बैठा उसे देख रहा था।

"पहचान नहीं पाया।" भाभी ने कहा।

"क्यों बेटे भूल गये क्या ?"

"चाचाजी हैं राजू।" परन्तु राजू वही बैठा-बैठा पत्थर घिसता रहा।

"देखो राजू बिस्कुट।" बिस्कुट

का नाम सुनकर राजू उसकी गोद में बैठ गया।

"कितना दुबला हो गया है।"

"बुखार आ गया था बीच में।"

भाभी फटी कई जगह से छनी हुई बेरंगी साड़ी पहने हुए थीं। हाथों में चार-चार सस्ती चूड़ियां, कानों में सस्ते पीतल का बाला और गले में काला डोरा। भाईसाहब भी सूती शर्ट पहने थे। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि आखिर यह तब्दीली क्यों आ गयी है, व्यवहार में, रहन-सहन में, घर कीं चमक-दमक में और चेहरों में......।

"काम धधा कैसा चल रहा है?"

"ठीक ही है, कुछ सामान वगैरह खरीदना है।"

"खाना खा लो।" भाभी ने दोनों लोगों की बातों के बीच में कहा।"

"भूख तो भाभी बहुत जोर की लग रही है।"

"अभी हाल गरम-गरम खाना बना रही हूं।" भाभी ने कह तो दिया किन्तु दूसरे ही क्षण उनके चेहरे की रंगत उड़ गयी।

थोड़ी देर बाद अन्दर के कमरे से डिब्बों की भड़भड़ाहट होने लगी, अन्दर खुसुर-फुसुर हो रही थी, सामान रखने उठाने की वजह से उ बात स्पष्ट समझ में नहीं आई, फिर भी वह जो कुछ सुन रहा था वह अविश्वनीय, अकल्पनीय ही था बिकट था—भाभी धीरे-धीरे कह रही थीं—"दस रुपये मांग लो किसी से, दो वर्ष बाद तो आये हैं, क्या सोचेंगे वह भी? घी, नमक, मिर्च, सब्जी, चावल सभी तो चाहिए।" भाभी की चिंतित मुद्रा उसे परदे से धुंधली दिखाई पड़ी। भाईसाहब ने पलभर को होंठ दबाकर कुछ सोचा, फिर भाभी की पीठ थपथपाकर बोले—"तुम चिंता न करो सब हो जायेगा।"

उसके मन में आया कह दे खाना नहीं खाना है, शायद भाईसाहब उससे रुपये मांगे, इस स्थिति को बताएंगे। क्या भाईसाहब इतने तंग रहते हैं कि खाने तक को नहीं जुड़ता कुछ। उसकी आत्मा कुलबुलाने लगी इसी बात को लेकर।

थैला लेकर, चप्पल पहनकर, भाईसाहब बिना उसकी ओर देखे जल्दी से सीढ़ियाँ उतरते चले गये। चट-चट चप्पलों की आवाज उसको शब्दवद्ध होकर चुभ सी गयी...वह उठा..... सहसा सीढ़ियों की तरफ लपक कर उसने भाईसाहब...भाई-साहब आवाजें लगाई मगर तब तक भाईसाहब बहुत दूर साइकिल से जा चुके थे।

"भाभी भाईसाहब कहाँ गये?" उसने बड़ी शिष्टता से पूछा।

"यहीं तक सब्जी लेने।"

"अरे भाभी मुझे खाना, खाना थोड़ी है वैसे ही कह रहा था, आपतो सच्ची मान गयीं, अभी-अभी होटल से खाकर आ रहा हूं...।" वह निरा झूठ बोल रहा था।

"एकाध रोटी खा लेना, अभी बना रही हूं।" वह जानता है कि भाभी की बात मात्र औपचारिकता है। वह पुनः पलँग पर लेट गया। आस-पास कहीं से भी आवाज नहीं आ रही थी न शोर शराबा की, न किसी के रोने चिल्लाने की, न हँसने की..., सब ओर निस्तब्धता व्याप्त थी। वह घबरा सा उठा उस नीरवता में। पिछली बीती बातों का, लोपी स्मृतियों का, असंगत घटनाओं का एक चक्र सा उसके मस्तिष्क में चलने लगा......। वही मकान था, यही भाभी-भाईसाहब थे, तब कमरा एक-एक चीज क्रीम, पाउडर, इत्र तथा फलों की मिली-जुली खुशबू से महकता रहता था। दरिद्रता का नामों निशान न था; बिना दूध-घी के कोई न खाता था। भाईसाहब जिस दिन अनार या सेब न खा लेते उस दिन उनका पढ़ने में मन न लगता था। दो-दो किलो आम मुरब्बा से भरी बरनी, काजू, दालों से भरे डिब्बे..सब चीजें रक्खी.... भिनकती थी। तब वह होस्टल में रहा करता था शायद बी०एस०सी० फायनल का स्टूडेंट था। कभी-कभी घर से पैसे न आने पर दस पैसे का मक्का का भुट्टा खाकर दो गिलास पानी पीकर सो जाता। एक जोड़ा पैंट शर्ट में सालों बीत जाते थे। यदि भाईसाहब का कभी भूल से उसने पेन ले लिया होता तो किसी

न किसी तरह ले ही लेते थे। वह जानता है भाईसाहब के स्वभाव के बारे में, उनकी एक-एक आदत के बारे में, उनके समूचे व्यक्तित्व के बारे में।

उसे खूब अच्छी तरह याद है जब उसने दो दिन से भर पेट खाना नहीं खाया था तीसरे दिन भी जब घर से मनी आर्डर नहीं आया तब वह झख मारकर भाईसाहब के पास ही आया था—"भाईसाहब दस-पन्द्रह रुपये दे दो।"

"क्यों, किसलिये चाहिये ?"

क्या कहता वह।

"बाबू ने पता नहीं क्यों इसबार रुपये नहीं भेजे, हमने सोचा कल तक रुपये आ जायेंगे इसीलिये प्रैक्टिकल की किताब खरीद ली। एक पैसा नहीं बचा। आटा सब्जी वगैरह भी खतम हो गया है, मेस आजकल बंद है होस्टल के लड़कों ने हड़ताल कर रक्खी है।"

"जब रुपये आ जाते तभी तुम्हे खरीदनी चाहिए थीं किताबें।"

क्या कहता वह, झूठ भी बोलता तो क्या ? भाईसाहब का लम्बा चौड़ा भाषण सुनता रहा था।

"यहाँ से आटा ले जाओ और यह लो पाँच रुपये, ठीक है न जबतक घर से तुम्हारे लिये रुपये आ जायेंगे, तब तक खर्च आराम से चल जायेगा।" उसकी प्रतिक्रिया जाने बिना ही भाईसाहब ने अपनी बात पूरी कर लीं। वह निरुत्तर अपना सा मुँह लिये चला आया था जैसे बिना मां-बाप का बेटा हो। यदि भाईसाहब खुद कमाकर खिलायें तो पाँच रुपये से क्या होता है, साबुन, तेल, सब्जी इसी के लिए नहीं होंगे। होस्टल में आकर वह खूब रोया था। उसे कितनी सख्त जरूरत थी दस रुपये की। मगर भाईसाहब के कहने का ढंग इतना संदिग्ध, अशिष्ट एवं विरल था कि वह एक शब्द भी न कह सका था, अपनी बात का प्रयोजन भी न बता सका था।

उस दिन के बाद उसने कभी एक पैसा न लेने का दृढ़ सँकल्प कर लिया था। भाईसाहब इतने पराये हो गये हैं यहाँ आकर, उसके मन में भाईसाहब के प्रति अरुचि का भाव कठोर होता गया था।

ढेर सारी घृणा इस समय उसके मन में भर आयी। भाईसाहब का जिद्दी स्वभाव, हठी मन, किसी की बात नही मानता, न सुनता हैं वह अपने आपको सिद्धान्तवादी कहते है और दूसरों से भी कहलवाना चाहते हैं। वह जानता है कि भाईसाहब ने उसे आरम्भ से ही अवारा गुण्डा के रुप में देखा समझा है—वह सोचने लगा क्या माडर्न रहने से कोई अवारा हो जाता है छिः कितना जीर्ण विचार है यह। पर सच मायने में कभी भी उसने अपने आपको अवारा नहीं समझा। औरों से अधिक वह स्वयं से बारे में जानता है। भाईसाहब ही कितने गिरे हुए थे तब सिगरेट, जुआ शराब क्या नहीं करते थे वह। जितनी चरित्र को हीन बनाने वाली आदतें तथा प्रक्रियायें हुआ करती है सब उनके अन्दर थीं मगर....

वर्तमान दशा देखकर उसे भाईसाहब पर तरस आ गया, पिचका-सा चेहरा, धँसी सी आँखें साधारण से कपड़े...। जिन चप्पलों का प्रयोग घर में करते थे वही पहन कर बाजार गये हैं। वही भाभी जो गरूर गर्व से बात करती थीं। रोज-रोज नई साड़ियां सिवाय इसके कि आस-पास की औरतें जलें कुढ़ें—पहना करती थीं वर्तमान ही उनके लिये सत्य था सार्थक था सर्वोत्तम था।

इस समय भाभी उसके समक्ष एक थकी हुई मजदूरनी की भांति बैठी हुई थीं——परेशान खिन्न सी—इस तब्दोली में भाभी की काया देख कर उसे दया न आयी, अपितु वितृष्णा की भावना गहन गह्वर में उतरती चली गयी—। कितनी बातों की प्रतिक्रिया उसके मस्तिष्क में धमा चौकड़ी मचाने लगीं——।

भाईसाहब ने जितना मुझे रुलाया, ठेस पहुँचाई शायद किसी ने भी नहीं। रोज-रोज पिक्चर जाया करते थे——और मैं हरी मिर्च पर नमक छिड़क कर सूखी रोटी खाता था, खेती का सारा पैसा यही तो छीन लाते थे बहाने बनाकर। एक बार भाईसाहब स्वयं होस्टल में देख आये थे, नोटों से जब भरी थी उनकी——पर कठोर, निर्मम दिल वाले भाईसाहब का जरा भी मन न पसीजा कि चार-छः रुपये उसे ही देदें

शेष पृष्ठ १३ पर

कहानी

कब तक ?

—भगवतीप्रसाद द्विवेदी

प्लेटफार्म पर गाड़ी लगते ही डिब्बे में लोग खचाखच भरने लगते हैं। उतरने वाले बेचारे खिड़की पर खड़े, मुँह ताकते रह जाते हैं। कुछ मुँह में ही बुदबुदाने लगते हैं, 'यह कैसी शराफत है ? उतरने वाले डिब्बे में ही भरे रह और नीचे के लोग भी ठूसते जायं ? कैसा जमाना आ गया है !' डिब्बे में पहले से बैठे हुये यात्री इन नये लोगों की तरफ बड़े गौर से देखने लगते हैं। बेहद फटे हाल लोग लम्बी बड़ी-बडी मूँछों वाले काले बदरूप आदमी और तीन–चार छोटी बड़ी गन्दी गठरियाँ बगल में दबाये मैले चिथड़ों में लिपटी औरतें। ऐसा लगता है, जैसे सबके सब किसी उजड़े मुल्क से खदेड़े गये शरणार्थी हों। मेले से लौटकर आ रहे ये लोग ट्रेन का चप्पा-चप्पा अपने अधिकार में लेने के लिए उतावले-से दीख रहे हैं। सारा बदन पसीने से तर बतर हो गया है। पास खड़ी कुछेक औरतों के कपड़ों से एक अजीब सी दुर्गन्ध आने लगती है। दो-चार लोग रूमाल निकालकर नाक पर रख लेते हैं। डिब्बा शोरगुल से भर जाता है। मेरा दम घुटने लगता हैं। खिड़की की ओर जाने का दिल करता है, पर जा नहीं पाता। रूमाल से हवा झलने का निरर्थक प्रयास करने लगता हूं।

मेरी घड़ी वाला हाथ ऊपर उठता है। दिन के ग्यारह बज रहे हैं काफी भीड़ की वजह से बेहद गर्मी महसूस होने लगती है। सीटों पर इत्मीनान से बैठे लोगों को उतावली चिड़चिड़ाहट सी होने लगती है। सभी आँखे फाड़-फाड़कर उन आगन्तुकों की तरफ हसरत भरी नजरों से देखने लगते हैं। मेरे सामने बैठी एक बुढ़िया आँचल के कोने में गठियाए टिकट को निकालकर मुझे दिखलाती है, 'ई टिकटवा ठीक हइ न बाबू ?'

'हां, हां ····आज का ही है।' और स्टेशन का नाम बतलाकर उसे पकड़ाते हुए, अनिच्छा होते हुए भी उसकी तरफ देखता हूं। सिर्फ हड्डियों का ढांचा और सूखे बांस में लिपटे 'जामा-सा' डोलता शरीर !

तभी नेता-से दीखने वाले एक सज्जन मैले - कुचैले कपड़ों वाली उस लाचार बुढ़िया की तरफ आंखें गड़ाकर पूछ बैठते हैं, 'टिकट है तुम्हारे पास ?'

वह सहमी - सहमी निगाहों से उनकी ओर देखने लगती है और फिर सकपकाकर, बेन्च का ऊपरी छोर पकड़ कर खड़ी हो जाती है। मेरी निगाह अपनी गरम हथेली की ओर जाती है और अन्दाज लगाने की कोशिश करता हूं कि मेरे कितने झापड़ उनका मुंह तोड़ सकते हैं।

'साब, आपके पास तो पूरे कम्पार्टमेंट का टिकट है·········!' मेरे मुंह से अचानक फूटता है।

'बच्चा !' नेताजी खिसियानी, हंसी का फव्वारा छोड़ते हुए अपनी धर्मपत्नी के साथ आसन जमा देते है, 'लगता है, इस ट्रेन में अभी पहली बार चल रहे हो····· हूंह······अभी बताता हूं······!' उनकी खूंखार आंखों को देखकर मैं सकते में आ जाता हूं और हाथ जोड़कर उनसे माफी मांगता हूं।

गाड़ी चल पड़ती हैं। मैं डिब्बे में चारों तरफ देखने लगता हूं। तरह-तरह के शोरगुल सुनने को मिल रहे हैं। नेताजी का भाषण आरम्भ ह गया है। शुरुआत वाराणसी के दंगे और आन्ध्रप्रदेश के तूफान से होती है। मेरी नजरें उनकी एकदम अप-टू-डेट पत्नी पर जाकर टिकती हैं। आंखे हिरनी जैसी और लावण्य, माथे पर एक गोल लाली और बालों के बीच एक छोटी - सी लाल लकीर ! उनकी गोद में एक नन्हा बच्चा है, लगभग एक साल का। वह रो रहा है। वह बच्चे को कभी टाफी देती है तो कभी बिस्कुट, मगर वह मीज कर दूर जा फेंकता है। बार-बार वह उनके उभरे दोहरे पन को अपने होठों से

लगा लेता है, लेकिन वह चिढ़ जाती है और बुदबुदाने लगती है, 'बदतमीज! घर से दूध नहीं ली कि फट जायगा……ये टी स्टाल वाले भी तो नहीं दे रहे……कहते हैं, महज काम भर ही हैं…चल… घर आ गया…… ले लो बबलू……टाफी……बिस्कुट… वह देखो…कौवा. . .मामा…आ…'

मैं उनके ब्लाउज में बन्द उरोजों को देखता हूं और फिर बच्चे की रुलाई सुन कर आंखें बन्द कर लेता हूं। सोचता हूं, 'सृष्टि की रचना भी कैसी विलक्षण है ! 'मैमेरी ग्लैण्ड' से कितनी जैविक क्रियाओं के उपरान्त दूध बना होगा, जिसका इस बच्चे के लिए कोई उपयोग नहीं। तो फिर क्या आवश्यकता थी, इसकी रचना करने की ?' और मुझे सृष्टि-रचयिता पर ही अच्छा खासा क्रोध हो आता है। फिर मुझे स्मरण हो आता है—अपने ही एक पड़ोसिन की हालात् जिसने अपने बच्चे को दूध नहीं पिलाया। पतिदेव को एक बकरी रखनी पड़ी। उसका स्तन बढ़ने न पाये, कहीं 'लूज' न हो जाये ! साल भर बाद पड़ोसिन बीमार पड़ी। सीने में दर्द उभरने लगा, स्तन में घाव हो हो गया। हास्पिटल में दाखिल हुई तो डाक्टर ने बताया—स्तन काटना पड़ेगा। और यही हुआ। एक स्तन वाली वह कितनी बदरूप लग रही थी।

मैं आँखें खोल देता हूं। एकाएक उन पर आँखें फिर टिक जाती हैं। बच्चा अब भी रिरिया रहा है। एक दूसरी औरत कहती है, 'पिला दो ना बहन जी !'

'छिः ! मैं तुम्हारी जैसी गंवार औरत थोड़ी ही हूं !' वह नाक-भौं सिकोड़ती हैं। बच्चे की रुलाई बढ़ती ही जाती है। कुछेक लोग ऊबकर कहते हैं, 'शायद गरमी की वजह से रो रहा है। खिड़की की तरफ बढ़ा दीजिए न ?

एक अधेड़ व्यक्ति बच्चे को उनकी गोद से लेकर खिड़की के पास खड़ी मटमैले चिथड़े में लिपटी सुखिया की ओर बढ़ा देता है। बच्चा उसके नंगे स्तन को पीने लगता है—'चुट-चुट' और चुप हो जाता है। बच्चे की मां यह सब देखते ही उठ खड़ी होती है और एक भूखी शेरनी सी बच्चे को उससे झपट लेती है। बुदबुदाती हुई वह सीट पर पुनः आ बैठती है, 'नीच……कमीनी ……शर्म नहीं आती ……।' बच्चे की चिल्लाहट तेज हो जाती है। सुखिया की आँखे भीग जाती हैं। वह रुक-रुक कर सिसकती है। उसका भी एक पोता है। पतोहू दुनियां में नहीं है। उसी की छाती चाटता है वह और इसी से उसकी छाती में बुढ़ापे में भी दूध आ गया है।

नेताजी का भाषण 'जाति तोड़ो' और 'अन्तर्जातीय विवाह' से होकर 'समाजवाद' पर पहुंच चुका है। वह पहले इसे परिभाषित करते हैं, 'समाजवाद' यानी गरीबी और अमीरी के बीच लेशमात्र भी दूरी नहीं……न कोई भिखमंगा………न ही कोई पूंजीपति…।'

मैं अपनी आंखे फिर बन्द कर लेता हूं। बन्द आंखों के सम्मुख कोई मुट्ठी में 'समाजवाद' जैसी कोई चीज लिये आ रहा दिखाई देता है। मैं चिढ़ जाता हूं, यह सोंचकर कि वह कमबख्त समाजवाद जैसी चीज लेकर कब तक आयेगा….? हमें कब तक प्रतीक्षा करनी होगी……? आखिर कब तक……?

कर्तव्य बोध

—शिवकुमार गुप्त

मैं जलता रहूंगा,
सड़क किनारे खड़े खंभे पर
'राड' की तरह।
चहल पहल थमने पर
सड़क सुनसान हो जायेगी।
अंधकार मुझे छलने की
कोशिश करेगा।
मौत के साये में
जिंदगी को महसूस
करता हुआ
मैं हर राही को
रास्ते की पहचान
कराता रहूंगा।
शहर की खामोशी में
अपने अन्तर का किंचित
कोलाहल भर कर
मैं कर्तव्य बोध पाता रहूंगा।

उत्तर प्रदेश राज्य विद्युत परिषद्

प्रदेश में विद्युत उत्पादन, पारेषण व वितरण योजनाओं
के
तीव्र गति से क्रियान्वयन की ओर सतत प्रयत्नशील है

पनकी ताप विद्युतगृह	४०० के० वी० प्रणाली	जनता सर्विस कनेक्शन
११० मेगावॉट के टर्बो-जेनरेटर सेट का पनकी में २६ अक्टूबर, १६७८ को उद्‌घाटन	देश की प्रथम ४०० के० वी० प्रणाली व ४०० के० वी० उप-विद्युतगृहों का निर्माण	राज्य विद्युत परिषद् द्वारा कमजोर वर्ग के लोगों को विद्युत उप-लब्ध कराने की अनूठी योजना का प्रारम्भ।

हम निम्न प्रकार से जनता की सेवा कर रहे हैं

	उपलब्धियाँ		
	१-४-१९६६ को	३१-१२-१९७६ को	प्रतिशत वृद्धि
अधिष्ठापित क्षमता (मेगावाट)	९१०	२४७५	१६८%
पारेषण एवं वितरण लाइनें (सर्किट कि.मी.)	५५,७७४	२,१४,८२६	२८७%
ग्रामीण बस्तियों का विद्युतीकरण	५,५५५	३२,४८४	४८४%
हरिजन बस्तियों का विद्युतीकरण	—	८३५९	—
निजी नलकूप/पम्पसेटों का विद्युती करण	९,२८३	२४९८८३	२५९१%
राजकीय नलकूपों का विद्युतीकरण	५,८३६	१४००१	१४०%
उपभोक्ताओं की संख्या	३,७७,०३७	१६,७१,२०२	३४३%
सम्पत्ति (करोड़ रुपयों में)	२५५	१२४८.५६	३८९%

उत्तर प्रदेश राज्य विद्युत परिषद् 'शक्तिभवन', लखनऊ द्वारा निर्गत

दल बदल की राजनीति

—चतुर्भुज मिश्र

देश की राजनीति के दलबदल नेताओं को छोड़ सभी राजनीतिक पार्टियों के लिए संकट की घड़ी आयी है और इस सब दलबदल की राजनीति के पीछे सिर्फ एक ही किस्सा है कुर्सी का। चाहे कुर्सी अल्पकाल के लिए ही मिली हो लेकिन उसी अल्पकाल में राजनीतिक नेताओं ने अपने वित्तीय स्थिति मजबूत कर छोड़ा देश का भले इससे बेड़ा गरक क्यों न हुआ हो।

जनता पार्टी के नेताओं का विचार है कि पिछले तीस वर्षों में देश की अर्थव्यवस्था चौपट हो गई है। लेकिन इस दौरान सत्तारूढ़ पार्टी के नेताओं की अर्थव्यवस्था में वगैर पूंजी निवेश के हजारों गुनी प्रगति है उस विचारधारा का अब जनता पार्टी के कुछ मंत्रियों ने विरोध किया है और तर्क उपस्थित किया है कि तीस वर्षों में देश की अर्थव्यवस्था चौपट नहीं हुई है बल्कि मजबूत हुई है लेकिन आपातकाल के दौरान अर्थव्यवस्था नहीं सुधरी है।

राजनीति तथा आर्थिक नीति दोनों आपस में इतने मधुर संबंध रखती हैं कि आर्थिक नीति को राजनीति से भले अलग किया जा सकता है। लेकिन राजनीति से आर्थिक नीति अलग नहीं हो सकती और जिस दिन इन दोनों नीतियों का विभाजन हो जायेगा दलबदल की नीति की हृदयगति रुक जायेगी और राजनीति स्वच्छ हो जायेगी। लेकिन क्या कभी ऐसा हो सकेगा?

पिछले तीस वर्षों में सत्तारूढ़ पार्टी के प्रथम दो प्रधान मंत्रियों के कार्यकाल में दलबदल की नीति अधिक महत्वपूर्ण नहीं थी प्रधानमंत्री का व्यक्तित्व इतना बड़ा था कि समस्यायें आप ही छोटी हो जाती थी। जबकि दूसरे प्रधानमंत्री के कार्यकाल से समस्यायें अधिक बड़ी दिखलाई पड़ती थी। यह सिलसिला सिर्फ १८ महीने तक किसी प्रकार लड़खड़ाता रहा लेकिन १९६५ के भारत पाकिस्तान युद्ध के साथ ही दूसरे प्रधानमंत्री लालबहादुर शास्त्री का भी व्यक्तित्व निखरा लेकिन वह भी अल्पकाल के लिए।

भारत की राजनीति में जटिलता तथा कुटिलता का शिलान्यास भूतपूर्व प्रधानमंत्री इन्दिरागांधी ने किया और ११ वर्षों के कार्यकाल में सम्भवतः विश्व के किसी भी देश में राजनीतिक हलचल नहीं होगी जितनी इस देश में हुई। राजनीति स्वच्छ होनी चाहिए। सिद्धांत रूप में तो सभी इसका समसमर्थन करते हैं लेकिन व्यवहारिकता सिद्धांत को तिलांजलि देने पर मजबूर करती है और इससे परस्पर अविश्वास का वातावरण तैयार होता है। १९६९ में कांग्रेस का विभाजन नहीं हुआ था बल्कि सिर्फ एक नेता के स्वार्थ ने एक पार्टी का विभाजन कराया और इसमें दलबदल की नीति का सहारा लिया गया। भूतपूर्व प्रधान मन्त्री थी, जिन्होंने दलबदल की राजनीति को प्रोत्साहन दिया।

जनसाधारण इस बात की आशा करता है कि इतिहास अतीत का दस्तावेज होता है। इसे राजनीति का अध्ययन करना चाहिए। लेकिन आश्चर्य तब होता है जब अतीत का सम्बंध वर्तमान से जोड़ा जाता है लेकिन फिर भी राजनीतिज्ञों को उछाल नहीं आती क्योंकि इसके साथ 'किस्सा कुर्सी का' जो जुड़ा है इस लालच के इन्द्रजाल से कौन निकलना चाहेगा।

अगर कोई नेता यह कहता है कि दल का त्याग इसलिए कर रहा है कि उस दल में स्वच्छ वातावरण नहीं है तो क्या विश्वास योग्य तर्क है। श्रीमती इन्दिरा गांधी के कार्यकाल में राज्यों में संयुक्त विधायक दलों की सरकारें बनी तथा टूटीं। इसके पीछे सिर्फ कुर्सी का लालच था और कुछ नहीं।

उत्तर प्रदेश, बिहार, हरियाणा, पंजाब, पश्चिम बंगाल तथा उड़ीसा में एक ऐसा भी अवसर आया था जब विधान सभा में मंत्रियों के आलावा कोई नहीं दिखलाई पड़ता था। विधा

कयों में सिफ भूतपूव मंत्रियों को ही देखा जाता था।

श्रीमती इन्दिरा गांधीनेजब कांग्रेस पार्टी को त्याग कर दलबदल के साथ नई कांग्रेस की स्थापना की तो दो वर्षों तक अल्पमत की सरकार की प्रधान मन्त्री बनी रहीं। भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के समर्थन से ही श्रीमती गाँधी की सरकार सत्ता में बनी रह सकी। हालांकि विरोधी दलों में आपसी सहयोग होता तो सम्भवतः इन्दिरा गांधी की सरकार एक दिन नहीं टिक सकती थी।

विरोधी दलों में एक मत नहीं हो सका क्यों कि मोरार जी भाई के अक्खड़पन से सभी परिचित थे, जगजीवन बाबू श्रीमती गांधी का समथन करते थे, लोक नायक जय प्रकाश नारायण अपने सर्वोदय की राजनीति में मस्त थे और अपने को सक्रिय राजनीति से अलग रहने की घोषणा भी कर चुके थे।

दल—बदल विरोधी भावना विरोधी दलों में १९६९ में ही जाग्रत हो गयी थी लेकिन आया राम, गया राम की राजनीति में स्वाद मिलता था उसे जल्द भुलाने के लिए कोई तैयार नहीं था और वास्तव में सत्ता रूढ़ पार्टी कभी भी दल—बदल की नीति का विरोध नहीं करती है क्योंकि इसमें सबसे अधिक स्वार्थ भी सत्तारूढ़ पार्टी का ही होता है।

जनता पार्टी की सरकार के आने के बाद यह धारणा पैदा होने लगी थी कि दलबदल के दिन अब लद गए क्योंकि जनता पार्टी ने पिछले लोक सभा के चुनाव में यह आश्वासन दिया था किदलबदल की नीति को प्रोत्साहन तथा संरक्षण नहीं देगी लेकिन नौ महीने हो गये और अभी तक दल बदलुओं को प्रोत्साहन तथा सरक्षण देती जा रही है।

देश की राजनीति में सबसे बड़ा दुर्भाग्य है कि दल बदल की नीति को अहमियत दी जा रही है और सत्तारूढ़ पार्टी संरक्षण देती है।

श्रीमती गांधी ने तो दल बदल विरोधी विधेयक को संसद में पेश करने हेतु कभी चिंता व्यक्त नहीं की लेकिन प्रधान मन्त्री श्री मोरार जी देसाई अवश्य चिंता व्यक्त कर चुके हैं, और वहीं जनता पार्टी की सरकार में वरिष्ठ नेताओं तथा मंत्रियों ने अभी भी दलबदल की नीति का मोह नहीं छोड़ा है, अगर जनता पार्टी के अस्तित्व की ओर झाँके तो सिर्फ दलबदल की नीति ही दिखलाई पड़ती है।

रक्षा मन्त्री श्री जगजीवन राम पेट्रोलियम मन्त्री हेमवती नंदन बहुगुणा वाणिज्य मन्त्री मोहन धारिया तथा जनता पार्टी अध्यक्ष चन्द्रशेखर हाल की दल बदल नीति के प्रत्यक्ष प्रमाण हैं गृहमन्त्री चौधरी चरणसिंह की राजनीति की बुनियाद भी दल बदल पर ही टिकी है। फिर कैसे कोई उम्मीद कर सकता है कि जनता पार्टी दल बदल की नीति का विरोध करेगी, इस पार्टी में तो इसके हिमायती ही भरे पड़े हैं।

कांग्रेस पार्टी से त्याग पत्र देने के बाद रक्षा मन्त्री श्री जगजीवनराम तथा उनके सहयोगियों ने कहा था कि वे सब के सब कुर्सी छोड़कर आए हैं, कुर्सी के लिए नहीं। यह नारा जन साधारण का मन बहलाने के लिए ठीक था लेकिन चुनावों के तुरंत बाद प्रधान मंत्री को गद्दी के लिए जो हाय तोबा मची उसे कौन भुला सकता है। जब तक स्वार्थ की राजनीति रहेगी तब तक राजनीतिक जीवन में स्वच्छता स्वप्न के समान ही बनी रहेगी।

विगत सरकार की प्रधान मंत्री तथा मंत्रियों ने अपने सगे संबन्धियों को लाभ कराया, श्रीमती गांधी के पुत्र संजय गांधी ने दोनों ही हाथों से धन बटोरा और राजनीति को कलुष तथा विषाक्त कर दिया मंत्रियों के संबंधियों ने भी किसी ठेका दिलाकर तो किसी को ऊंचे स्थान पर नौकरी दिलवाकर किसी न किसी रूप में कुर्सी का उपयोग किया।

श्रीमती गांधी के कार्यकाल में कश्मीरियों की खोज की जाती थी और कोई भी ऊंचा पद पहले कश्मीरी को और बाद में किसी और मंत्री के निकटतम सम्बन्धी को दिया जाता था। जनता पार्टी की सरकार बनने से इस राजनीति में कोई परिवर्तन नहीं हुआ योजना के उपाध्यक्ष पद हो या बीमा निगम के अध्यक्ष की पुनर्नियुक्त कुल मिला—

कर यही दिखा कि अपनेपन की राजनीति का सहारा नहीं छोड़ा गया।

श्रीमती गाँधी के कार्यकाल में योजना आयोग उत्तर प्रदेश के विकास का कार्यक्रम तैयार करता था अब गुजरात के विकास का कार्यक्रम तैयार कर रहा है।

गृहमन्त्री स्वयं ईमानदार तथा सच्चे राजनीतिज्ञ हैं। लेकिन उनके एक रिश्तेदार की भी उत्तर प्रदेश हाउसिंग बोर्ड के अध्यक्ष के रूप में नियुक्ति की गई है यह और बात है कि वह साहब कुशल प्रशासक हैं। हां पहले जरूर कम्युनिष्ट पार्टी के नेता थे अब अगर जन साधारण में चौधरी साहब ढ़िंढ़ोरा पीट कर कहें कि उन्होंने उन्हें इस पद पर नियुक्त नही किया है तो कोई इस बात को क्या मानेगा? अब तक पुलिस के एक वरिष्ठ अधिकारी एस० पी० सिंह की विदेश में आर० ए० डब्लू० की ओर से कहीं नियुक्ति नहीं की गई थी लेकिन अब उनकी नियुक्ति जिनेवा में की गई है। पहले एक कश्मीरी पुलिस अधिकारी को नियुक्त किया गया था।

दल बदल तथा भ्रष्टाचार का आपस में निकट का सम्बन्ध है। दोनों ही देश की राजनीति से नहीं निकाले जा सकते। मोरार जी भाई या चौधरी चरण सिंह कुतुब मीनार की ऊपरी मंजिल से ही क्यों न चिल्ला—चिल्ला कर जन साधारण को आश्वासन देने की कोशिश करें लेकिन आज के राजनीतिक संदर्भ में कोई उन पर विश्वास नहीं कर सकता।

अभी हाल में विरोधी दलों के नेताओं से बातचीत करते हुए प्रधान मंत्री ने कहा कि दल बदल विरोधी विधेयक संसद के वर्तमान सत्र में पेश नहीं किया जायगा जबकि विरोध के नेता यशवन्त राव चह्वांण इस विधे-को पारित कराने के लिए अपनी पार्टी का सहयोग देने का आश्वासन दे चुके थे, लेकिन प्रधान मन्त्री की इस घोषणा से विरोधी दलों के नेताओं को ही नहीं देश के सभी लोगों को जनता पार्टी की राजनीति में अब संदेह होने लगा है।

प्रधान मंत्री की इस घोषणा के संदर्भ में संसद में निर्दलीय लोक सभा सदस्य पुरुषोत्तम गणेश मावलंकरने बड़े आश्चर्य के साथ प्रधान मंत्री की आलोचना की और कहा कि गुजरात के भूतपूर्व मुख्य मंत्री चिमनभाई पटेल को जनता पार्टी में शामिल कर प्रधान मंत्री ने जन साधारण को जनता पार्टी के संबंध में अपनी नई धारणा बनाने को विवश कर दिया है। दल-बदल नेताओं को कहा जाता है कि उन्हें कोई कुर्सी नहीं मिलेगी, लेकिन इन नेताओं की तिकड़म इतनी तगड़ी होती है कि कुर्सी आप ही उनके सामने पांच वर्ष की अवधि समाप्त होनेके पहले खिसक कर आ जाती है। भला इस प्रलोभन की राजनीति को कौन नासमझ त्याग देगा।

जनता पार्टी के सामने राज्य सभा में बहुमत होने की विवशता है। १९८० के पूर्व राज्य सभा में जनता पार्टी को बहुमत मिलना भी मुश्किल है और संभवतः इसी प्रलोभन के कारण दल-बदल नेताओं के राजनीतिक व्यापार को जनता पार्टी भी लाइसेंस देती रहेगी जब तक कि राजनीतिक स्वार्थ की पूर्ति नहीं हो जाती।

मित्र के नाम

—मुस्तफा जैदी

तीन पत्र, तीन उत्तर
उत्तर न देने कारण?
कहते है 'खामोशी सोना है।'
पर हमेशा ऐसा नहीं होता
यह प्रत्यक्ष है
खामोशी क्रोध है,
खामोशी उपेक्षा है,
खामोशी मृत्यु है,
पर खामोशी सोना नहीं है
खामोशी कुछ और भी है
और वह है 'टालने की आदत'
तुम मुझको जानते हो,
और इसी विश्वास पर मैं
केवल इतना इंगित करता हूं
जानलो मेरी खामोशी क्या है?

(पृष्ठ ९ का शेष)

कैसे संबंध हो गये थे कटु···कटे हुए। जब उसने भाईसाहब की प्रवचनादायक बातें मां को बताई थी तो मां रोने लगी थी 'भगवान कभी अपने को भी कुछ देगा, सबके दिन एक-से नहीं रहते हैं, उन्हें इस घर की स्थिति से क्या लेना-देना है, इतना तो एक दोस्त ही ख्याल रखता है······।' कितनी बार वह इन्हीं वैमनस्यपूर्ण निस्प्रयोजन बातों को लेकर रोया था दुखी हुआ था, चिढ़ा हुआ था, कभी शक्ल न दिखाने, देखने की घोर प्रतिज्ञा करता था······इतने पर भी उसके भावुक, नेक ··· मन ने सरल व्यवहार ने भाई साहब का निरादर नहीं किया, अपनी तरह आघात नहीं पहुंचाया, संदिग्ध निरर्थक बातें नहीं की।

समय निकलता गया। एक दिन वह भी आया जबकि तमाम खुशियां आ गई थीं। उसके बाद भी लगातार भाई साहब के प्रति उसका आदर बना रहा बावजूद इसके कि एक बार उस पर एक बेहूदा इल्जाम लगाया गया था। बात कुछ ऐसी थी रात में सब लोग कमरे में सोये हुए थे उसे नहीं पता कि कब सोते में उसका हाथ भाभी के पेट से टच हो गया था। भाभी ने गुस्से में उसे इतनी बुरी तरह झकझोर दिया कि उसके होश ही फाख्ता हो गये। 'शर्म नहीं आती तुमको।' भाभी ने चिल्लाकर कहा था।

'क्या हुआ? भाईसाहब नींद में ही बड़बड़ाये। 'बेहोश सोते हैं ये।' और भाई साहब ने उससे कहा था। 'सुरेश चले जाओ यहां से, शर्म नहीं आती है तुम्हें, तुम गुण्डे हो, नीच हो अपनी भाभी पर भी हाथ उठाने लगे नीच·····हरामी।' भाई साहब ने अश्लील गालियां उसे दी। 'भाई साहब' अवाक् था वह।

'मैं कहता हूं मेरी आंखों से दूर चले जाओ।' भाई साहब बिगड़ पड़े गुस्से से।

'आखिर मुझसे गल्ती क्या हुई?' अचम्भे से पूछा उसने।

'गल्ती करके कारण पूछ रहे हो।'

'कसम से भाई साहब... मुझे कुछ भी पता नहीं है' अबकी बार उसने दृढ़ता से कहा।

'बनते हो, सफाई देते हो?' भाई साहब ने भी रुखाई से कहा फिर अपनी गलत फहमी और गुस्सा के आगे भाई साहब ने उसकी एक न सुनी थी, उस रात वह इतना थका था कि बयान नहीं किया जा सकता है। शायद आठ सौ मीटर की रेस में भाग लिया था उसने। उस दिन हास्टल में अपने रूम में एकाकी पड़ा भूखा प्यासा रोता रहा था।

क्या अतीत को लेकर वह वर्तमान में भी घुटे, अपने सम्बन्धों को तोड़े रहे। भूल जाओ अतीत को, भुला दो उन बेसिरपैर की बातों को जिनमें कोई सार नहीं है अर्थ नहीं है। उसने एक ही झटके से अतीत को हटाने की कोशिश की। छोड़ो भी मूड आफ करने वाली बातें हैं ये आखिर है तो बड़े ही भय्या, उसके हृदय में प्यार अपनत्व की भावना ने उस घृणा को उस विरक्ति को उसी तरह छिन्न विकीर्ण कर दिया जैसे सघन तिमिर की कालिमा में जुगनू की क्षणिक चमक भी उद्दीप्त होकर कालिमा को तरंग की भांति काट देती हैं।

शेष अगले अंक में

अभाग्य

प्रमोद सिनहा

मैंने अब तक केवल
सूर्य को अस्त होते ही देखा है।
और सोचता हूं
सूर्य का उगना भी
ऐसा ही होता होगा।
जाने के लिए आना
आने के लिए जाना
क्या अन्तर है आने जाने में
सूर्योदय के तुरन्त बाद
मैं अपने को भूल जाता हूं
सूर्यास्त देखकर
अपने को देखता हूं
और अस्तित्व की
आँख मिचौनी में
अपने पर हंसी आती है।
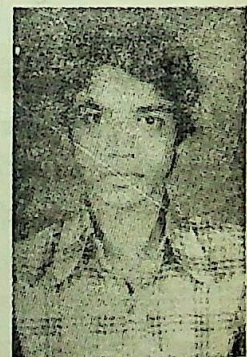
कवि

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान

के

हिन्दी समिति, हिन्दी ग्रंथ अकादमी एवं पत्रकारिता प्रभाग

के

प्रकाशन

१—धर्म शास्त्र का इतिहास (पाँच भाग)	९२-००
२—वेदों में भारतीय संस्कृति	१०-००
३—भारतीय दर्शन	८-००
४—संस्कृति का दार्शनिक विवेचन	१२-००
५—भारतीय संस्कृति	४-००
६—वेदत्रयी परिचय	५-००
७—प्रमुख स्मृतियों का अध्ययन	६-५०
८—तांत्रिक साहित्य	३०-००
९—भारतीय नीति शास्त्र का इतिहास	२०-००
१०—हलायुध कोष	२५-००
११—वेदान्त दर्शन	१२-००
१२—ब्रह्म सूत्र शंकर भाष्य	६-००
१३—तर्क संग्रह दीपिका	१२-५०
१४—सिंधु सभ्यता	१५-००
१५—भारत का स्वर्णयुग	१६-००
१६—भारतीय संस्कृति और कला	१७-५०
१७—भारतीय पुरैतिहासिक पुरातत्व	१५-००
१८—संस्कृत व्याकरण भाग—१ व २	३०-००
१९—भारतीय समीक्षा	१७-००
२०—सौंदर्य का तात्पर्य	६-००

इनके अतिरिक्त ४५० स्तरीय ग्रंथों के सूची पत्र हेतु संपर्क करें :—

निदेशक
उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान
हिन्दी भवन, महात्मा गांधी मार्ग,
लखनऊ—२२६००१

पाठकों के पत्र

युवा रश्मि मिली। इसे मैंने अकेले नहीं कई मित्रों के साथ पढ़ा। आज की प्रकाशन प्रियता की आपा धापी में युवकों और ख़ासकर उन युवकों के लिए तो अवसर की बेहद कमी हो जाती है। सच पूछिये तो उनका दुर्भाग्य ही रहता है कि वे महा नगरों से निकलने वाली पत्रि—काओं तक कैसे पहुंचे? युवा रश्मि से मुझे और मेरे साथियों को बड़ी उम्मीदें हैं।

—सीताराम सोनी-सेन्धवा

युवा रश्मि का अक्तूबर अंक मिला। नये लेखकों की रचना छा-पना तमाम संपादक एक जोखिम का काम समझते हैं। हमारे तमाम दो-स्तों ने युवा रश्मि से अपने को जोडने के लिए उत्सुकता दिखाई है। सपना कहानी बेहद अच्छी लगी। उर्मिला गोस्वामी की परिचर्चा तथा उनकी कहानियों में आम आदमी के जीवन का सजीव चित्र दिखाई पड़ता है।

मेरी शुभ कामनाएं

—अशोकआर्य-बेगूसराय

युवा रश्मि का अक्तूबर अंक देखा। आज जब साहित्य के क्षेत्र में साधन सम्पन्न और स्थापित साहित्य कारों की कृपा (?) से युवा पीढ़ी की सृजनात्मक क्षमता या तो असमय कुंठित हो जाती है या पिछलग्गूपन स्वीकार करके ही आगे बढ़ पाती है। तब युवा रश्मि द्वारा उसे स्वतन्त्र विकास क्षेत्र प्रदान करने का आपका प्रयत्न सराहनीय है। एक समान धर्मी के नाते कुछ सुझाव देना चाहता हूं। रचनाओं के चयन में आप और अधिक सावधानी और सुक्ष्म दृष्टि का परिचय देकर यदि यह सिद्ध कर सकें कि नई पीढ़ी अपनी रचनात्मक क्षमता में पुरानी पीढ़ी से किसी प्रकार कम नहीं है तो अधिक अच्छा हो। अक्टूबर अंक में गंगा प्रसाद राजौरा की 'डूबती आवाज' अतिउत्कृष्ट और जन सामा-न्य की पीड़ा को पूरी इमानदारी और संवेदन शीलता के साथ चित्रित करती है। ऐसी कहानियां अधिक आ सकें तो पत्रिका और अधिक श्रेष्ठ बन सकेगी। प्रत्येक अंक में रचनाओं के अनुपात पर अवश्य ध्यान दें, कहानी, कविता गद्यगीत, संस्मरण, लेख आदि सभी हो तो पत्रिका अधिकपूर्ण और श्रेष्ठ बन सकेगी। हर अंक में वरिष्ट साहित्यकारों की कुछ रचनाएं अव-श्य दें।

—(प्रो) रामसनेही लाल शर्मा

फीरोजाबाद

युवा रश्मिका एक अंक हमेंदेखने को मिला। उसमें प्रकाशित रचनाओं को देखकर मेरा काफी उत्साह बढ़ा। जब कभी भावों की तीव्रता होती है कविता बन जाती है, ऐसी ही एक रचना भेज रही हूं।

—वि० रा० स्वाती,

लहेरिया सराय

युवा रश्मि में प्रकाशित कहानी 'रेत तत्काल पढ़ गया, अच्छी लगी। इसमें भोपाल के ताजा जीवन अव—लोकन की झलक व्यक्त हो गई है। गिट्टी ढोती अबोध वसंती विवशता और निरुपायता के चक्रव्यूह में फंस-कर घुट कर रह गयी, उसकी पढ़ने की कामना भी घुट गई। एक कुंठित अवश वसंती रेत के कणों की भांति अन्दर ही अन्दर बिखर गयी है।

कहानी में स्थिति का सही चित्र तो उभरा है परन्तु साहित्य क्या मात्र फोटोग्राफी है? जिन्दगी में जैसा कुछ है उसका ठींक वैसा ही चित्र उतार देना ही क्या आज के युवा लेखक को अभीष्ट है या फिर उसे किसी सुखद संभावना के प्रति कोई इशारा भी करना चाहिये! आज़ वसंती जैसे सैकड़ों पुष्प कुम्हलाने के लिए विवश हैं परन्तु साहित्यकार का दायित्व क्या है?—वर्तमान से परे या आगे देखने की उसकी क्षमता कहां गई?

आज समाज में जो बेकसी बेजारी है क्या इसको तोड़ना युवा लेखक का काम नहीं।

वसंती में क्या १० पैसे प्रति दिन अल्प वचत जैसे खाते में बचाते

शेष पृष्ठ२० पर

इस शीत ऋतु में उत्तर प्रदेश चलें नवीन अनुभवों की खोज करें

इस शीत ऋतु में अनगिनत अनुभवों का संदेश। जो हा। ये है उत्तर प्रदेश। रंग बिरंगे मेलों और त्योहारों को सुगंध से भरी धरती। उत्कृष्ट स्मारकों की स्मृतियों का एक शानदार अतीत। जहां के मौन मंदिरों को घंटियां आपको पूजा के लिए प्रेरित कर रही हैं। जहां के शांत पर्वतों, निरभ्र झीलों और हरियाली से भरपूर जंगलों की छटा आपको सम्मोहित कर देती है।

ऐसा है यह उत्तर प्रदेश; सौंदर्य और उल्लास से भरी धरती। उत्तर प्रदेश सुरम्य पर्यटन स्थलों का भंडार है। जहां एक बार जाने का अनुभव आपको बार बार देखने के लिए प्रेरित करेगा। यहां है मथुरा भगवान कृष्ण की जन्म भूमि। वृन्दावन कृष्ण की तरुणाई का स्थल। संसार के सातवें आश्चर्य

ताजमहल को लिए हुए आगरा। जहां की वास्तुशिल्प की कला से आप अभिभूत हो उठेंगे। यहीं है लालकिला और संगमरमर का बना प्रभावशाली मकबरा एतमातुद्दौला। सिकन्दरा, चित्रकूट और अयोध्या भी इसी प्रदेश की धरोहर है।

और हां, आगरा से कुछ ही दूरी पर है अतीत का शहर फतेहपुर सीकरी। किसी जमाने में यह लड़ाके मुगलों की राजधानी थी। पूर्व में है उद्यानों का शहर लखनऊ और कई ऐसे अनगिनत स्थान हैं जहां पुरानी परम्पराओं की भव्यता आज भी मौजूद है। यह है पावन गंगा, यमुना और सरस्वती के संगम पर स्थित प्रसिद्ध तीर्थ इलाहाबाद जो अपनी पवित्रता के लिए विख्यात है। हिन्दुओं के सबसे पावन तीर्थस्थल वाराणसी की ओर गंगा बह चली है। पवित्र घंटियों और प्रार्थना स्वरों की गूंज के बीच असंख्य फूलों की सुगंध के मध्य तथा पवित्र जल में डुबकी लगाते हुए लाखों तीर्थ यात्रियों को देखते हुए आप स्वयं को हिन्दू धर्म के रहस्यवाद से अभिभूत पायेंगे।

बौद्ध धर्म के जन्म स्थल सारनाथ में यही भव्यता आपको फिर देखने को मिलती है। यहीं भगवान बुद्ध ने लगभग २५०० वर्ष पूर्व विश्व के नाम अपना पहला धर्मोपदेश दिया था। बौद्ध धर्म के अन्य केन्द्रों में है पिपरहवा जो भारतीय पुरातत्ववेत्ताओं की नवीनतम खोज है। कहा जाता है कि भगवान बुद्ध ने संन्यास ग्रहण करने से पहले ६ वर्ष यहीं बिताए थे।

सांकास्या में उन्होंने अपने समय के कुछ महानतम चमत्कार दिखाए। श्रावस्ती में उन्होंने अपने जीवन के चौबीस वर्ष बिताए। यही है प्रमुख बौद्ध तीर्थ स्थल कुशीनगर जहां इस अमर विभूति ने परिनिर्वाण प्राप्त किया। इन स्थानों की यात्रा करने पर आप बौद्ध धर्म के रहस्यों का अनुभव कर सकते हैं।
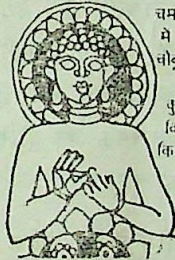
उत्तर की ओर है हिमालय। यहां ऐसे पहाड़ी पर्यटन स्थल हैं जिनकी गिनती भारत के खूबसूरत पहाड़ी स्थलों में की जाती है और आप यहां रह कर आनंद पा सकते हैं। यहीं पायेंगे आप पहाड़ों से घिरी और

आकाश को छूती हुई झीलें। चीड़-वनों की सुगंध से सरोबार रानीखेत। सफेद मुलायम रुई से आच्छादित हिमालय की चोटियां। पर्वतों की रानी मंसूरी–एक उत्कृष्ट ग्रीष्मकालीन सैरगाह। आकाश को छूती ऊंचाई। इससे भी उत्तर में गहन शान्ति में डूबे हिन्दू मंदिर और तीर्थस्थल, ऋषिकेश, हरिद्वार।
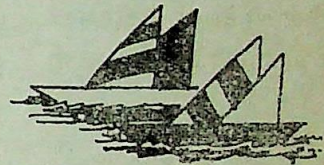
पहाड़ों से उतर कर हैं तराई के घने जंगल और यहीं नैनीताल से कुछ दूरी पर है शेरों का प्रदेश—कोरबेट नेशनल पार्क। जहां आप जंगली हाथियों और हिरनों का झुण्ड देख सकते हैं। गरजते हुए शेर से भेंट वार्ता का भी इंतजाम है पर यह शेर महोदय के

मूड पर निर्भर है। पेड़ पर लपकते हुए तेंदुवे से मुलाकात की भी काफी संभावना है यहां। रंगबिरंगी चिड़ियों के अद्भुत दृश्य-जो आपको मुग्ध कर देंगे।

उत्तर प्रदेश

सौंदर्य और
उल्लास से भरी धरती

विस्तृत जानकारी के लिए कृपया हमारे निम्न पर्यटन कार्यालयों से संपर्क करें।

हरिद्वार, इलाहाबाद, सारनाथ, अयोध्या, ऋषिकेश, देवप्रयाग, श्रीनगर, आगरा वाराणसी और दिल्ली

उत्तर प्रदेश पर्यटन
विधान सभा मार्ग, लखनऊ-२२६००१

IMPACT-UPT. 101 HIN

समाचार

इन्स्टीट्यूट आफ यौगिक थेरेपी एन्ड कल्चर

उत्तर प्रदेश विशेषकर लखनऊ तथा आस—पास के जिलों के लिए लखनऊ विश्वविद्यालय के पास ही स्वच्छ वातावरण में स्थित यौगिक केन्द्र एक वरदान सिद्ध हुआ है। गोमती के उत्तरी तट पर कार्यरत यौगिक केन्द्र को देखकर प्राचीन काल के ऋषि आश्रम की याद आ जाती है।

यौगिक केन्द्र का दैनिक कार्य—क्रम प्रात: ६ बजे से ही प्रारम्भ हो जाता है और तीन घन्टे बाद ९ बजे तक चलता है। किसी भी दिन यौगिक केन्द्र के प्राँगण में विभिन्न वय के लोग यौगिक क्रियायें करते देखे जा सकते हैं। इसकी सफलता में गोमती तट की स्वच्छ वायु का भी बहुत योगदान है।

यौगिक केन्द्र जिसका वास्तविक नाम इंस्टीट्यूट आफ यौगिक थेरेपी है सन् १९६० में नि: स्वार्थ जनसेवा के उद्देश्य से एक छोटी सी संस्था के रूप में आरम्भ हुआ था। यौगिक क्रियाओं के ज्ञान को पुनरुज्जीवित करके युवकों को योगाभ्यास की ओर रुचि उत्पन्न करने तथा निर श रो—गियों का उपचार करने का महत्व-पूर्ण कार्य करके कार्यकलापों के प्रमुख अंग रहे हैं।

योगाभ्यास प्राचीन काल में मनुष्य की दिन चर्या का अभिन्न अंग था। कालान्तर में उत्तरोत्तर इसका ह्रास हो गया और योगाभ्यास को केवल रोगों के उपचार में प्राकृतिक चिकित्सा के साथ-—साथ अपनाया जाता रहा है। भारत की स्वतंत्रता के पश्चात् योग के महत्व पर समय—समय पर प्रकाश डाला जाता रहा है और यह कहा जाता रहा है कि हृदय रोग के उपचार के लिए योगाभ्यास किया जा सकता है। यद्यपि इस तथ्य की पुष्टि नहीं हो सकी है तथापि इसको नकारा नहीं गया है। इसी परिप्रेक्ष्य में लखनऊ का यौगिक केन्द्र फलता-फूलता रहा।

यह उल्लेखनीय है कि प्रदेश के निर्धन वर्ग के लोगों के अतिरिक्त प्रदेश के विशिष्ट व्यक्तियों ने जिनमें प्रदेश के मंत्रीगण, राज्यपाल, वरिष्ठ नेता एवं विधातक भी हैं, इस यौगिक केन्द्र में जाकर स्वास्थ्य लाभ उठाया है।

कई बेसिक स्कूलों के शिक्षकों एवं प्रान्तीय रक्षक दल, विकास खण्ड के संयोजकों को यौगिक क्रियाओं का प्रशिक्षण देने का श्रेय भी इसी संस्था को है। प्रशिक्षण कार्य को और भी व्यापक बनाया गया है ताकि प्रतिष्ठा को स्थायी रूप से स्थापित किया जा सके। इससे गांव की निर्धन जनता को बीमारियों का उपचार कराने के नगरों को भागने की आवश्यकता नहीं होगी।

o

पृष्ठ १८ का शेष

की प्रेरणा देने वाला क्या कोई बिन्दु स्तर नहीं उभर सकता जो उसे अपनी रूमाल भर जमीन ही सही परन्तु उसकी अपनी जमीन पर खड़े होने का साहस दे सके, अथवा किशोरी वसंती का श्रम क्या प्रसन्न श्रम की पवित्रता से ओत प्रोत होकर एक धन्य श्रम नहीं बन सकता।

कहानी को पढ़कर वसंती के प्रति दया से आँखे तो छल छला आ सकती हैं परन्तु उसकी श्रम साधना एवम् जीवन की चुनौतियों से लड़ने के अदम्य अभियान के प्रति कोई श्रद्धा सुमन अर्पित करने की स्थिति में शायद ही हो।

प्रयास एवं प्रारम्भ बहुत ही अच्छा है सफलताओं के लिए बधाई।

डा० हरिहर गोस्वामी

विश्वास

१० नवम्बर

"माँगने वाले के हाथ फैले होते हैं और देने वाले के गर्वोन्नत, कुछ उठे हुये से जबकि सच यह है कि कोई किसी को नहीं देता" मेरे पीछे शायद सबसे पीछे की सीट से किसी पढ़े-लिखे प्रौढ़ की आवाज आ रही है। कुछ भी अजूबा नहीं है, बातें, वही कही जा रही हैं जो अर्से से कहीं जाती रही हैं फिर भी मैं पीछे मुड़ कर देखता हूँ। एक चुटकी तमाखू के लिये फैले हुये हाथ और वही एक चुटकी देने के लिए उठे हुये हाथ। दो हथेलियों के अन्तराल में एक पूरी पीढ़ी की दास्तान कहीं गुम हो गई है। उसे ढूढ़ने की जरुरत शायद किसी को नही है। तमाखू की फंकी लगाकर वह जैसे कुछ राहत महसूस करता है और दूसरे साथी से कहता है "फीस भरने के लिए तीन सौ रुपये मांगे थे लड़के ने। किसी तरह जुटा कर दिया। खड़ के भाव खाँड़ बेचे"। वह कुछ और कह रहा है, लेकिन मैं सुन नहीं पाता। मेरे ठीक पीछे की सीट बैठा अंग्रेजी पोशाक से सज्जित युवक ट्रान्जिस्टर बजा देता है। फुल वाल्यूम में एक आवाज गूंजने लगती है "डंडा पकड़ के रोई रे नादान बालमा" मेरे आस पास बैठे युवक मुस्कुराने लगते हैं और मैं पीछे मुड़कर उस प्रौढ़ व्यक्ति की आँखों में कुछ ढूढने लगता हूँ। शायद नई पीढ़ी का भविष्य अथवा उसका अपना ही अतीत। वह मेरी ओर देख रहा है, लेकिन मैं अधिक देर तक उसकी ओर देखने का साहस नहीं जुटा पाता। नजर और नजारे में उतना ही फर्क है जितना माँगने और देने में। जल्दी और आराम से कहीं पहुंचने की ललक को खाक में मिलाती हुई बस एक तेज झटके के साथ रुकती है। यह बरनावा है। मेरठ जिले के सरधना तहसील का एक गाँव। हिन्डन नदी पीछे छूट गई है। एक पौराणिक नदी को पता नहीं इतना बेतुका नाम किसने दिया। दो सौ वर्ष की अंग्रेजी गुलामी में अपनी ही संस्कृति इतनी अनौपचारिक हो गई। मेरे सामने लाखा मंडप है। महाभारत काल में दुर्योधन ने छल पूर्वक पांडवों को जलाने के लिए यह मंडप बनवाया था। भग्नाव-शेषों पर ऐतिहासिकता की एक गहरी छाप। लहलहाती दूबों की हरीतिमा के बीच ये अवशेष लगता है जैसे तोते की मौत पर कबूतर आँसू बहा रहा हो। मिर्जागालिब होते तो कुछ जानदार शेर कह डालते। समय के हाँथों में कितना है बेचारा आदमी। बस की खिड़की से मैं इतिहास का एक पढ़ा हुआ पृष्ठ दुहराना चाहता हूं, लेकिन वह नहीं हो पाता।..........बड़ौत। खाँड़ की एक बड़ी मंडी के पास से गुजरती ही है बस। सबसे पीछे की सीट अब खाली है। दोनों प्रौढ़ सज्जन कहीं बीच में उतर गये। ट्रांजिस्टर वाला युवक भी कहीं बीच में ही उतर गया और मैं सोचता हूँ कौन किसको देता है और........और........मुझे हँसी आ जाती है।

बीती रात के बुझे हुये दीये अभी भी मुँडेरों पर, ओसारे में रखे हुये हैं। बुझने से पहले कुछ जला था, क्या और किसलिए? इस सबका मूल्यांङ्कन करना कितना अजीब सा लगता है। आज भाई के माथे पर बहन मंगल तिलक लगायेगी। भाई और बहन, बहन और भाई। सड़क, चौराहे, दुकान, बस रेल सभी जगह हर आदमी भाई है हर लड़की, हर औरत

लेखक
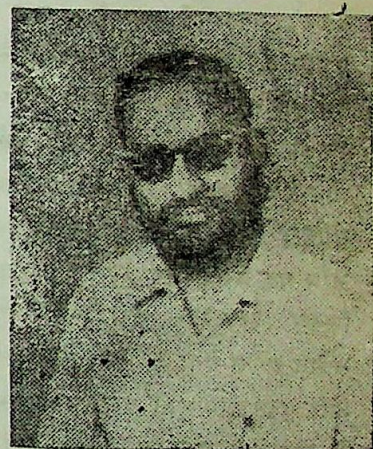
बहन है, फिर भी लूट, मार, अपहरण है और भय का एक भयंकर वातावरण। शब्द जो वेदों की मान्यता के अनुसार ब्रह्म हैं आज वे शब्द कितने बाजारु हो गये है, कितने ओछे। विशेषण अपना महत्व खो चुके हैं। सम्बोधन की नीलामी के इस माहौल में व्याकरण की महत्वहीनता से ज्यादा व्यक्ति के पराभव की चिन्ता होती है। शिव ने डमरु बजाकर हमें शब्द दिये। स्वर और व्यंजन दिये यह सोंचकर कि इनके सयोग से गायत्री का सृजन

(शेष पृष्ठ २२ पर)

पंतजी…………

काव्य संग्रह पंत जी के काव्य विकास में ऐतिहासिक महत्व रखते हैं। पंतजी अब तक ४० वें वर्ष में प्रवेश कर चुके थे और एक नयी तरह की चिंतन का प्रवेश उनकी रचनाओं में होने लगा था। प्रयाग में लम्बी बीमारी के बाद उन्होंने अरविन्द दर्शन से प्रभाव ग्रहण किया और उनकी काव्य रचनायें एक नये दर्शन के क्षेत्र में प्रवेश कर गयीं। 'लोकायतन' इसका मूर्त रूप है। बाद में प्रकाशित 'स्वर्ण किरण', स्वर्णधूलि' तथा 'अतिमा', काव्य संग्रह में भी उनकी इसी दार्शनिकता के दर्शन होते हैं। 'युगपथ' 'उतरा' उनके अन्य संग्रह हैं लेकिन उनमें दर्शन की उसी भूमि पर वे विचरण करते हैं। 'रजत शिखर' श्रव्य काव्य की दिशा में एक नवीन संकेत देता है, वैसे ही 'कला और बूढ़ा चांद नयी कविता आंदोलन के दौर में उनकी एक सर्वथा नवीन रचना है।

पंत जी का साहित्यिक जीवन क्रियाशील और अपेक्षाकृत लम्बा रहा है। उन्होंने सभाल-संभाल कर अपनी जीवन यात्रा पूरी की है पर निरंतर प्रत्यक्ष से कहीं अधिक अंप्रत्यक्ष पर विश्वास करते रहे हैं। ज्योतिष पर उनकी आस्था के मूल में संभवत: उनका यही रहस्य ज्ञान है।

अपनी रचनाओं के लिए पंतजी को निरंतर सम्मान मिला। वे सच्चे अर्थों में हिन्दी के दुलारे कवि थे। अकादमी पुरस्कार हो अथवा ज्ञानपीठ पुरस्कार सभी कुछ उन्हें सहज ही प्राप्त हो गये। इसके अतिरिक्त भी देश-विदेश के कितने ही सम्मान उन्हें प्राप्त हुये। उनका प्रारंभिक जीवन कितना ही अनिश्चय से भरा हुआ था, जीवन के अंत में वे उतने ही निश्चित और विश्वासी साहित्यकार के रूप में प्रतिष्ठित हुए। निराला से विपरीत उनकी अपनी जीवन पद्धति थी। इसमें उनके मित्र सनेही समान रूप से संयुक्त थे। १९०० में जन्मे पंत जी ने अपेक्षाकृत लम्बी उम्र पायी लेकिन एक दिन के लिए भी वे बैठे नहीं निरंतर रचनाशील, विचारशील जीवन की चरम परिणति आने वाले लोगों के लिए नि:संदेह प्रेरणा और विश्वासका प्रतीक बन कर रहेगी।

०

डायरी के पृष्ठ…शेष

किया जायेगा। वह तो किया गया, और उसकी प्रतिष्ठा भी है किन्तु नया सृजन गायत्री के बजाय गालीका है। आज के बदलते जीवन मूल्यों में क्या एक अहम हिस्सा इसका नहीं है? इन्हीं उपलब्धियों पर गर्व किया जायेगा……उफ……कैसी कैसी बातें सुबह……सुबह मनको झकझोरने लगी है। अकेले मेरे सोंचने से क्या होता है? और क्या होता है, इस धारणा के साथ व्यक्ति दहाई से सैकड़ा बनने के प्रयत्न में इकाई बन कर रह गया है। अनुभूतियों में बसा हुआ आदमी का एकाकीपन उसे तोड़ देने के लिए काफी है।

०

युवा रश्मि आपकी अपनी पत्रिका है। अपनी भावनाओं के अनुरूप हर अपेक्षित परिवर्तन अब तक होते रहे हैं। और अधिक परिवर्तन के सन्दर्भ में हमें आपके बहुमूल्य सुझावों की प्रतीक्षा है।

तथा

यदि आप युवा रश्मि को अपनी भावनाओं के अनुरूप पाते हैं, तो शीघ्रता से वार्षिक सदस्यता शुल्क भेजें।

०

रोग निवारण एवं उत्तम स्वास्थ्य के लिए

आयुर्वेदिक एवं यूनानी चिकित्सा प्रणाली अपनायें—

१—प्रदेश में १०६३ राजकीय आयुर्वेदिक एवं यूनानी चिकित्सालय स्थापित हैं जिनमें से अधिकांश चिकित्सालय ग्रामीण क्षेत्रों में अवस्थित हैं।

२—शासन द्वारा निजी आयुर्वेदिक एवं यूनानी चिकित्सालयों तथा चिकित्सकों को भी निःशुल्क चिकित्सा सुविधा प्रदान करने केलिए अनुदान दिया जाता है?

३—राजकीय आयुर्वेदिक एवं यूनानी औषधि निर्माणशाला उ० प्र० लखनऊ एवं राजकीय ऋषिकुल आयुर्वेदिक कालेज फार्मेसी हरिद्वार द्वारा प्रमाणित आयुर्वेदिक एवं यूनानी औषधियों का निर्माण किया जाता है।

आयुर्वेद एवं यूनानी शिक्षा के लिये

४—आयुर्वेद और यूनानी शिक्षा प्रदान करने के लिये प्रदेश में विभिन्न विश्वविद्यालयों से सम्बन्ध नौ आयुर्वेदिक एवं तीन यूनानी कालेज कार्यरत हैं।

५—उपचारिकाओं एवं आयुर्वेदिक टेक्नीशियन के प्रशिक्षण की भी व्यवस्था राजकीय आयुर्वेदिक महाविद्यालय लखनऊ में की गई है।

६—आयुर्वेदिक एवं तिब्बी अकादमी, उ० प्र० द्वारा आयुर्वेदिक/यूनानी का साहित्य सृजन एवं प्रकाशन भी किया जा रहा है।

७—केन्द्रीय सरकार की सहायता से आयुर्वेद/यूनानी स्नातकोत्तर प्रशिक्षण एवं अनुसंधान कार्य भी राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय लखनऊ में हो रहा है।

८—आयुर्वेदिक एवं यूनानी औषधियों के विक्रय हेतु निर्माणार्थ उन पर ड्रग एक्ट लागू कर दिया गया है उक्त एक्ट के अधीन निदेशक आयुर्वेद को ड्रग कन्ट्रोलर नियुक्त किया गया है। प्रत्येक औषधि निर्माता को एतदर्थ ३१-३-७८ लाइसेन्स लेना अनिवार्य है।

९—ड्रग ऐक्ट लागू हो जाने के कारण अब कोई भी औषधि विक्रेता किसी ऐसी आयुर्वेदिक/यूनानी फार्मेसी द्वारा निर्मित औषधि, जिसने एतदर्थ लाइसेन्स प्राप्त नहीं किया है, नहीं बेच सकता है। अन्यथा उक्त ऐक्ट के अन्तर्गत वह औषधि विक्रेता दण्ड का भागी होगा।

आयुर्वेदिक एवं यूनानी सेवा निदेशालय, उत्तर प्रदेश द्वारा प्रसारित,

यू० पी० एग्रो

- एग्रो के उन्नत कृषि यन्त्र जैसे विभिन्न अश्व शक्ति के पावर थ्रेसर, अलाइड थ्रेसर, कल्टीवेटर, पावरटिलर विदेशी डिस्क वाले डिस्क हैरो और डिस्क प्लाऊ सीड-कम-फर्टिलाइजर ड्रिल (शक्ति चालित) स्टोकल विन ३ से ५ टन भारकी क्षमता वाली टालियाँ आदि कृषि जगत में अपने गुण और मजबूती के लिए प्रसिद्ध है।

'धवल क्रांति को सफल बनाने के लिए एग्रो के संतुलित पशु आहार तथा कुक्कुट आहार निर्मित किये जाते हैं। यह आहार पौष्टिक तथा उच्चकोटि के हैं। एग्रो उर्वरक वितरण तथा किसानों को राष्ट्रीकृत बैंकों से फसल ऋण दिलाने का एक प्रमुख केन्द्र हैं।

- एग्रो द्वारा हाई कार्बन स्टील से निर्मित जीटर ट्रैक्टरों के स्पेयर पार्टस आयातित स्पेयर पार्टस के समान हैं।
- एग्रो द्वारा जीटर रुमानियन तथा टी-२५ ट्रैक्टरों के स्पेयर पार्ट्स भी किसानों को उनकी वास्तविक आवश्यकतानुसार बेंचे जाते हैं।
- एग्रो द्वारा पुराने ट्रैक्टरों का नवीनीकरण कार्य भी होता है।
- एग्रो द्वारा किसानों के खेत जोतने तथा अनाज की मड़ाई की सुविधाएं भी व्यापक स्तर पर उपलब्ध हैं।
- कम्बाइन हारवेस्टर तथा रीपर वाइन्डर जैसे कृषि यन्त्रों से फसल कटाई की व्यवस्था भी एग्रो द्वारा की जाती हैं।
- ताजे फलों और सब्जियों से बने हुए बोतल-बन्द, डिब्बा बन्द खाद्य पदार्थ जैसे जैम, जेली, मुरब्बा, स्क्वाश, सिरप, टैमैटो केचप व विशुद्ध मसाले घर-घर में पसन्द किये जाते हैं।
- आलू, सेव, व फल रसों के निर्यात का कार्य भी एग्रो द्वारा किया जाता है।
- एग्रो द्वारा संचालित 'स्वयं जीविकोपार्जन योजना' बेकार कृषि तथा इंजीनियरिंग स्नातको के लिए उन्नति का अवसर है। एग्रो प्रशिक्षण तथा आर्थिक सहायता प्रदान कर उन्हें एग्रो सेवा केन्द्रों की स्थापना तथा स्वावलम्बी होने हेतु प्रोत्साहित करता है।
- एग्रो फलों की बिक्री के लिए लकड़ी के बक्सों का भी निर्माण करता है।

विस्तृत जानकारी हेतु सम्पर्क करें :—
सचिव
यू० पी० स्टेट इण्डस्ट्रियल कारपोरेशन लि०
२२, विधान सभा मार्ग, लखनऊ

नगर की प्रबुद्ध एवं गतिशील संस्था "मनीषा" के तत्वावधान में दिनांक १४-१२-७७ को सायंकाल ६-३० बजे से एस० आर० के० स्नातकोत्तर कालेज के विशाल कक्ष में "बदलते युग–सन्दर्भ और साहित्यकार की प्रतिवद्धता" विषय पर एक विचार गोष्ठी का आयोजन हुआ। अध्यक्षता कालेज के अंग्रेजी के विभागाध्यक्ष श्री पी० सी० जैन ने किया। विषय परिवर्तन किया मनीषा-अध्यक्ष डा० मक्खनलाल पाराशर ने। उन्होंने कहा कि इस प्रकार के बौद्धिक कार्यक्रम नगर या साहित्य की जीवन्त चेतना का सजग प्रमाण है।

विषय पर बोलते हुये श्री नरेन्द्र प्रकाश जैन ने साहित्यकारों को सरकारी सुविधाजीवी, अर्ध सरकारी नपुंसक और गैर सरकारी वास्तविक साहित्यकार कष्टों में जीता हुआ तीन वर्गों में विभाजित किया। उनके अनुसार साहित्यकार की प्रतिवद्धता प्रथमतः पाठक और फिर नैतिक जीवन मूल्यों के प्रति होनी चाहिये। डा. राणा प्रताप गुप्त ने अपने वक्तव्य में साहित्यकार के दो वर्ग स्वीकारे, स्वतः स्फूर्त सृजन और नियोजनों-परान्त सृजन करने वाले। उनके अनुसार साहित्यकार की प्रतिवद्धता परम्परा और व्यक्तिगत प्रतिभा के प्रति समान रूप से होनी चाहिये। साहित्य को उन्होंने मानवहित एवं मानवकृत रचना माना। पं. सियाराम शर्मा और संस्कृत विभागाध्यक्ष श्री विश्वनाथ शर्मा ने धर्म और नैतिक आस्थाओं से प्रतिवद्धता स्वीकारी। प्रो. राम सनेही लाला शर्मा ने साहित्य का उद्देश्य मानव के द्वारा शाश्वत आनन्द की खोज की जिज्ञासा का परिणाम बताया। उन्होंने माना कि साहित्यकार की जीवन्त चेतना युग निरपेक्ष नही हो सकती, वर्तमान संदर्भ से जुड़कर परम्परा की भित्ति पर समस्याओं का अंकन ही सही साहित्य सृजन है। उनके अनुसार साहित्यकार की धर्म और आत्मा के व्यापक प्रसार और नैतिक जीवन मूल्यों से होनी चाहिये।

अन्त में अध्यक्ष महोदय ने गोष्ठी का समापन करते हुए साहित्यकार की प्रतिवद्धता को आस्थाओं से जोड़ा और साहित्य को उद्देश्य मूलक बताया। गोष्ठी का संचालन मनीषा के सचिव प्रो. रामसनेही लाल शर्मा ने किया। डा. पाराशर ने श्रोताओं और विद्वानों को धन्यवाद दिया।

—रामसनेही लाल शर्मा

इकतीस दिसम्बर

—कौशल विराग

अस्तंगत सूर्य की तरह
हम प्रतिदिन डूबते गए !

किसी दुश्चरिता से अश्रु
आँखों से इस तरह गिरे,
जैसे बारूद से जला
वायुयान सिन्धु में मरे।

शार्कों से घिरे हुए तन
सपनों से जूझते गए !

शब्दों का पका हुआ फल
कुतर गई अर्थ गिलहरी,
भाव—व्यथा शाम सी थकी
माँग रही व्यर्थ दुपहरी;

गूंगे नभ में घायल गीत
लय पक्षी ढूंढ़ते गए !

हर भाषण की विवेचना
सुन-सुनकर कान पक गए
वादों से कटी टाँग को
'पांच वर्ष पुनः ढक गए;

बैसाखी पर टंगे टंगे
जीवन पल ऊबते गए !

लेखकों से–

◦ युवा रश्मि के लिए आप किसी भी विधा में रचना भेज सकते हैं, लेकिन ध्यान रहे कि आपकी रचना प्रगतिशील विचारों से ओत-प्रोत हो।

◦ आज के उथल-पुथल भरे परिवेश में कोई भी राजनीति से अलग नहीं है, आपकी रचनाओं में राजनैतिक गतिविधियों की पैनी समीक्षा हमारा ध्यान आकृष्ट करेगी।

◦ कोई लिखता इसलिए है कि लिख सकता है, लिखना चाहता है, और बिना लिखे रह नहीं सकता, जब तीसरा कारण प्रबल हो तभी लिखिए।

◦ कोई भी रचना कार कहानी या कविता बनाने की मशीन नहीं होता। परिमाण की अपेक्षा गुण की ओर ध्यान देने पर आपकी रचना अवश्य ही मेरे लिए उपयोग की हो पायेगी।

दिसम्बर, १९७७

रजिस्ट्रेशन नं० आर० एन० २६६७४/७४
पोस्टल रजिस्ट्रेशन एल० डब्लू/एन०पी १४७

- बिपत्तियां कहीं भी, कभी भी आ सकती हैं।
- वे बिपदा से घिरे हैं।
- आप क्या कर रहे हैं?
- चुप न बैठे रहिये

"युवा रश्मि
तूफान पीड़ित सहायता कोष में
अधिकाधिक धन दीजिए।"

...देर न कीजिये, भरपूर सहायता कीजिये

मुद्रक प्रकाशक अवध किशोर पाठक द्वारा विश्वास प्रेस अमीनाबाद के लिए उत्तर प्रदेश सहकारी मुद्रणालय' ८५, तिलपुरवा हुसैनगंज लखनऊ में मुद्रित एवं डी-२/२ पेपर मिल कालोनी लखनऊ-२२६००६ से प्रकाशित